सरल भौतिकी

अ० किताईगारोट्स्की

इलेक्ट्रॉन

"मीर"
प्रकाशन-गृह
मास्को
सोवियत संघ

А. И. Китайгородский

ФИЗИКА ДЛЯ ВСЕХ

«ЭЛЕКТРОНЫ»

Издательство «Наука»
Москва

सरल भौतिकी

अ० किताईगारोद्स्की

इलेक्ट्रॉन

"मीर"
प्रकाशन-गृह
मास्को
सोवियत संघ

टिप्पणी

सन् १९७९ में "मीर" प्रकाशन-गृह ने हिन्दी भाषा में ल० लन्दाऊ और अ० किताईगारोदस्की द्वारा लिखित पुस्तक "सरल भौतिकी" को प्रकाशित किया था। इस पुस्तक में 'गति' तथा 'ऊष्मा' अध्याय संकलित थे।

इस पुस्तक में उन परिघटनाओं का उल्लेख किया गया है जिनमें मुख्य स्थान पदार्थ संरचना का अगला चरण यानी परमाणुओं तथा अणुओं की वैद्युत संरचना का है। वैद्युत कणों की गति और पारस्परिक क्रियाओं के नियम तथा, सर्वप्रथम, इलेक्ट्रॉनों – विद्युत के क्वान्टमों – के नियम वैद्युत तकनीकी तथा रेडियो तकनीकी का आधार बनाते हैं, जिनके बिना आधुनिक संस्कृति की कल्पना असम्भव है।

इस पुस्तक के मुख्य विषय हैं: विद्युत धारा, चुम्बकीयता और वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्र।

На языке хинди

विषय-सूची

भूमिका

"सरल भौतिकी" माला की प्रथम पुस्तक में पाठक का परिचय स्थूल पदार्थों की गति के नियमों एवं आकर्षण बलों के साथ कराया गया था। दूसरी पुस्तक में पदार्थ की आण्विक संरचना तथा अणुओं की गति का अध्ययन किया गया था।

इस तीसरी पुस्तक का विषय है पदार्थ की वैद्युत संरचना, वैद्युत बल तथा वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्र।

अगली चौथी पुस्तक में फ़ोटॉनों, परमाण्वीय नाभिक की संरचना तथा नाभिकीय बलों के बारे में बताया जाएगा।

इन चारों पुस्तकों में भौतिकी की सभी मुख्य धारणाओं तथा नियमों के बारे में सामग्री संकलित है। इन में प्रस्तुत किये गए निश्चित नियमों का चयन इस प्रकार किया गया है कि यथासम्भव अधिक स्पष्टता से भौतिकीय नियमों का वर्णन किया जा सके तथा परिघटनाओं के अध्ययन के लिए भौतिकी की विशिष्ट विधियां बताई जा सकें। यह भी बताया जाएगा कि भौतिकी का विकास किस-किस मार्ग पर चलकर हुआ है और अंत में, सामान्य शब्दों के प्रयोग द्वारा यह सिद्ध किया जा सकेगा कि भौतिकी समस्त प्रकृति विज्ञान तथा तकनीकी का आधार है।

एक ही पीढ़ी के सामने-सामने भौतिकी का स्वरूप परिवर्तित हो गया है। उस के कई अध्याय तो संपूर्ण क्षेत्रों में ही परिवर्तित हो गए जिनका काफ़ी गूढ़ व्यावहारिक महत्व है। प्रतीत होता है कि केवल भौतिकी के मुख्य नियमों के ज्ञान के आधार पर ही किसी व्यक्ति को शिक्षित नहीं कहा जा सकता है। "सरल भौतिकी" श्रेणी में ऐसी पुस्तकें होनी चाहिए जिनकी मदद से एकदम विभिन्न व्यवसायों के लोग भी भौतिकी के नियमों से अवगत हो सकते हैं तथा यह जान सकते हैं कि भौतिकी में गत पचास वर्षों में कौन-सी घटनाएं घटीं।

निस्संदेह, यह माला अध्यापकों तथा छात्रों के लिए अधिक रोचक साबित होगी जो भौतिकी में दिलचस्पी रखते हैं।

मैं यहां पाठक को पुनः स्मरण कराना चाहता हूं कि उसके हाथ में कोई पाठ्य-पुस्तक नहीं है अपितु एक सरल वैज्ञानिक पुस्तक है। पाठ्य-पुस्तक में किसी भी सामग्री की मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि उसे समझना कितना कठिन है। लेकिन सरल विज्ञानिक पुस्तक पर यह लागू नहीं होती, इसलिये उसके विभिन्न पृष्ठ समान आसानी से समझ नही आते। अन्य महत्वपूर्ण भिन्नता यह है कि हम अपनी पुस्तक में अनेक परम्परागत अध्यायों का रेखाचित्र द्वारा वर्णन कर सकते हैं तथा पुरानी सामग्री को संक्षिप्त करके नई सामग्री प्रस्तुत कर सकते हैं।

अब दो शब्द "इलेक्ट्रॉन" पुस्तक के बारे में। वैद्युत परिघटनाओं को व्यक्त करने में मदद देने वाली सरलतम धारणाओं को समझाने की आवश्यकता को मैंने अपनी ही प्रकार से प्रयोग किया है यानी भौतिकी की परिघटनात्मक विधि को प्रस्तुत करने की चेष्टा की है।

छः अध्यायों में से दो अध्याय व्यावहारिक भौतिकी को समर्पित हैं। वैद्युत तकनीकी का वर्णन संक्षेप में किया गया है। इस विषय के विस्तृत वर्णन के लिए आरेख तथा चित्र आवश्यक हैं। इसीलिए हमने केवल वैद्युत तकनीकी के मुख्य नियमों तथा महत्वपूर्ण तथ्यों का ही वर्णन किया है जिनसे प्रत्येक व्यक्ति को परिचित होना चाहिए।

यही बात रेडियो से सम्बंधित अध्याय की है। पुस्तक का छोटा आकार होने के कारण इस प्रश्न के इतिहास का तथा रेडियो-तकनीकी के नियमों का सरसरी तौर पर अध्ययन ही सम्भव था।

अ० ई० किताईगारोदस्की

अध्याय ९

विद्युत्

विद्युत धारा

विद्युत के सिद्धांत के उदाहरण के आधार पर भौतिकी में दिलचस्पी लेनेवाले पाठकों को प्रकृति के अध्ययन की तथाकथित फ़िनामिनालाजिकल (परिघटनात्मक) विधि से अवगत कराया जा सकता है तथा करवाना भी चाहिये। "फिनामिना" शब्द से अभिप्राय है परिघटना। वह विधि, जिसकी हम चर्चा कर रहे हैं, निम्न प्रकार है। शोधकर्ता "वस्तुओं की प्रकृति" का अध्ययन नहीं करता। वह शब्दों का प्रयोग तथ्यों को केवल व्यक्त करने के लिये ही करता है। उसका ध्येय परिघटना को "समझना" नहीं, अपितु प्रस्तुत करना है। उसके द्वारा प्रयुक्त लगभग सभी पारिभाषिक शब्द उसके लिये केवल उसी स्थिति में अर्थ रखते हैं, जब किन्हीं धारणाओं को संख्या द्वारा आंकने की विधि की चर्चा हो रही हो।

शब्दों द्वारा तथ्यों के वर्णन को केवल आसान करने के उद्देश्य से ही वह कुछ सहायक शब्दों का प्रयोग करता है। लेकिन ये शब्द एकदम अप्रधान हैं, इनके स्थान पर अन्य नामों या "कुछ" या "कोई" को प्रयुक्त किया जा सकता है।

प्रकृति-विज्ञान के अध्ययन में परिघटनात्मक विधि का बहुत महत्व है। और विद्युत परिघटनाएं एक ऐसा सटीक उदाहरण है जिसकी मदद से पाठक को इस विधि का सार समझ में आ जाएगा।

इस अध्याय के अंत में मैं संक्षेप में घटनाओं के क्रम के बारे में बतलाऊंगा, और अब विद्युत-परिघटनाओं के परिघटनात्मक सिद्धांत का एक आदर्श आरेख प्रस्तुत करूंगा।

आइये, चार्ल्स कूलॉन (१७३६–१८०६), अलेक्जेण्डर वोल्टा (१७४५–१८२७), जार्ज ओम (१७८९–१८५४), आन्द्रे अम्पेयर (१७७५–१८३६), हन्स अरस्टेड (१७७७–१८५१), एमील लेन्त्स (१८०४–१८६५) तथा अन्य कई अद्वितीय वैज्ञानिकों को इकट्ठा करके एक काल्पनिक व्यक्ति का रूप दे दें। मान लें कि यह शोधकर्ता आधुनिक वैज्ञानिक विचारों से परिचित है और आधुनिक पारिभाषिक शब्दावली को प्रयुक्त करता है। आइये, अब हम इस शोधकर्त्ता की ओर से वर्णन आरम्भ करें।

वह विद्युत के परिघटनात्मक सिद्धांत पर कार्य संचायक सेल के ध्यानपूर्वक अध्ययन से आरम्भ करता है। सर्वप्रथम, वह देखता है कि संचायक सेल के दो "ध्रुव" हैं। जैसे ही वह उन्हें हाथ से छूता है उसे स्पष्ट हो जाता है कि उसे ऐसा नहीं करना चाहिए था (विद्युत-आघात काफ़ी अप्रिय लगा)। इस पहले प्रयोग के बाद उसे ख्याल आया कि उसके शरीर में से किसी चीज़ का प्रवाह हुआ था: इस "किसी चीज़" का नाम विद्युत रख दें।

अब शोधकर्ता सावधानी से भिन्न-भिन्न तारों, छड़ों आदि द्वारा ध्रुवों को जोड़ता है। उसे इस तथ्य का विश्वास हो जाता है कि कुछ वस्तुएं ध्रुवों के साथ जोड़ने से अधिक गर्म होती हैं, तथा कुछ कम गर्म होती हैं अथवा किन्हीं परिस्थितियों में वे बिलकुल गर्म नहीं होती हैं।

किये गये प्रयोग का वर्णन करने के लिये शोधकर्ता उपयुक्त शब्दों का चयन करता है तथा निम्न प्रकार वर्णन करता है। जब मैं ध्रुवों को तार द्वारा जोड़ता हूं तो उसमें से विद्युत का प्रवाह होता है। इस परिघटना का नाम विद्युत-धारा रख देता हूं। प्रयोग ने यह सिद्ध किया कि विभिन्न पदार्थ विभिन्न प्रकार गर्म होते हैं। वे पदार्थ जो कम गर्म होते हैं, शायद उनमें बिजली का प्रवाह अच्छी तरह नहीं होता या वे प्रवाह होने वाली धारा का काफ़ी प्रतिरोध करते हैं। इन्हें पृथक्कारक या परावैद्युत कहा जा सकता है।

अब शोधकर्ता द्रवों पर कार्य आरम्भ करता है। उसे स्पष्ट होता है कि यहां भी भिन्न-भिन्न पदार्थ भिन्न-भिन्न प्रकार से व्यवहार करते हैं। अंत में, वह एक दिलचस्प खोज करता है: जब वह तूतिया

(कापर सल्फेट) के घोले को द्रव के रूप में प्रयोग कर उसमें कार्बन इलैक्ट्रोड डालता है (अर्थात् वे वस्तुएं जो ध्रुवों के साथ जुड़ी हों), तो वह देखता है कि एक कार्बन पर ताम्र की लाल-सी परत चढ़ गई है।

अब शोधकर्ता को दृढ़ विश्वास हो जाता है कि वह जिस परिघटना का अध्ययन कर रहा है, वह किसी न किसी द्रव के प्रवाह से सम्बन्धित है। विदित है कि यहां धारा की दिशा की चर्चा है। मान लें कि वह इलैक्ट्रोड जिस पर ताम्र की परत चढ़ गई थी, ऋणात्मक है, तथा दूसरा इलैक्ट्रोड धनात्मक है। चूंकि यह काफ़ी लम्बे नाम हैं कि "ऋणात्मक इलैक्ट्रोड" या "धनात्मक इलैक्ट्रोड", तो इनके छोटे नाम रख लें – कैथोड और ऐनोड। धारा का प्रवाह धन से ऋण की दिशा में है अर्थात् ऐनोड से कैथोड की ओर।

लेकिन इस खोज का महत्व यहीं तक सीमित नहीं है। यह सिद्ध होता है कि प्रत्येक सेकंड में कैथोड पर ताम्र का एक ही द्रव्यमान इकट्ठा होता है। प्रतीत होता है कि ताम्र के परमाणु अपने ऊपर विद्युत-द्रव ले जाते हैं। इसलिये शोधकर्ता दो नये पारिभाषिक शब्दों को प्रयुक्त करता है। सर्वप्रथम वह अनुमान करता है कि ताम्र का द्रव्यमान M तार में से प्रवाह होने वाली विद्युत q के समानुपातिक है, अर्थात् वह निम्न समीकरण प्रस्तुत करता है :

$$q = kM$$

यहां k – समानुपातिक गुणांक है। और, फिर वह विद्युत की उस मात्रा को जो तार में से समय की निश्चित इकाई में प्रवाह करती है, धारा के बल का नाम देता है :

$$I = q/\tau$$

अब शोधकर्ता का अनुभव काफ़ी बढ़ गया है। अब वह धारा को दो परिमाणों में माप सकता है : ऊष्मा की मात्रा, जो समय की इकाई में तार के निश्चित भाग द्वारा उत्सर्जित होती है, तथा धारा का बल।

अब उसके समक्ष एक और सम्भावना उत्पन्न होती है : भिन्न-भिन्न स्रोतों द्वारा पैदा होने वाली धारा की तुलना करना। धारा का

बल I मापा जाता है, ऊर्जा Q भी, जो ऊष्मा के रूप में तार के एक ही भाग द्वारा उत्सर्जित होती है, मापी जाती है। भिन्न-भिन्न चालकों के साथ यह प्रयोग दोहराने पर शोधकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि ऊष्मा की मात्रा व तार में से प्रवाहित विद्युत की मात्रा का अनुपात धारा के भिन्न-भिन्न स्रोतों के लिए भिन्न है। अब इस अनुपात के लिये उपयुक्त नाम ढूंढ़ना शेष है। "वोल्टता" नाम रखा गया, वोल्टता जितनी अधिक होगी, उतनी ही अधिक ऊष्मा होगी।

इस विचार को इस शब्द के चयन का कारण भी माना जा सकता है। सामान से लदी गाड़ी को खींचने वाला व्यक्ति जितनी अधिक शक्ति जुटाता है, उतनी ही अधिक गर्मी वह महसूस करता है। अतः, वोल्टता को U द्वारा निर्दिष्ट करने पर, जैसा कि नीचे किया गया है, हम प्राप्त करते हैं:

$$U = Q/q \text{ या } Q = UI\tau$$

इस प्रकार, प्राथमिक कार्य संपूर्ण हुआ। दो परिघटनाओं की खोज हुई। धारा किन्हीं द्रवों में से प्रवाहित होने पर पदार्थ को पृथक करती है, तथा धारा ऊष्मा उत्सर्जित करती है। ऊष्मा को मापना भी हम जानते हैं। विद्युत की मात्रा को मापने की विधि भी दी जा चुकी है, अर्थात् **इस धारणा की परिभाषा** दी जा चुकी है। इसके साथ-साथ **व्युत्पन्न** धारणाओं–धारा के बल तथा वोल्टता–की भी परिभाषा दी जा चुकी हैं।

अनेक सरल सूत्र भी लिखे गये हैं। लेकिन यह ध्यान रहे कि इन्हें अभी प्रकृति का नियम नहीं कहा जा सकता। विशेषतः, शोधकर्ता ने Q/q अनुपात को वोल्टता का **नाम तो दे दिया** लेकिन यह **ज्ञात नहीं किया** कि Q/q वोल्टता के बराबर है।

और अब वह प्रकृति के नियम की खोज आरम्भ करता है। एक ही चालक के लिये स्वतंत्र रूप से दो मात्राएं मापी जा सकती हैं: धारा का बल और ऊष्मा, अथवा धारा का बल और वोल्टता (दोनों नियमानुसार एक ही हैं)।

धारा-बल की वोल्टता पर निर्भरता से हम एक महत्वपूर्ण नियम की खोज करते हैं, अधिकतर चालक इस नियम का पालन करते हैं:

$$U = IR$$

R मात्रा को प्रतिरोध का नाम दिया जा सकता है जो प्रारम्भिक गुणात्मक अवलोकन के एकदम अनुकूल है। पाठक इसे भली प्रकार जानते हैं: यह ओम का नियम है। इससे पहले के सूत्र में ओम नियम से धारा-बल का मान रखने पर हम प्राप्त करते हैं:

$$Q = \frac{U^2}{R} \tau$$

आशा है कि आप उलझ नहीं जाएंगे यदि चालक द्वारा ऊष्मा के रूप में उत्सर्जित ऊर्जा के लिये निम्न सूत्र लिखें: $Q = I^2R\tau$

प्रथम सूत्र से स्पष्ट है कि ऊष्मा की मात्रा प्रतिरोध के व्युत्क्रमानुपात है। यह कहते समय इतना और जोड़ देना चाहिये कि: वोल्टता के समान रहने पर। इसी स्थिति की हम बात कर रहे थे जब हमने सर्वप्रथम "प्रतिरोध" शब्द को प्रयुक्त किया था। और दूसरा सूत्र, जो सिद्ध करता है कि ऊष्मा प्रतिरोध के अनुक्रमानुपात में है, तब सही होगा जब हम यह कहेंगे कि "स्थिर धारा-बल के साथ"।

ऊपर लिखे गये सूत्रों से पाठक को वह नियम याद आ जायेगा जो जूल तथा लेन्त्स नियम के नाम से प्रसिद्ध हैं।

यह स्पष्ट हो जाने के बाद कि वोल्टता तथा धारा का बल आनुपातिक है और इस तरह चालक का प्रतिरोध ज्ञात किया जा सकता है, शोधकर्ता के समक्ष यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि इस महत्वपूर्ण मात्रा का चालक के रूप, आकार तथा पदार्थ से क्या सम्बन्ध है।

प्रयोग निम्न खोज पर ले आते हैं। प्रतीत होता है कि

$$R = \rho \frac{l}{S}$$

यहां l — चालक की लम्बाई, और S — अनुप्रस्थ काट है। यह सरलतम सूत्र केवल उस स्थिति में सही है जब समान काट वाले रेखिल चालक का अवलोकन कर रहे हों। यदि अधिक जटिल गणितीय

कार्य में रुचि है तो किसी भी आकार वाले चालक के प्रतिरोध का सूत्र भी लिखा जा सकता है और अब यह देखें कि ρ–गुणांक क्या है? यह उस पदार्थ के लिये लाक्षणिक है जिस से चालक बना है। इस मात्रा का मान, जो विशिष्ट प्रतिरोध कहलाता है, बहुत ही बड़ी सीमा में घटता-बढ़ता है। ρ मान के आधार पर पदार्थ परस्पर करोड़ों गुना भिन्न हो सकते हैं।

आइये, कुछ और विधिवत् रूपांतर कार्य कर लें, जो भविष्य में काम आएगा। ओम के नियम को निम्न प्रकार से लिखा जा सकता है:

$$I=\frac{US}{\rho l}$$

सामान्यतः धारा-बल और चालक के काट के क्षेत्र के अनुपात से काफ़ी वास्ता पड़ता है। इसे धारा-घनत्व कहते हैं तथा सामान्य रूप से j द्वारा लिखते हैं। अब उसी नियम को निम्न प्रकार लिखने पर:

$$j=\frac{1}{\rho}\frac{U}{l}$$

शोधकर्ता को लगता है कि अब उसे ओम नियम के बारे में सब कुछ स्पष्ट है। चालकों की असीमित संख्या होने पर, जिनका प्रतिरोध ज्ञात ही है, वह सोचता है कि ऊष्मामापी की सहायता से वोल्टता ज्ञात करने की जटिल क्रिया से छुटकारा पाया जा सकता है। मालूम ही है कि वोल्टता धारा-बल तथा प्रतिरोध के गुणनफल के बराबर है।

लेकिन शोधकर्ता को शीघ्र ही महसूस होता है कि इसे भली प्रकार जांचना आवश्यक है। एक ही धारा-स्रोत को प्रयोग करते हुए वह उसके ध्रुवों को विभिन्न प्रतिरोधों द्वारा जोड़ता है। वास्तविक रूप में धारा-बल प्रत्येक प्रयोग के फलस्वरूप अलग होगा। लेकिन प्रतीत होता है कि धारा-बल तथा प्रतिरोध का गुणनफल IR एक समान नहीं आता है। अभी तक अज्ञात इस परिघटना का अध्ययन करते हुए शोधकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि प्रतिरोध बढ़ाये जाने पर IR का गुणनफल एक निश्चित स्थिर मात्रा पर आ ठहराता है।

इस सीमा को $\mathscr{E}$ द्वारा लिखने पर हम सूत्र प्राप्त करते हैं जो

धारा-बल और वोल्टता को सीधे तरीके से मापने के फलस्वरूप प्राप्त हुआ था। इस नए सूत्र का यह रूप है :

$$\mathscr{E} = I(R + r)$$

यह कैसा विचित्र अन्तर्विरोध है?

यह थोड़ा सोचना आवश्यक है। बेशक, यह अन्तर्विरोध केवल प्रतीत होता है। स्पष्ट ही है कि ऊष्मामापी की सहायता से केवल तार की वोल्टता मापी गई थी, जो संचायक सेल से जुड़ा था। और यह तो ज्ञात ही है कि स्वयं संचायक सेल भी ऊष्मा उत्सर्जित करता है (इस तथ्य को सिद्ध करने के लिये संचायक सेल को हाथ लगाना ही काफ़ी होगा)। संचायक सेल का अपना प्रतिरोध होता है। नए सूत्र में उपस्थित r का मान स्पष्ट है : यह धारा के स्रोत का आन्तरिक प्रतिरोध है। जहां तक $\mathscr{E}$ का प्रश्न है तो उसके लिये विशेष नाम रखा जाना चाहिये। यह नहीं कहा जा सकता कि चयन काफ़ी सफल रहा : $\mathscr{E}$ मात्रा को विद्युत-वाहक बल (electromotive force, emf) कहा गया, हालांकि यह न तो कोई अर्थ ही व्यक्त करता है और न ही बल की मात्रा।

दोनों सूत्रों के लिये 'ओम नियम' नाम ही रहने दिया गया (ध्यान रहे कि यहां ऐतिहासिक सत्य को बनाए रखा गया)। केवल पहले सूत्र को तार के किसी भाग के लिये ओम का नियम कहते हैं तथा दूसरे सूत्र को संपूर्ण तार के लिये ओम का नियम कहते हैं।

अब यह लगता है कि सब कुछ समझ आ गया। स्थिर धारा के नियम ज्ञात कर लिये हैं।

लेकिन शोधकर्ता अभी असन्तुष्ट है। ऊष्मामापी के बगैर प्रत्यक्ष रूप से वोल्टता को न मापने में काफ़ी कठिनाई आती है। प्रत्येक बार ताम्र की परत के साथ कैथोड को मापना पड़ता है। आप सहमत हो जाएंगे कि यह काफ़ी कठिन है।

एक बहुत ही वस्तुतः शुभ दिन शोधकर्ता ने अचानक धारा के चालक के पास चुम्बकीय सूई रख दी। और एक महान खोज हुई : जैसे-जैसे धारा प्रवाहित होती है, सूई हिलती है और वह भी भिन्न दिशा में जिस दिशा में धारा का प्रवाह होता है।

चुम्बकीय सूई पर लागू बल का ग्राघूर्ण मालूम करना कठिन नहीं है। इस खोज के ग्राधार पर मापने का यंत्र बनाया जा सकता है। केवल यह ज्ञात करना ग्रावश्यक है कि धारा-बल पर ग्राघूर्ण की निर्भरता की क्या प्रकृति है। इस समस्या का समाधान करके शोधकर्ता बहुत ही श्रेष्ठ मापने के सूई वाले यंत्र बनाता है जिनकी सहायता से वह धारा-बल तथा वोल्टता माप सकता है।

लेकिन हमारी कहानी कि शोधकर्ता ने उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में दिष्ट धारा के नियमों का ग्रध्ययन करते हुए क्या किया, ग्रधूरी रह जाएगी यदि हम यह नहीं बतलाएंगे कि उसने धाराग्रों की परस्पर प्रतिक्रिया का भी ग्रध्ययन किया। एक ही दिशा में प्रवाहित धाराएं ग्राकर्षित होती हैं तथा ग्रलग दिशा में—प्रतिकर्षित होती हैं। स्पष्ट है कि इस परिघटना को भी धारा बल मापने के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है।

विद्युत-चुम्बकत्व के नियमों के बारे में बतलाने के लिये मैं ग्रन्तिम पैरा द्वारा सीमित नहीं होऊंगा; इसके लिये एक पृथक ग्रध्याय लिखा गया है। लेकिन यहां मेरे लिये ग्रावश्यक था कि मैं इन मुख्य तथ्यों के बारे में बतलाऊं ताकि इस ग्रध्याय का कार्य पूर्ण हो सके, जिसका ध्येय था—विद्युत-परिघटनाग्रों की मुख्य संख्यात्मक घाटनाएं ग्रौर मापने की इकाइयां: धारा, ग्रावेश तथा क्षेत्र के बारे में बतलाना।

स्थिर विद्युत

यह ग्रनुमान करें कि हमारा ग्रादर्श शोधकर्ता उन विभिन्न परिघटनाग्रों से ग्रवगत है जिनका नाम प्राचीन समय में "विद्युत" रख दिया गया था। ग्रम्बर लोम पर रगड़ी गई शीशे की छड़ के विशेष गुण, "वैद्युत" ग्रवस्था में स्थित दो पदार्थों के बीच पैदा होने-वाली चिनगारी ग्रादि का ग्रध्ययन (यह कहना ग्रधिक ठीक होगा कि प्रभाव प्रदर्शन के लिये प्रयुक्त किये गये थे) बहुत पहले से किया जा चुका है। इसलिये स्वाभाविक है कि शोधकर्ता के समक्ष, जो विद्युत धारा का ग्रध्ययन कर रहा है, यह प्रश्न ग्राया कि वह द्रव जो तार में प्रवाह कर रहा था तथा वह द्रव जो किसी पदार्थ में स्थिर ग्रवस्था

में रह सकता है जब तक कि उसका विसर्जन नहीं किया जाता, एक ही "कुछ" नहीं है?

यदि पहले इकट्ठी की गई बातों को एक ओर रख दिया जाए तो भी प्रश्न उठ सकता है: यदि विद्युत एक "कुछ" है जो द्रव की भांति प्रवाह करता है तो क्या उसे "गिलास में नहीं डाला जा सकता"?

यदि शोधकर्ता इस प्रश्न का प्रत्यक्ष उत्तर चाहता है तो उसे निम्न प्रकार कार्य करना होगा। काफ़ी उच्च वोल्टता वाले धारा-स्रोत को लीजिये (अभी हम मापने की इकाई की चर्चा नहीं कर रहे हैं, पाठक को इस प्रश्न के उत्तर की प्रतीक्षा करनी चाहिए कि उच्च वोल्टता तथा अधिक धारा-बल क्या है?)। एक ध्रुव को भूसम्पर्कित कर दिया जाता है और दूसरे ध्रुव पर ऐलुमिनियम के बहुत ही महीन वरक का छोटा-सा पोला मनका लगा दिया जाता है। इस मनके को रेशम के धागे से लटकाया जाता है। ठीक इसी प्रकार एक और मनका लटका दिया जाता है।

अब इन दोनों नन्हें मनकों को एक दूसरे के समीप ले आते हैं (उदाहरणतः, उनके केन्द्रों के दो मि० मि० की दूरी पर)। शोधकर्ता खुशी और अचम्भे के साथ (आप कोई अन्य विशेषण भी चुन सकते हैं) नोट करता है कि मनके परस्पर प्रतिकर्षित होते हैं। साहुल के मुड़ने के कोण और मनकों के द्रव्यमान मालूम होने पर उनके बीच स्थित बल को निश्चित किया जा सकता है।

शोधकर्ता यह निर्धारित करता है कि यदि मनके संचायक सेल के एक ही ध्रुव के साथ जुड़ कर आवेशित होते हैं तो वे प्रतिकर्षित होंगे। यदि एक मनका एक ध्रुव से आवेशित हुआ है तथा दूसरा मनका दूसरे ध्रुव से, तो वे एक दूसरे की ओर आकर्षित होंगे।

इस प्रयोग से यह सिद्ध होता है कि विद्युत को द्रव कहा जा सकता है तथा विद्युत न केवल गतिज बल्कि स्थिर भी हो सकती है।

चूंकि शोधकर्ता कैथोड पर इकट्ठी होने वाली ताम्र की मात्रा निश्चित करना जानता है, तो यह कहना अर्थपूर्ण है कि "गिलास में कितना द्रव डाला गया है" अर्थात संचायक सेल के इलेक्ट्रोड से मनके पर इकट्ठी हुई विद्युत की कितनी मात्रा आई।

सर्वप्रथम शोधकर्ता को निम्न बात का विश्वास होता है। यदि

आवेशित मनके को "भूसम्पर्कित कर दिया जाए" अर्थात तार द्वारा पृथ्वी के साथ जोड़ दिया जाए, तो मनका अपना आवेश खो बैठता है। आगे यह सिद्ध होता है कि आवेश तार में से "प्रवाहित" होता है अर्थात उसमें से धारा गुजरती है। और अंत में यह सम्भावना भी उत्पन्न होती है कि पृथ्वी की ओर ले जाने वाले विद्युत अपघट्य उपकरण के कैथोड पर, ताम्र की इकट्ठी होने वाली मात्रा को भी मापा जा सकता है, अर्थात मनके पर स्थिर विद्युत की मात्रा मापी जा सकती है।

शोधकर्ता विद्युत की इस मात्रा का नाम मनके का आवेश रखता है और उसे ऋणात्मक या धनात्मक चिन्ह दे देता है इस आधार पर कि कौन से इलेक्ट्रोड से विद्युत द्रव निकाला गया।

अब हम प्रयोगों की अगली श्रेणी आरम्भ करते हैं, भिन्न-भिन्न आकार के मनकों द्वारा भिन्न भिन्न संचायक सेलों से विद्युत की भिन्न भिन्न मात्राएं इकट्ठी की जा सकती हैं। मनकों को विभिन्न दूरी पर रख कर उन पर स्थित पारस्परिक बल को भी मापा जा सकता है। शोधकर्ता प्रकृति का निम्न महत्वपूर्ण नियम की खोज करता है:

$$F = K\frac{q_1 q_2}{r^2}$$

परस्पर क्रिया का बल मनकों के अवेशों के गुणनफल के अनुक्रमानुपाती है तथा मानकों की दूरी के वर्ग के व्युत्क्रमानुपाती है। पाठक को ऊपर लिखा हुआ सूत्र देखकर याद आ जाएगा कि यह कूलान नियम है जिसकी खोज इस क्रम में नहीं हुई थी, जिस क्रम में हमने अमी बताया। लेकिन हमारा शोधकर्ता तो ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं है।

विद्युत क्षेत्र

शोधकर्ता दो प्रकार के बल जानता है। एक बल तो दो पदार्थों के परस्पर सम्पर्क के फलस्वरूप बनता है। जैसे, कि कर्षण या धक्के के कारण। जहां तक दूसरे प्रकार के बल का प्रश्न है, जो दूरी पर स्थित पदार्थों पर लागू होता है, तो वह अभी तक कर्षण बल या व्यापक रूप से गुरुत्वाकर्षण बल से अवगत था।

अब इसमें एक अन्य बल और शामिल हो जाता है: दो आवेशित पदार्थों पर लागू कूलान का आकर्षण या प्रतिआकर्षण का बल। यह गुरुत्वीय बल से काफ़ी मिलता है। यहां तक कि इनके सूत्र भी एक दूसरे से काफ़ी मिलते हैं।

पदार्थ पर लागू पृथ्वी की ओर से गुरुत्वाकर्षण बल के कारण परिकलन में कोई कठिनाई उत्पन्न नहीं हुई। लेकिन जब कूलान बल, या जैसा कि सामान्यतः कहा जाता है स्थिर वैद्युत बल, का प्रश्न आता है तो ऐसी स्थितियां उत्पन्न होती हैं जब विद्युत आवेश आकाश में काफ़ी जटिल और अज्ञात तरीके से विस्तारित होते हैं।

लेकिन इनके विस्तारण की विधि के अज्ञात होने पर भी कार्य किया जा सकता है। हमें मालूम ही है कि ये आवेश एक दूसरे को दूरी से ही "महसूस" कर लेते हैं। इसे हम क्यों न ऐसे कहें कि आवेश **विद्युत क्षेत्र बनाते हैं**। ऐसा प्रतीत हो सकता है कि विद्युत क्षेत्र के दिखाई न देने से कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। लेकिन शोधकर्ता कहता है कि विद्युत क्षेत्र को कोई गणितीय कल्पना नहीं समझना चाहिये जो परिकलन को आसान बना देगी। यदि किसी बिन्दु पर स्थित आवेश पर कोई बल लागू है तो इसका अर्थ यह है कि यह बिन्दु (आकाश का) विशेष अवस्था में है। विद्युत क्षेत्र एक भौतिक वास्तविकता है, अर्थात स्वयं उपस्थित है हालांकि हमें वह दिखाई नहीं देता। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में कार्यरत शोधकर्ता इसे सिद्ध नहीं कर सकता। लेकिन भविष्य में हमें इसका प्रमाण मिल जाएगा।

कूलान नियम एक सूत्र को निर्धारित करता है जिसकी सहायता से एक नन्हे मनके का दूसरे मनके पर प्रभाव निश्चित किया जा सकता है। एक मनके को स्थिर कर के दूसरे मनके को आकाश में विभिन्न स्थानों पर रखा जा सकता है। प्रत्येक स्थान में सुचल (परीक्षाधीन) मनके पर बल लागू होगा। अब इसे अन्य शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है: विद्युत आवेशित मनका अपने चारों ओर विद्युत बल पैदा कर लेता है या, संक्षेप में, विद्युत क्षेत्र बना लेता है।

विद्युत क्षेत्र के स्रोत किसी भी आकार और रूप के आवेशित कण बन सकते हैं। इस स्थिति में कूलान नियम प्रभावहीन है, लेकिन परीक्षा किये जा रहे मनके की सहायता से आवेशित पदार्थ के चारों
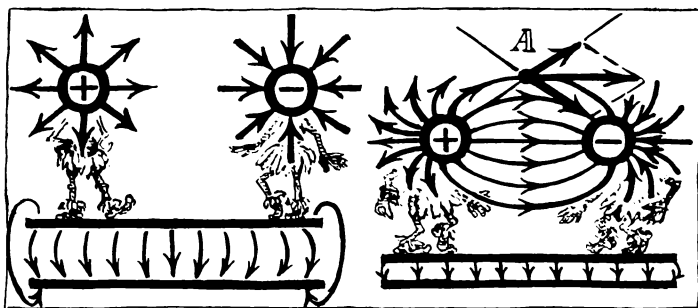
चित्र 1.1

ओर का विद्युत क्षेत्र मापा जा सकता है और बहुत ही विस्तृत रूप में उसकी विशेषता बतलाई जा सकती है तथा इसके साथ-साथ बल की मात्रा और दिशा भी बतलाई जा सकती है। विद्युत-क्षेत्र को उसकी वोल्टता के आधार पर निश्चित किया जाता है, ताकि वह मनके के आवेश की मात्रा पर निर्भर न करे:

$$E = F/q$$

यहां q – परीक्षा किये जा रहे मनके का विद्युत-आवेश है।

विद्युत-क्षेत्र को बल रेखाओं की मदद से चाक्षुण विधि द्वारा भी व्यक्त किया जा सकता है। आवेशित पदार्थों तथा उनके परस्पर विस्तारण के आधार पर ये आरेख काफ़ी विभिन्न रूप धारण कर सकते हैं। चित्र 1.1 में क्षेत्रों के सरलतम आरेख दिखाये गये हैं। इन का अर्थ निम्न प्रकार है: बल रेखा पर किसी भी बिन्दु पर खींचा गया टैन्जैंट इस स्थान पर विद्युत-क्षेत्र की दिशा बतलाता है। बल रेखाओं से लम्ब पर स्थित क्षेत्र की इकाई में आने वाली रेखाओं की संख्या एकदम सापेक्ष है, वह केवल E के मान के आनुपातिक होनी चाहिये। चित्रों को प्रयुक्त न करते हुए जब बल रेखाओं की संख्या की बात होती है तो इस संख्या को E के मान के बराबर माना जाता है।

यदि स्वतंत्र विद्युत आवेश को विद्युत-क्षेत्र में छोड़ दिया जाये तो

वह बल रेखाओं के साथ-साथ चलना शुरू कर देगा, यदि किसी अन्य बल, जैसे गुरुत्वाकर्षण बल, की ओर से प्रतिरोध पैदा न हो।

गोलाकार पदार्थों के बल क्षेत्रों का रूप सरलतम होता है। यदि दो गोले या दो आवेशों को जिन्हें दो बिन्दुओं द्वारा व्यक्त किया जा सकता हो, एक दूसरे के समीप लाया जाये तो उनके क्षेत्र एक दूसरे के ऊपर आ जाएंगे। क्षेत्र की वोल्टता समांतर चतुर्भुज की भांति बनाई जाती है। चित्र में दिखाई गई आकृति बना कर किसी भी बिन्दु A पर बल रेखा की दिशा तथा क्षेत्र की वोल्टता निश्चित की जा सकती है।

यदि आवेशित पदार्थों का रूप प्लेट की भांति है तो उनके क्षेत्र का रूप वैसा होगा जैसा कि नीचे दिये गये चित्र में दिखाया गया है। प्लेटों को एक दूसरे के समीप लाकर तथा प्लेटों का क्षेत्र बढ़ा कर क्षेत्र की लगभग आदर्श एकसमानता प्राप्त की जा सकती है। किनारों का प्रभाव नगण्य होगा। एक दूसरे के समीप स्थित दो प्लेटों के बारे में कहा जा सकता है कि वे क्षेत्र को संघनित कर देती हैं। ऐसे उपकरण को संघनित्र कहते हैं (इसे अंग्रेज़ी में कंडैंसर कहते हैं)।

हम जानते ही हैं कि बल के प्रभाव में किसी पदार्थ को उसके स्थान से हटाने का कार्य बल तथा पथ की लम्बाई के गुणनफल के बराबर होता है। संघनित्र की एक प्लेट से दूसरी प्लेट पर बल रेखा के साथ आवेश ले जाने के लिये qEl के बराबर कार्य की आवश्यकता है। विद्युत की मात्रा की इकाई को स्थानांतरित करने के लिये El के बराबर कार्य की आवश्यकता है।

आइये, संघनित्र की दो प्लेटों को चालक से जोड़ दें। चालक में से विद्युत की मात्रा q के गुज़रने पर qU ऊर्जा उत्सर्जित होती है। क्योंकि हम यह मानते हैं कि विद्युत-क्षेत्र में आवेशित मनके की गति तथा धात्विक चालक में से विद्युत "द्रव" के गुज़रने में कोई सैद्धांतिक भेद नहीं है तो क्षेत्र द्वारा ख़र्च हुई ऊर्जा के इन सूत्रों को समान कर देने पर:

$$qEl = qU$$

इस सूत्र की सत्यता आसानी से सिद्ध की जा सकती है:

संघनित्र की प्लेटों को एक दूसरे से अलग करते हुए विचाराधीन आवेश पर लागू बल को मापा जा सकता है।

इस मापने की क्रिया को सुसंस्कृत विधि द्वारा भी किया जा सकता है जिसमें रेशमी धागे से आवेशित मनके को लटकाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी।

सर्वविदित है कि भारी पदार्थों की अपेक्षा हल्के पदार्थ अधिक शीघ्रता से नीचे गिरते हैं। यहां स्मरण रहे कि गैलीलियो से पहले इसी कारण के आधार पर प्राचीन और मध्य युगों के बुद्धिजीवी यह मानते थे कि पदार्थ की गति (न कि त्वरण) बल के आनुपातिक है। इस दृष्टिकोण की त्रुटि उस समय स्पष्ट हुई जब एक ऊर्ध्वाधर नली में, जिसमें से वायु निकाल ली गई थी, कागज़ के टुकड़े तथा धातु का मनका नीचे गिराया गया। यह देखा गया कि सभी पदार्थ समान रूप से गति प्राप्त करते हैं, अर्थात् पृथ्वी पर एक ही त्वरण से नीचे आते हैं। लेकिन अब यह अर्थपूर्ण होगा यदि हम वायु का प्रभाव लागू कर दें जिसके कारण पैदा होनेवाला प्रतिरोध हल्के खाली धातु के मनके को पृथ्वी पर धीरे-धीरे गिरने देगा। यहां हम उसी मनके को प्रयुक्त कर रहे हैं जिसे हमने कूलॉन नियम को सिद्ध करने के लिये प्रयुक्त किया था।

यदि मनके को, जब वह संघनित्र की प्लेटों के बीच में स्थित होता है, गिरने पर विवश किया जाये, तो प्लेटों के मध्य वोल्टता को बदल कर ऐसा क्षेत्र ज्ञात किया जा सकता है जो मनके को गिरने से रोक लेगा। संतुलन केवल उसी स्थिति में प्राप्त होगा जब गुरुत्वाकर्षण बल क्षेत्र बल के समान होगा: $mg = qE$। इस सूत्र से क्षेत्र की वोल्टता ज्ञात की जा सकती है तथा हमारे सैद्धांतिक विचारों की सत्यता सिद्ध की जा सकती है।

विद्युत-क्षेत्र में किसी भी काल्पनिक या वास्तविक सतह में से गुज़रने वाली बल रेखाओं की संख्या बल-धारा कहलाती है। आवेशित पदार्थों वाली बंद सतह में से गुज़र रही बल-धारा किसके बराबर है?

सबसे पहले एक सरल स्थिति को देखें: एक छोटे मनके द्वारा बना क्षेत्र। मनके के चारों ओर एक वृत खींचें। यदि वृत की त्रिज्या

R हो, तो वृत पर किसी भी बिन्दु पर वोल्टता Kq/R^2 के बराबर होगी। वृत का क्षेत्रफल $4\pi R^2$ के बराबर है। इसका अर्थ यह हुआ कि वृत में से गुज़रने वाली बल-धारा $4\pi Kq$ के बराबर होगी। स्पष्ट है कि अन्य किसी भी सतह लेने पर भी बल-धारा वैसी ही रहेगी।

अब हम चित्र को अधिक जटिल बना देते हैं। मान लें कि भिन्न-भिन्न आकारों वाले अनेक आवेशित पदार्थ क्षेत्र बनाते हैं। काल्पनिक रूप से हम इन्हें और भी नन्हें-नन्हें टुकड़ों में तोड़ देते हैं जो एक निश्चित आवेश रखते हैं। और अब इस स्वच्छन्द सतह पर आवेशों को देखें। प्रत्येक आवेश की बल-धारा $4\pi Kq$ के बराबर है। यह मानना स्वाभाविक ही होगा कि अंकगणित के दृष्टिकोण से सभी धाराएं जुड़ जाएंगी, अर्थात् किसी भी बन्द सतह में से, जिसमें सभी आवेश स्थित हैं, गुज़रने वाली पूर्ण बल-धारा इस सतह में स्थित सभी आवेशित पदार्थों के योग के आनुपातिक होगी।

यह तथ्य विद्युत-क्षेत्रों पर लागू होने वाला मुख्य नियम है। (मैक्सवेल के चार समीकरणों में से एक समीकरण; दे० अध्याय ५)।

आपका ध्यान इस ओर दिलाना चाहूंगा कि हमने अभी इसे सिद्ध नहीं किया है। हमने यह धारणा की थी कि होना ऐसे ही चाहिये, अन्य किसी और प्रकार से नहीं। इसका अर्थ हुआ कि हम प्रकृति के किसी नियम पर कार्य कर रहे हैं, जिसका प्रमाण साधारण नियम के किसी भी परिणाम के प्रायोगिक रूप से सिद्ध हो जाने पर मिल सकता है।

यह अतिआवश्यक है कि ऐसा साधारण नियम हमें ज्ञात हो जो किसी भी विन्यास के लिये सही हो। आवेशित पदार्थों के जटिलतम विन्यास द्वारा बनने वाले विद्युत क्षेत्र को ऊपर लिखे सूत्र की सहायता से कम्प्यूटर एक सेकंड में निश्चित कर देगा। लेकिन हम साधारण प्रश्न को हल करके ही संतुष्ट हो जाएंगे और संघनित्र की धारिता के लिये वास्तविक रूप से महत्वपूर्ण सूत्र निकाल लेंगे (इस सरल स्थिति के द्वारा सैद्धांतिक भौतिकी के प्रश्नों का भी अध्ययन हो जाएगा)।

आइये, पहले इस प्रचलित धारणा का अर्थ समझें। संघनित्र की प्लेटों पर इकट्ठा होने वाले आवेश तथा उनके चारों ओर की वोल्टता का अनुपात ही संघनित्र की धारिता कहलाती है:

$$C = q/U$$

संघनित्र की स्थिति में बल रेखाएं इधर-उधर नहीं फैलती, बल्कि वे धनात्मक प्लेटों से निकल कर ऋणात्मक प्लेटों में प्रवेश कर जाती हैं। यदि संघनित्र के किनारों पर विकृत क्षेत्र की उपेक्षा कर दी जाए, तो धारा ES के बराबर होगी। साधारण नियम के आधार पर इसे निम्न प्रकार लिखा जा सकता है:

$$ES = 4\pi Kq$$

अर्थात् उनके चारों ओर की वोल्टता

$$E = 4\pi K \frac{q}{S}$$

के बराबर होगी। दूसरी ओर से, संघनित्र के क्षेत्र की वोल्टता को निम्न प्रकार भी लिखा जा सकता है:

$$E = U/d$$

इन दोनों सूत्रों को बराबर करने पर हमें संघनित्र की धारिता का सूत्र प्राप्त होगा:

$$C = \frac{S}{4\pi Kd}$$

तकनीकी संघनित्र एक प्रकार के धात्विक ध्रुव होते हैं, जो अभ्रक या पैराफ़िन कागज़ से जुड़े होते हैं। ये वस्तुएं पृथक्कारकों में गिनी जाती हैं। संघनित्र के बीच प्रवेश करने वाले परावैद्युत का क्या महत्व है? प्रायोगिक रूप से यह सिद्ध हुआ है कि संघनित्र की धारिता C भराव C_0 के बगैर संघनित्र की धारिता से $C = \varepsilon C_0$ सूत्र द्वारा जुड़ी होती है।

ε मात्रा परावैद्युतांक कहलाती है। वायु, अभ्रक, जल तथा सेगनेट लवण (seignette salt, Potassium sodium tartrate) के लिये ε का मान क्रमशः 1, लगभग 6, 81 तथा 9000 है।

आधार किसे माना जाये ?

ओम का नियम तथा जूल-लेन्त्स का नियम आपस में ऊर्जा, धारा-बल, वोल्टता एवं प्रतिरोध को मिलाते हैं। यह कहा जा सकता है कि वोल्टता धारा-बल तथा प्रतिरोध के गुणनफल के बराबर होती है। ऐसे भी कहा जा सकता है कि धारा-बल प्रतिरोध से विभाजित वोल्टता के बराबर है। पाठ्य-पुस्तकों में मिलने वाली इन दोनों परिभाषाओं में यह कमी है कि ये तभी सही होंगी जब ओम का नियम सही होगा। और, यह बताया ही गया था कि ओम का नियम हमेशा सही नहीं होता। इसलिये ऐसे ही करना चाहिये जैसा हमने किया, अर्थात यह मान लिया जाये कि व्युत्पादित मात्रा चालक के प्रतिरोध को कहते हैं जो चालक के किनारों पर वोल्टता तथा उसमें से प्रवाहित धारा-बल के अनुपात द्वारा निश्चित होती है।

चूंकि धारा के उष्मीय तथा यांत्रिकीय प्रभाव के आधार पर ऊर्जा-संरक्षण नियम की सहायता से विद्युत-धारा की ऊर्जा मापी जा सकती है, तो स्पष्ट है कि धारा-बल अथवा वोल्टता को ऊर्जा से व्युत्पादित मात्रा के रूप में निश्चित करना युक्तिसंगत है। और भी अधिक स्वाभाविक यह होगा यदि हम विद्युत-अपघटन की सहायता से धारा-बल ज्ञात करें तथा तार के छोरों पर वोल्टता को उत्सर्जित ऊर्जा को विद्युत की मात्रा से भाग दिये जाने पर प्राप्त होने वाले भागफल के रूप में माना जाए।

लेकिन पाठक को यह स्पष्ट हो जाना चाहिये कि यह कोई एकमात्र विधि नहीं है। धारा-बल को निश्चित करने के लिये विद्युत-अपघटन के स्थान पर उसकी किसी भी अन्य क्रिया को प्रयोग किया जा सकता है, जैसे चुम्बकीय सूई पर धारा का प्रभाव या दूसरी धारा पर उसका प्रभाव, इत्यादि।

निम्न विधि में भी कोई सैद्धांतिक त्रुटि नहीं है: एक नियत मानक धारा स्रोत लिया जाता है, तथा किसी भी अन्य स्रोत की वोल्टता मानक सेलों की संख्या के बराबर होती है। यह कोई निरी कल्पना नहीं है। यह धारणा वास्तविक है तथा मानक स्रोत का नाम है: वेस्टन मानक सेल (Weston standard cell)।

एक और विधि: किसी नियत मानक प्रतिरोध के आधार पर मापने की विधि तथा इकाईयां निश्चित की जा सकती हैं और फिर अन्य सभी प्रतिरोधों को मापा जा सकता है तथा ज्ञात किया जा सकता है कि नियत चालक के लिये कितने मानक सेलों की आवश्यकता पड़ी। अपने समय में प्रतिरोध की इस प्रकार की इकाई के रूप में निश्चित लम्बाई और अनुप्रस्थ-काट वाला पारे का कॉलम प्रयोग किया गया था।

यह समझना लाभदायक रहेगा कि भौतिक धारणाओं को प्रयोग करने का क्रम स्वेच्छानुसार हो सकता है तथा इससे प्रकृति के नियमों का सार नहीं बदलता है।

अभी तक हम उन विद्युत परिघटनाओं की चर्चा कर रहे थे जो स्थायी विद्युत-धारा से सम्बन्धित हैं। परिघटनाओं के इसी ग्रुप के अन्तर्गत ही हम परिघटनाओं को मापने की विभिन्न विधियां तथा मापने की इकाइयों के विभिन्न विन्यास बना सकते हैं। वस्तुतः हमारे पास और भी अधिक विकल्प हैं, क्योंकि विद्युत परिघटनाएं केवल दिष्ट विद्युत धारा तक ही सीमित नहीं हैं।

अधिकतर भौतिकी की पाठ्य-पुस्तकों में अभी तक विद्युत आवेश की मात्रा (अन्य शब्दों में विद्युत की मात्रा) कूलॉन नियम से निश्चित की जाती है, फिर वोल्टता का ज़िक्र होता है और उसके बाद स्थिर वैद्युत के बारे में बता कर लेखक धारा-बल तथा विद्युत प्रतिरोध के बारे में बतलाता है। जैसा कि आपने देखा, हमारा मार्ग इससे हटकर था।

मापने की इकाइयों के चयन में इससे भी अधिक विकल्प हैं। शोधकर्ता जैसा ठीक समझे, वैसे ही कार्य करने का हक रखता है। लेकिन उसे केवल यह स्मरण रहे कि मापने की इकाई का चयन आनुपातिक गुणांकों पर प्रभाव डालता है, जो विभिन्न सूत्रों में स्थित होते हैं।

धारा-बल, वोल्टता तथा प्रतिरोध की इकाइयों को स्वतंत्र रूप से चुनने में कोई हर्ज़ नहीं है। लेकिन इस प्रकार ओम के नियम में संख्यात्मक गुणांक आ जाएगा तथा उसका अपना मापक्रम भी होगा। इस समय तक भौतिकी में अंतर्राष्ट्रीय समिति के कड़े निर्देश द्वारा

इतने अभ्यस्त नाम, जैसे कैलोरी, नहीं निकाले गये थे, जूल-लेन्त्स के नियम के सूत्र में संख्यात्मक गुणांक स्थित था। इसका कारण था कि धारा-बल तथा वोल्टता को मापने की इकाइयां ऊर्जा (उष्मा, कार्य) की इकाई के चयन से स्वतंत्र होकर निश्चित की जाती थी।

गत पृष्ठों में समानता के स्थान पर अनुपात के रूप में मैंने दो सूत्र लिखे हैं: पहला, इलैक्ट्रोड पर इकट्ठी होनेवाली पदार्थ की मात्रा तथा विद्युत की मात्रा का अनुपात; दूसरा, कूलॉन नियम। ऐसा मैंने एकाएक ही नहीं किया, बल्कि इसका कारण यह है कि भौतिकतज्ञ अनिच्छा से अन्तर्राष्ट्रीय प्रणाली (SI, International System of Standard), जो एक नियम के रूप में चले, को प्रयुक्त करते हैं (संपादकों के प्रभाव से ऐसे लोगों की संख्या कुछ कम है) और तथाकथित निरपेक्ष इकाईयों की प्रणाली, जिसके अनुसार कूलान सूत्र में, जब वह निर्वात में आवेशों की परस्पर क्रिया के लिये लागू होता है, K का मान एक के बराबर माना जाता है। इस प्रकार हम विद्युत की मात्रा की तथाकथित "निरपेक्ष" इकाई का मान ज्ञात कर लेते हैं (आवेश एक के बराबर है, यदि दो समान आवेश एक ही दूरी पर स्थित हों तो एक ही बल से प्रतिक्रिया करेंगे)।

इस क्रम में कार्य करते हुए द्रव्यमान को ग्रामों में बदलते हुए विद्युत-अपघटन में k गुणांक का मान निकालना आवश्यक हो जाता और यह भी ज्ञात करना पड़ता कि आवेश की एक निरपेक्ष इकाई के गुज़रने पर इलैक्ट्रोड भर कितनी मात्रा में पदार्थ इकट्ठा हुआ। आप अपनी पाठ्य-पुस्तक के पन्ने न पलटें, आपको वहां इस गुणांक की यह मात्रा नहीं मिलेगी। यह जानते हुए कि टेकनीशियन एम्पेयर व कूलॉन को एकदम प्रयोग नहीं करेंगे, भौतिकतज्ञों ने विद्युत-अपघटन के सूत्र में वह संख्या रख दी जो द्रव में से एक कूलॉन विद्युत गुज़रने पर पदार्थ की पृथक होने वाली मात्रा व्यक्त करेगी। पुस्तक में आपने एक ही मात्रा की दो इकाइयों को देखा। यह भी स्पष्ट हुआ कि इन इकाईयों को प्रयुक्त करना भी सर्वथा विभिन्न स्थितियों में ही लाभदायक था, क्योंकि कूलॉन तीन अरब निरपेक्ष इकाईयों के बराबर है।

हालांकि K को एक के बराबर लिखना आसान है, लेकिन टेक्नीशियनों का कहना था कि बल-धारा, संघनित्र की धारिता के लिये

समीकरणों में तथा अन्य सूत्रों में अनावश्यक गुणांक 4π शेष रह जाता है और इसलिये इससे छुटकारा पाना चाहिये।

जैसा कि आम तौर पर होता है, उन्हीं लोगों की विजय होती है जो व्यवहार के करीब होते हैं न कि उनकी जो धारणाओं के करीब होते हैं। आजकल प्रचलित प्रणाली वही प्रणाली है जिसे टेक्नीशियन बहुत पहले से प्रयुक्त करते आ रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय प्रणाली SI के समर्थकों ने दृढ़ता से कहा कि विज्ञान के सभी क्षेत्रों में ऊर्जा की एक ही इकाई को प्रयुक्त करना चाहिये और एक ही विद्युत धारणा के लिये मुख्य रूप से प्रचलित धारा-बल को प्रयुक्त करना चाहिये।

इस प्रकार, हम जूल–ऊर्जा की इकाई के साथ विद्युत के सिद्धांत में प्रवेश करते हैं। विद्युत की मात्रा की इकाई के रूप में हम कूलॉन इस्तेमाल करते हैं जो एम्पेयर-सेकंड के बराबर है। हम यह कहेंगे कि धाराओं की प्रतिक्रियाओं के बल के आधार पर एम्पेयर निश्चित करना चाहिये। यह परिभाषा (जिसे हम अध्याय ३ में पृष्ठ १०५ पर प्रस्तुत करेंगे जो विद्युत-चुम्बकीयता से सम्बंधित होगा) इस प्रकार चुनी गई है ताकि विद्युत-अपघटन के सूत्र में k गुणांक वैसा ही रहे, जिससे सभी पहले ही से अवगत हैं। लेकिन फिर भी अपने आपको यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि अन्तर्राष्ट्रीय प्रणाली SI में यह गुणांक कूलान की मात्रा **निश्चित नहीं करता है**। यदि मापने की परिशुद्धता अधिक बढ़ जाती है तो हम इस मात्रा को इस प्रकार बदलने के लिये विवश हो जाएंगे ताकि एम्पेयर की परिभाषा वैसी ही बनी रहे (सच तो यह है कि मुझे नहीं लगता कि ऐसा समय आ जाएगा, क्योंकि विद्युत-गतिक बल मापने की परिशुद्धता द्रव्यमान को मापने की परिशुद्धता से अधिक होगी)।

आगे अन्तर्राष्ट्रीय प्रणाली SI उसी मार्ग पर चलती है, जिस मार्ग पर मैंने शोधकर्त्ता को चलने के लिये विवश कर दिया है। हमारे समक्ष वोल्टता की इकाई वोल्ट आती है जो कूलॉन से विभाजित जूल के बराबर है; इसके बाद आती है प्रतिरोध की इकाई ओम, जो एम्पेयर से विभाजित वोल्ट के बराबर है। तत्पश्चात् आती है विशिष्ट प्रतिरोध की इकाई–ओम, जो एक मीटर का गुणनफल है।

अब हम कूलॉन नियम पर पहुंचते हैं और देखते हैं कि K गुणांक

पर हम अब आदेश नहीं चला सकते। बल को न्यूटान में मापा जाता है, दूरी – मीटर में, आवेश – कूलान में। अब K गुणांक भी मापा जा सकता है तथा इसकी भी कोई नियत मात्रा है जिसे प्रायोगिक रूप द्वारा निश्चित किया जा सकता है।

कूलॉन नियम की आवश्यकता तो शायद ही कभी होती है, अधिकतर तकनीकी परिकलनों में सूत्र के रूप में संघनित्र की धारिता प्रयुक्त होती है। विद्युत धारा, संघनित्र की धारिता तथा अन्य कई सूत्रों में 4π गुणनखंड आदि को हटाने के लिये टेकनीशियनों ने काफ़ी पहले से K गुणांक की जगह $1/4\,\pi\varepsilon_0$ को लिख लिया है। कई स्पष्ट कारणों के आधार पर ε_0 को निर्वात का परावैद्युतांक कहा जा सकता है। यह

$$\varepsilon_0 = 8{,}85 \cdot 10^{-12}\, C^2/(N \cdot m^2)$$

के बराबर है।

इस प्रकार अब बल रेखाओं की धारा निम्न सूत्र द्वारा व्यक्त होगी :

$$\frac{1}{\varepsilon_0}\,(q_1 + q_2 + \ldots)$$

और संघनित्र की धारिता इस प्रकार लिखी जाएगी।

$$C = \varepsilon\varepsilon_0 S/d$$

धारिता की इकाई एक फेराड वोल्ट से विभाजित कूलान के बराबर है।

विद्युत के सिद्धांत का विकास किस प्रकार हुआ?

विद्युत के सिद्धांत का विकास उस क्रम में नहीं हुआ जिस क्रम में हमारे "सामान्य" शोधकर्ता ने कार्य किया।

स्थिर वैद्युत परिघटनाएं प्राचीन काल में भी ज्ञात थीं। यह कहना कठिन होगा कि क्या ग्रीक वैज्ञानिक को यह ज्ञात था कि अम्बर (ग्रीक में "इलेक्ट्रॉन") को रगड़ने से उसमें ऐसे गुण आ जाते हैं जिनके

कारण वह अपनी ओर तिनकों को आकृष्ट करता है। केवल १७वीं शताब्दी में ही विलियम गेल्बेर्ट ने यह सिद्ध किया कि ये अद्भुत गुण हीरे, लाख, गन्धक, फिटकरी तथा अन्य कई पदार्थों में विद्यमान हैं। इस अद्वितीय वैज्ञानिक ने शायद सबसे पहले ऐसा उपकरण बनाया जिसकी सहायता से विद्युतीकृत पदार्थों की परस्पर प्रतिक्रिया को देखा जा सकता था। १८वीं शताब्दी में यह ज्ञात हुआ कि कुछ पदार्थ आवेशों को रोक लेते हैं तथा कुछ पदार्थों में से आवेश गुज़र सकते हैं। लेकिन यह विश्वास प्रत्येक नहीं कर सकता कि विद्युत एक द्रव की भांति ही है। पहली स्थिर-वैद्युत मशीनें बनाई गईं जिनके द्वारा चिनगारी निकाली गई, एक पंक्ति में खड़े लोगों में "कम्पन" पैदा किया गया, जो आपस में एक दूसरे का हाथ पकड़ कर खड़े थे, और एक आदमी ने चालू विद्युत मशीन के तार को छुआ। कई देशों के राजदरबारियों ने वैज्ञानिकों की प्रयोगशालाओं में सर्कस की तरह जाना शुरू कर दिया। और अपनी बारी में वैज्ञानिकों ने परिघटनाओं को नाटक का रूप देना शुरू किया।

१८वीं शताब्दी में स्थिर-विद्युत को एक विज्ञान के रूप में माना जा सकता है। विभिन्न प्रकार विद्युतदर्शी कई संख्या में बनाए गए। कूलॉन ने परस्पर क्रियाशील आवेशों के बलों को संख्यात्मक रूप से मापना आरम्भ किया।

सन १७७३ में लुईजी गैल्वानी (१७३७–१७९८) में विद्युत वोल्टता के प्रभाव में मेंढक के पेशी संकुचन का अध्ययन शुरू किया।

गैल्वानी के प्रयोगों को जारी रखते हुए वोल्टा १८वीं शताब्दी के अंत में इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि मेंढक की पेशियों में विद्युत द्रव गुजरता है। इसके बाद अगला महत्वपूर्ण कदम था—पहले विद्युत स्रोत का निर्माण—गैल्वानी सेल और तत्पश्चात् वोल्टीय सेल।

१९वीं शताब्दी के एकदम आरम्भ में वोल्टा की खोज के समाचार समस्त वैज्ञानिक जगत् में फैल गए। विद्युत धारा का अध्ययन आरम्भ हुआ। एक खोज के बाद दूसरी खोज हुई।

अनेक शोधकर्त्ता धारा के उष्मीय प्रभाव का अध्ययन करने लगे। इस कार्य में लग्न था एरस्टेड, जिसने अचानक ही धारा का चुम्बकीय सूई पर प्रभाव देखा।

ओम तथा एम्पेयर के अद्वितीय कार्य भी एक ही समय में हुए— १९ वीं शताब्दी के तीसरे दशक में।

एम्पेयर के कार्यों ने उसे शीघ्र ही ख्याति दिला दी। लेकिन ओम की क़िस्मत अच्छी नहीं थी। उसके समकालीनों ने उसके लेखों पर कोई ध्यान नहीं दिया। ये लेख यथार्थ प्रयोगों, परिशुद्ध परिकलनों, क्रमबद्ध परिघटनात्मक धारणाओं पर आधारित थे। उनमें पदार्थों की "प्रकृति" का बिल्कुल भी अध्ययन नहीं किया गया। यदि किसी अन्य वैज्ञानिक ने इस बारे में कुछ लिखा भी तो इस उद्देश्य से ही कि "प्रकृति के गुणों को निचा दिखाने वाले लेखक की बीमार कल्पना" का मज़ाक उड़ाया जाय। (शायद ये शब्द दे ला रीव के हैं जिसने विज्ञान के क्षेत्र में ज़रा-सा भी योग नहीं दिया)।

उन दिनों कार्य करने वाले वैज्ञानिकों के मौलिक लेख पढ़ना काफ़ी कठिन काम है। प्रायोगिक खोजों का वर्णन ऐसी भाषा में किया गया जिससे हम अवगत नहीं हैं। अनेक स्थानों पर यह समझ में भी नहीं आता कि अमुक शब्द का प्रयोग करते समय वैज्ञानिक का अभिप्राय क्या था। आने वाली पीढ़ियों की याद में महान वैज्ञानिक केवल विज्ञान के इतिहासतज्ञों के कार्य के फलस्वरूप ही जीवित रहते हैं।

अध्याय २

पदार्थ की वैद्युत संरचना

विद्युत का लघुत्तम भाग

वैद्युत परिघटनाओं के बारे में भौतिकतज्ञों के पास जो कुछ भी ज्ञान था, वे उसके आधार पर बहुत समय तक इस बात पर दृढ़तापूर्वक डटे रहे कि विद्युत एक प्रकार का द्रव है। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक निम्न चुटकुला बहुत प्रचलित था। जो छात्र पढ़ाई की पूरी तैयारी नहीं करता था, उस पर व्यंग करने के उद्देश्य से परीक्षक यह पूछता था ; "चूंकि तुमने मेरे किसी भी प्रश्न का उत्तर नहीं दिया, अब केवल इतना बतला दो कि विद्युत क्या है।" छात्र जवाब देता था : "श्रीमान प्रोफ़ेसर साहब, सच-सच कहता हूं मुझे यह मालूम था, लेकिन अब भूल गया हूं।" फिर परीक्षक विस्मय से कहता था : "ओफ़! मानव-जाति का कितना अधिक नुकसान हो गया। एक इन्सान को मालूम था कि विद्युत क्या है, लेकिन अब वह भी भूल गया।"

सबसे पहले यह विचार कि विद्युत कोई अटूट द्रव नहीं है, बल्कि वह विशेष कणों से बनी हुई है, और इसके साथ ही यह विश्वास कि विद्युत के कण किसी प्रकार से परमाणुओं से सम्बंधित हैं, विद्युत-अपघटन के अध्ययन के फलस्वरूप सामने आये।

जल में विलीन पदार्थों के अपघटन पर प्रयोग करते हुए, घोल में से विद्युत-धारा गुज़ार कर माईकल फ़ैराडे (१७६१–१८६७) ने यह सिद्ध किया कि जल में विलीन रसायनिक यौगिक के आधार पर एक ही विद्युत-धारा इलैक्ट्रोडों पर पदार्थ की विभिन्न मात्रा का उत्सर्जन करती है। फ़ैराडे ने यह ज्ञात किया कि एक संयोजकता वाले पदार्थ का एक ग्राम – परमाणु उत्सर्जित होने पर विद्युत-अपघटनी में से 96 500

कूलान गुज़रते हैं, तथा द्विसंयोजकता वाले पदार्थ का एक ग्राम–परमाणु उत्सर्जित होने पर यह संख्या दुगुनी हो जाती है।

सम्भव है आप यह सोच रहे हों कि इस परिणाम पर पहुंच कर फ़ैराडे ने चिल्लाया होगा: "यूरेका" और यह घोषणा भी की होगी कि उसने विद्युत की प्रकृति समझ ली है। लेकिन यह महान वैज्ञानिक इस प्रकार की कल्पना के वश में नहीं हुआ। जहां तक विद्युत-धारा का प्रश्न है, फ़ैराडे ने उसी प्रकार कार्य किया, जैसे गत अध्याय के शोधकर्ता ने किया था। उसने केवल उन्हीं धारणाओं को प्रयोग करना आवश्यक समझा, जिन्हें संख्या द्वारा व्यक्त किया जा सकता है।

पाठक प्रश्न करेगा कि $6,02 \cdot 10^{23}$ (अवोगादरो संख्या–आपको स्मरण होगी) परमाणु 96500 कूलॉन विद्युत ले जा सकते हैं, यह सिद्ध तो किया जा चुका है। अतएव, दूसरी संख्या को पहली संख्या से विभाजित करने पर विद्युत की वह मात्रा प्राप्त होगी जो कोई भी एक संयोजकता वाले परमाणु पर होती है। विभाजित करने पर $1,6 \cdot 10^{-19}$ कूलॉन प्राप्त होते हैं। यही है विद्युत का लघुत्तम भाग, या "विद्युत का परमाणु", या "मूल आवेश"।

लेकिन अवोगादरो संख्या तो केवल १८७० में ही ज्ञात हुई।

केवल तब ही (केवल सौ वर्ष पूर्व) भौतिकतज्ञों ने, जो परिकल्पनाएं करना बहुत पसन्द करते थे (इनका स्वभाव और मानसिक अवस्था इन्हें शोधकर्ता से अलग कर देती है जो परिघटना तक ही सीमित रहता है), यह निश्चय किया कि निम्न कल्पना काफ़ी सम्भव लगती है। विद्युत के प्रति उदासीन परमाणुओं के साथ-साथ ऐसे कण भी होते हैं, जिन पर विद्युत के एक या एक से अधिक मूल आवेश (धनात्मक या ऋणात्मक) विद्यमान होते हैं। धनात्मक आवेश वाले परमाणु (धनायन) विद्युत-अपघटन के समय कैथोड पर इकट्ठे हो जाते हैं; ऋणात्मक आवेश वाले (ऋणायन) परमाणु ऐनोड पर इकट्ठे हो जाते हैं।

जल में विलय होने वाले लवण के अणु धनायन तथा ऋणायन में विघटित हो जाते हैं, उदाहरणतया, साधारण लवण–सोडियम क्लोराइड–का अणु क्लोरीन और सोडियम के परमाणुओं में नहीं, अपितु सोडियम के धनात्मक आयन तथा क्लोरीन के ऋणात्मक आयन में विघटित होता है।

आयनी धारा

स्वतः स्पष्ट ही है कि विद्युत-अपघटन की क्रिया से शोधकर्त्ता को केवल यह ज्ञान होता है कि विद्युत-कण भी होते हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में और बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में अणु को आवेशित टुकड़ों में परिवर्त्तित करने की अनेक विधियां प्रस्तुत की गईं (यह क्रिया आयनन कहलाती है), आवेशित कणों की निर्देशित धाराओं को बनाने की विधि भी बतलायी गई, तथा अंत में, आयन का द्रव्यमान और आवेश निर्धारित करने की विधियां भी ज्ञात की गईं। आयनी धाराओं के साथ भौतिकतज्ञों का पहला परिचय उस समय हुआ जब उन्होंने शीशे की नली में से विरलित गैस बंद कर के उसमें से दिष्ट धारा गुज़ारी। नली में जोड़ी हुई इलैक्ट्रोडों पर वोल्टता कम होने पर नली में से धारा नहीं गुज़रेगी। लेकिन ज्ञात हुआ कि गैस को चालक में आसानी से परिवर्तित किया जा सकता है। एक्स-किरणों, पराबैंगनी प्रकाश और रेडियोएक्टिव विकिरण के प्रभाव के कारण गैस का आयनन हो जाता है। इन विशेष क्रियाओं के बिना भी कार्य हो सकता है, तब हमें गैस वाली नली में से अधिक ऊंची वोल्टता गुज़ारनी होगी।

गैस धारा का चालक बन जाती है। यह अनुमान किया जा सकता है कि अणु धनायनों और ऋणायनों में अलग हो जाते हैं। धनायन धनात्मक इलेक्ट्रोड की ओर तथा ऋणायन ऋणात्मक इलेक्ट्रोड की ओर जाते हैं। इस परिघटना के अध्ययन में महत्वपूर्ण कदम कणों की धारा का बनाना था। इसके लिये इलेक्ट्रोड में छिद्र करना चाहिये और फिर उसमें से गुज़र रहे समान चिन्ह आयनों की गति को विद्युत-क्षेत्र की मदद से त्वरित किया जा सकता है। डायाफ़ाम द्वारा काफ़ी तीव्र गति से चल रहे धनायनों या ऋणायनों का एक बारीक़ किरण-पुंज बनाया जा सकता है। यदि यह किरण-पुंज दूरदर्शन यंत्र की स्क्रीन जैसी स्क्रीन पर पड़े तो हम उस पर एक चमकता हुआ बिन्दु देखेंगे। आयनों के किरण-पुंज को दो परस्पर लम्ब पर स्थित विद्युत-क्षेत्रों के बीच में से गुज़ारने पर और साथ-साथ क्षेत्र बनाने वाले संघनित्रों पर वोल्टता बदल-बदल कर हम बिन्दु को सारी स्क्रीन पर चला सकते हैं।

इस प्रकार के उपकरण की मदद से हम कण के महत्वपूर्ण गुण मालूम कर सकते हैं, अर्थात उसके आवेश का उसके द्रव्यमान के साथ अनुपात।

त्वरित क्षेत्र में आयन विद्युत बल के कार्य के बराबर की ऊर्जा प्राप्त कर लेते हैं, यानी:

$$1/2\ mv^2 = eU$$

वोल्टता तो हमें ज्ञात है ही, कणों की गति को एकदम भिन्न-भिन्न विधियों द्वारा निर्धारित किया जा सकता है। जैसे कि, स्क्रीन पर चमकते हुए बिन्दु के विचलन को मापा जा सकता है। स्पष्ट है कि कण द्वारा तय किया गया मार्ग जितना लम्बा होगा, तथा उसकी प्रारम्भिक गति जितनी कम होगी, उतना ही उसका विचलन अधिक होगा। यह प्रश्न काफ़ी निश्चित क्रम में हल किया जाता है। यह सीधे फेंके गये पत्थर के पथ को निर्धारित करने की क्रिया के समान है।

इसी प्रकार, ऐसी विधियां भी हैं जिनकी मदद से आयन द्वारा सारा मार्ग तय करने में लगा समय मापा जा सकता है।

अतः, अब हमें आयन की वोल्टता तथा गति मालूम हैं। इस प्रयोग के आधार पर हम क्या निर्धारित कर सकते हैं? समीकरण से स्पष्ट है: कण के आवेश और द्रव्यमान का अनुपात। यहां पहुंच कर खेद होता है कि आवेश और द्रव्यमान को अलग नहीं कर सकते, चाहे प्रयोग के क्रम को किसी प्रकार भी बदल दें, या कणों के विचलन अथवा त्वरण को प्रयोग कर लें। केवल रसायनज्ञों द्वारा इकट्ठे किये गये तथ्यों और विद्युत-अपघटन से प्राप्त मूल आवेश के मान को प्रयोग कर के हम इस विश्वस्नीय निष्कर्ष पर पहुंचते हैं: सभी एक संयोजकता वाले आयनों के आवेश समान हैं, सभी द्वि-संयोजकता वाले आयनों के दुगुने, त्रिसंयोजकता वाले आयनों के तीन गुना अधिक...। आवेश के द्रव्यमान के प्रति अनुपात में होने वाले परिवर्तनों को काफ़ी परिशुद्धता से मापा जा सकता है। इस प्रकार हमें आयन का द्रव्यमान ज्ञात करने की विधि मालूम हो गई है।

यही कारण है कि हमारे द्वारा किये गये सरल प्रयोग पर आधारित यह उपकरण, जिसका रसायन तथा रसायनिक टेक्नालॉजी में बहुत

महत्वपूर्ण स्थान है, का नाम द्रव्यमान स्पेक्ट्रोग्राफ़ है (चौथी पुस्तक), हालांकि, वस्तुतः, इसके द्वारा आयन के आवेश तथा द्रव्यमान का अनुपात ज्ञात किया जाता है।

इलेक्ट्रोन किरण-पुंज

हम अब इतिहास के उस टेढ़े-मेढ़े मार्ग पर नहीं चलेंगे, जिस पर चलकर भौतिकतज्ञ इस दृढ़ निष्कर्ष पर पहुंचे कि न केवल विद्युत का लघुत्तम भाग होता है, बल्कि यह कि इस भाग का एक भौतिक वाहक है जो इलेक्ट्रॉन कहलाता है। अब हम स्कूलों में दिखाये जाने वाले एक प्रयोग के बारे में बतलाएंगे।

इस प्रयोग में प्रयुक्त होने वाला उपकरण किसी समय में कैथोड-किरण नलिका कहलाती थी। अब इसका नाम है – इलेक्ट्रॉन-किरण नलिका, या इलेक्ट्रॉन गन, या दोलनलेखी (oscillograph)। यदि आपकी स्कूल समाप्त किये काफ़ी समय बीत गया है और इस उपकरण से अवगत नहीं है तो इसमें निराश होने की कोई बात नहीं है। आप इलेक्ट्रॉन-किरण नलिका से तो काफ़ी अच्छी तरह परिचित हैं ही – यह आपके दूरदर्शन यंत्र का मुख्य भाग है। दूरदर्शन यंत्र की स्क्रीन पर इलेक्ट्रॉन किरण-पुंज तरह-तरह की तस्वीरें बनाता है, जिन्हें देखकर कभी-कभी तो आप आनन्द लेते हैं, और जिन्हें कभी आप समय व्यतीत करने के लिये देखते हैं।
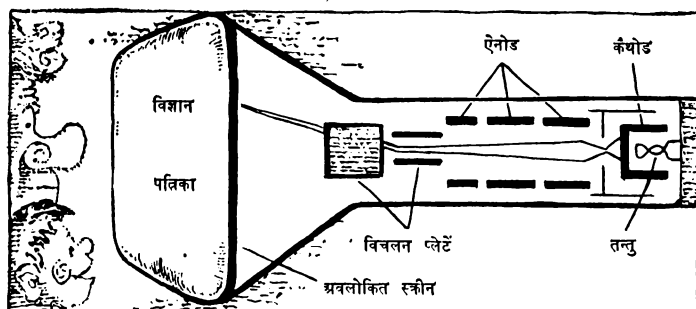
चित्र 2.1

आइये, अब हम स्कूल के प्रयोग पर लौट आयें। नलिका का आरेख चित्र 2.1 में दिया गया है। यह नलिका आदर्श रूप से ख़ाली कर दी गई है, इस में विनाशशील अणु बिल्कुल नहीं हैं। धारा से धात्विक तंतु (यह कैथोड कहलाता है) को गरम करके, फिर कैथोड व ऐनोड को वोल्टता के स्रोत के क्रमशः ध्रुवों से जोड़ने के बाद आप स्क्रीन पर चमकता हुआ एक बिन्दु देखेंगे। मापने वाले उपकरण की मदद से आप यह प्रमाणित कर सकते हैं कि ऐनोड से कैथोड की ओर विद्युत-धारा प्रवाहित हुई है। स्वाभाविक ही है कि यह ऐनोडी धारा कहलाएगी।

चूंकि धारा रिक्त स्थान में से प्रवाहित हुई है, तो यह निष्कर्ष किया जा सकता है कि गरम तंतु ऋणात्मक आवेशित कणों का उत्सर्जन करता है। इस परिघटना को तापिक-इलेक्ट्रानिक उत्सर्जन कहते हैं। किसी भी गरम पदार्थ में यह विशेषता विद्यमान होती है।

अब हम पाठक से छिपाएंगे नहीं कि ये कण स्वयं इलेक्ट्रॉन ही हैं। इन्हें ऐनोड की ओर निर्देशित किया जाता है जिसका रूप एक गिलास जैसा होता है और उसके तले में एक गोल छिद्र होता है। इलेक्ट्रॉन बारीक पुंज के रूप में बाहर निकलते हैं और उनका अध्ययन भी आयनों के पुंज के अध्ययन के लिये ऊपर बताई गई विधियों के द्वारा किया जा सकता है।

चमकने वाली स्क्रीन की मदद से यह विश्वास प्राप्त करने के बाद कि गरम तंतु इलेक्ट्रॉनों को निष्कासित करता है, हम विचलन प्लेटों की सहायता से आवेश और द्रव्यमान का अनुपात निश्चित करते हैं, जिसका परिणाम निम्न दिया जा रहा है: इलेक्ट्रॉन के लिये यह अनुपात सबसे हल्के आयन, अर्थात हाइड्रोजन के आयन, के अनुपात से 1840 गुना अधिक है। इससे हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि इलेक्ट्रॉन हाइड्रोजन के आयन से 1840 गुना हल्का है। इसका अर्थ यह हुआ कि इलेक्ट्रॉन का द्रव्यमान $9 \cdot 10^{-28}$ ग्रा० है।

हो सकता है पाठक अब यह कहे कि हम ज़रा तेज़ी से चल रहे हैं। क्योंकि इलेक्ट्रॉन के आवेश और द्रव्यमान के अनुपात को माप कर यह निष्कर्ष नहीं करना चाहिये कि उसका द्रव्यमान आयन के द्रव्यमान से कम है। हो सकता है कि धनात्मक आयन और इलेक्ट्रॉन के आवेश एकदम भिन्न हैं।

इलेक्ट्रॉन के आवेश तथा द्रव्यमान का अनुपात पहले गत शताब्दी के अंत में अद्वितीय भौतिकतज्ञ जोज़ेफ़ जॉन टॉमसन (१८५६–१९४०) ने निर्धारित किया। (मित्र उसे जिजी के नाम से पुकारते थे। इस छोटे नाम का, जो साहित्य में काफ़ी मिलता है, कारण यह नहीं कि अंग्रेज़ छोटे नामों को अधिक पसन्द करते हैं, बल्कि यह है कि उन दिनों एक अन्य महान भौतिकतज्ञ था जिसका उपनाम भी यही था। यह वैज्ञानिक था विलियम टॉमसन, जो अपने शोधकार्यों के कारण कुलीन वर्ग में आ गया था और लार्ड कैल्विन के नाम से प्रसिद्ध हुआ)। यह सही है कैथोड नलिका जो उसने प्रयुक्त की थी आजकल प्रयुक्त होनेवाले दोलनलेखी की तुलना में अपूर्ण थी। टॉमसन भली-भांति समझता था कि उसके माप वैद्युत आवेश की विविक्तती और विद्युत के लघुत्तम भाग की उपस्थिति केवल सम्भव ही बनाते हैं।

यह बात कितनी भी विचित्र क्यों न लगे लेकिन इसके बावजूद कि बहुत से भौतिकतज्ञों ने कैथोड तथा ऐनोड किरणों का अध्ययन किया था, ऐसे भी वैज्ञानिक थे जो इस धारणा का समर्थन करते थे कि इन किरणों की प्रकृति तरंग जैसी है। इन शोधकर्त्ताओं ने यह मानना आवश्यक नहीं समझा कि धात्विक तार, द्रव, गैस तथा निर्वात में से गुज़रने वाली धाराएं एकदम समीप सम्बन्धी हैं। वे प्रत्यक्ष प्रमाणों को प्रस्तुत करने की मांग पर डटे रहे। हम इसे अच्छी प्रकार समझते हैं कि किसी कल्पना को तथ्य में परिवर्तित करने के लिये अप्रत्यक्ष तर्क पर्याप्त नहीं हैं।

अतएव, सबसे पहले यह आवश्यक हो गया कि कण के आवेश को प्रत्यक्ष रूप से माप कर उक्त विश्वास को अधिक दृढ़ बनाया जाये। इस प्रकार के प्रयत्नों को—जो असफल नहीं थे—स्वयं टॉमसन और उसके छात्रों ने इस शताब्दी के आरम्भ में अपने दायित्व पर ले लिये। सबसे अधिक परिशुद्ध परिमाण रॉबर्ट मिलीकेन ने सन् १९०९ में किये।

मिलीकेन का प्रयोग

विद्युत की विविक्तती का विचार काफी साहसपूर्ण लगता है और अध्याय के आरम्भ में दी गई विधि द्वारा मूल आवेश को मापने की

क्रिया को अन्य प्रकार भी व्यक्त किया जा सकता है। उदाहरणतया हम ऐसे भी तो कह सकते हैं कि धनायन वास्तव में होते हैं, तथा ऋणात्मक विद्युत एक द्रव है जो धनात्मक आयन की ओर आकृष्ट होता है। एक आयन इस द्रव का एक भाग ले लेता है दूसरा आयन—दूसरा भाग और प्रयोग से एक औसत मान प्राप्त होता है। यह काफ़ी सही तर्क है।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, टॉम्सन के प्रयोगों का इलेक्ट्रॉन की विद्यमानता सिद्ध करने में काफ़ी महत्व था लेकिन वे अन्तिम प्रमाण नहीं थे। इसलिए यह सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है कि भौतिकी के लिये निम्न प्रयोग का कितना महत्व था: इस प्रयोग ने विद्युत के मूल आवेश की उपस्थिति इतनी स्पष्टता से सिद्ध की कि हर प्रकार के शक एक तरफ़ रख दिये गये। इस प्रयोग को सन् १६०६ में अमरीकी भौतिकतज्ञ रॉबर्ट मिलीकेन ने किया था। मैं इस वैज्ञानिक के अन्य कार्यों का उल्लेख नहीं करूंगा। उसका एक कार्य ही इतना पर्याप्त था कि उसका नाम अब भौतिकी की सभी पुस्तकों में आता है।

इस अद्वितीय प्रयोग का आधार एक सरल तथ्य है। जिस प्रकार एक शीशे की छड़ में पोस्तीन से रगड़ने पर विद्युत् गुण आ जाते हैं, उसी प्रकार की ही अन्य पदार्थों की प्रकृति होती है। इस घटना को घर्षण से विद्युतीकरण कहते हैं। लेकिन ठीक-ठीक कहा जाऐ तो हम ऐसा क्यों सोचते हैं कि ये गुण केवल ठोस पदार्थों में ही हैं। यदि हम स्प्रेयर में से तेल को छिड़कें तो क्या उसका विद्युतीकरण होगा, हालांकि तेल स्प्रेयर में से बाहर आते समय घर्षण करेगा। ज्ञात होता है कि वास्तव में ऐसा ही होता है। इसे सिद्ध करने के लिये नियमानुसार हमें एक सरल उपकरण बनाना होगा: हमें तेल की फुहार क्षैतिज पर स्थित संघनित्र की प्लेटों के बीच भेजना होगा और एक सूक्ष्ममापी की मदद से तेल की बूंदों पर नज़र रखनी होगी। जब तक विद्युत क्षेत्र चालू नहीं होगा, तब तक तेल की बूंदें गुरुत्वाकर्षण बल के कारण नीचे गिरती रहेंगी। क्योंकि बूंदे काफ़ी हल्की हैं इसलिये गुरुत्वाकर्षण बल शीघ्रता से वायु के प्रतिरोध बल को बराबर कर लेगा तथा बूंदें समान रूप से नीचे गिरेंगी। लेकिन जैसे ही प्लेटों पर वोल्टता आती

है, हालत बदल जाती है। बूंद की गति या तेज़ हो जाती है या धीमी, यह विद्युत क्षेत्र की दिशा पर निर्भर करता है। मिलीकेन ने क्षेत्र की वह दिशा चुनी जिसमें बूंद की गति धीमी हो जाती है। धीरे-धीरे क्षेत्र को बढ़ाने से वह बूंद को हवा में लटकाने में सफल हो गया। एक बूंद का शोधकर्त्ता ने घंटों तक अध्ययन किया। क्षेत्र की मदद से वह उसे इच्छानुसार गति में ला सकता था या रोक सकता था।

इस प्रयोग से हम क्या निश्चित कर सकते हैं? आइये, पहले हम उन तथ्यों को देखें जो क्षेत्र की अनुपस्थिति में प्राप्त होंगे। गुरुत्वाकर्षण बल तथा वायु के प्रतिरोध बल की समानता को निम्न प्रकार लिखा जा सकता है

$$mg = av$$

तेल का घनत्व पृथक प्रयोगों द्वारा निश्चित किया जा सकता है तथा बूंद का व्यास सूक्ष्ममापी द्वारा मालूम हो सकता है। इस प्रकार, बंद का द्रव्यमान बिना कठिनाई के ज्ञात हो सकता है। चूंकि बूंद धीरे-धीरे नीचे गिरती है तो सूक्ष्मदर्शी के शीशे पर चिन्ह लगा कर हम समयमापी की सहायता से बूंद के गिरने की गति v ज्ञात कर सकते हैं। फिर ऊपर दिये गये समीकरण द्वारा हम प्रतिरोध गुणांक a मालूम कर सकते हैं।

आइये, अब हम क्षेत्र चालू करते हैं। सबसे अच्छा रहेगा यदि हम ऐसी अवस्था प्राप्त कर लें कि बूंद ऊपर समान रूप से चढ़े। दो बलों के साथ-साथ अब एक अन्य बल भी चालू है – विद्युत-क्षेत्र का बल जिसकी वोल्टता E हमें ज्ञात ही है (वोल्टता और संघनित्र की प्लेटों के बीच की दूरी का अनुपात)। समान रूप से ऊपर उठने का अर्थ है कि तीनों बल बराबर हैं। इस संतुलन का रूप निम्न होगा :

$$qE - mg = av'$$

गति का नया मान v' भी उसी सूक्ष्मदर्शी द्वारा निश्चित किया जाता है। इस प्रकार, अब हमें समीकरण की सभी मात्राएं ज्ञात हैं, केवल बूंद का आवेश मालूम नहीं है। इस आवेश का मान ज्ञात करके उसे नोट-बुक में लिख लेते हैं, नियमपूर्वक प्रत्येक शोधकर्त्ता के पास नोट-बुक रहती है।

अब हम मुख्य विचार तक पहुंचे हैं। मिलीकेन ने सोचा कि विद्युत्-अपघटनी में धारा के वाहक भिन्न-भिन्न चिन्हों वाले आयन हैं। लेकिन गैस में भी आयनों को बनाया जा सकता है। वायु को भिन्न-भिन्न प्रकार से आयनित किया जा सकता है। उदाहरणतया, सारे उपकरण को एक्स-किरण नलिका के पास रख सकते हैं। एक्स-किरणें वायु को आयनित कर देती हैं। यह उन दिनों में भली भांति ज्ञात था। यदि बूंद आवेशित है तो वह विपरीत चिन्हों वाले आयनों को अपनी ओर आकृष्ट करेगी। जैसे ही बूंद पर आयन आ लगेगा उसका आवेश बदल जाएगा। और जैसे ही आवेश बदलेगा, वैसे ही बूंद की गति भी बदल जाएगी, जिसे हम नए माप द्वारा एकदम ज्ञात कर सकते हैं।

अध्ययन से यह सिद्ध हुआ कि यह विचार सही है। एक्स-किरण नलिका चालू करते ही विभिन्न बूंदें प्रायः कूद कर अपनी गति बदलने लगीं। एक ही बूंद पर दृष्टि जमाये हुए शोधकर्त्ता ने एक्स-किरण नलिका को चालू करने से पूर्व और पश्चात् गति में अन्तर को मापा। ऊपर दिये गये सूत्र के अनुसार q का मान एकदम ज्ञात हो गया।

अभी तक आप नहीं समझे कि यह सब क्यों किया गया। लेकिन आप अच्छी तरह सोचिये। यदि मूल विद्युत आवेश वास्तव में है, तो मापी गई मात्राएं उसके बराबर होनी चाहिये जब बूंद के साथ एक-संयोजकता वाला आयन आ लगता है, तथा मूल आवेश की मात्रा के गुने के बराबर होनी चाहिये, यदि बूंद के साथ अनेक आयन आ लगते हैं।

तेल, जल, पारा और ग्लीसरीन की बूंदों पर प्रयोग करके, तथा बूंदों के आवेशों के चिन्हों को बदल-बदल कर मिलीकेन ने अपनी नोट-बुक q के सैकड़ों मानों से भर दी। ये सभी मान एक ही मात्रा, जो विद्युत-अपघटन के शोधकर्ताओं ने ज्ञात की थी, के गुना थे।

मिलीकेन द्वारा अपने परिणामों को प्रकाशित करने के बाद संशयवा-दियों के मन में भी इस बात का कोई संदेह नहीं रहा कि विद्युत आवेश प्रकृति में विविक्त भागों में होता है। ध्यानपूर्वक देखने पर पता लगता है कि मिलीकेन के प्रयोग भी इलेक्ट्रॉन की कण के रूप में उपस्थिति सिद्ध नहीं करते हैं।

लेकिन तथ्यों से पहले कल्पना ही आती है। विद्युत की कणिका-

प्रकृति के बारे में उन्नीसवीं शताब्दी के ग्रारम्भ में कुछ लोगों का विश्वास था। ग्रायन का ग्रावेश सर्वप्रथम सटोनी ने सन् १८९१ में निश्चित किया ग्रौर उसने ही पारिभाषिक शब्द "इलेक्ट्रॉन" प्रस्तुत किया, लेकिन उसने यह नाम कण के लिए नहीं, ग्रपितु एक-संयोजकता वाले ऋणात्मक ग्रायन के ग्रावेश के लिये चुना था। टॉमसन के प्रयोगों ने ग्रधिकांश भौतिकतज्ञों को यह मानने के लिये विवश कर दिया कि इलेक्ट्रॉन एक कण है। दरूदे ने सर्वप्रथम सुस्पष्ट रूप से यह सिद्ध किया कि इलेक्ट्रॉन एक कण है, जिसपर ऋणात्मक विद्युत का मूल ग्रावेश है।

"दिखाई" देने से इस प्रकार हमने देखा कि इलेक्ट्रॉन पहले ही प्रसिद्ध हो गया था।

इलेक्ट्रॉन की विद्यमानता के प्रत्यक्ष प्रमाण भविष्य में किये गये सूक्ष्म प्रयोगों से मिले। कणों के बारीक पुंज को स्क्रीन पर डाला जाता है ग्रौर फिर एक-एक करके गिना जाता है। चमकने वाले परदे पर प्रत्येक इलेक्ट्रॉन चमक देता है। काफ़ी समय से ग्रब चमकने वाली स्क्रीन के स्थान पर मापने के विशेष उपकरण प्रयोग किये जाते हैं जिनका नाम उनके ग्राविष्कारक के नाम पर है—गेइगेर। इस मीटर का नियम दो शब्दों में इस प्रकार है कि एक इलेक्ट्रॉन रिवाल्वर के घोड़े की भांति, धारा के शक्तिशाली ग्रावेग को ग्रारम्भ करता है जिसे ग्रासानी से नोट किया जा सकता है। इस प्रकार, भौतिकतज्ञों के लिये एक सेकंड में किसी प्रकार के जाल में ग्राये इलेक्ट्रॉनों की संख्या ज्ञात करना सम्भव है। यदि इस जाल के स्थान पर धातु का बल्ब प्रयोग किया जाए, जिसके ग्रन्दर इलेक्ट्रॉन ग्राएंगे, तो धीरे-धीरे यह बल्ब विद्युत की मात्रा से ग्रावेशित हो जाएगा जिसे पर्याप्त हो जाने पर परिशुद्धता से मापा जा सकता है। इलेक्ट्रॉन के ग्रावेश को निश्चित् करने के लिये विद्युत की मात्रा को बल्ब में ग्राने वाले इलेक्ट्रॉनों की संख्या से विभाजित किया जाता है।

केवल इसके बाद ही यह कहना सम्भव हुग्रा कि इलेक्ट्रॉन की विद्यमानता एक कल्पना नहीं है। यह एक तथ्य है।

तेज़ी से जा रही मोटरगाड़ी की रफ़्तार से हम ग्राधुनिक भौतिकी के ग्राधारभूत ग्राविष्कारों को पीछे छोड़ गये। लेकिन उनकी किस्मत

कुछ ऐसी ही होती है। नई-नई बातें पुरानी बातों को पीछे छोड़ देती हैं, और कभी-कभी तो विज्ञान के मन्दिर के निर्माण के समय घटने वाली मुख्य घटनाएं इतिहासकारों के निर्देशन में आ जाती हैं।

विद्युत क्या है? इस प्रश्न का उत्तर अब दिया जा सकता है। वैद्युत द्रव—यह वैद्युत कणों की धारा है। यदि किसी पदार्थ में एक चिन्ह वाले कणों की संख्या दूसरे चिन्ह वाले कणों की संख्या से अधिक है तो वह पदार्थ विद्युत से आवेशित है।

पाठक रोष में कहता है: "यह भी कोई परिभाषा है? विद्युत-कण क्या होता है?"

—"क्या यह स्पष्ट नहीं है? जो कण कूलॉन नियम के अनुसार परस्पर क्रिया करते हैं, विद्युत-कण कहलाते हैं।"

—"बस?", पाठक घबराहट से पूछता है।

—"हां, बस"—भौतिकतज्ञ उसको उत्तर देता है। आपके प्रश्न का उत्तर इतना ही है। लेकिन अभी भविष्य में अन्य रोचक प्रश्न के उत्तर आपको मिलेंगे। हमने अभी यह नहीं बतलाया कि धनात्मक विद्युत के मूल कणों को किन स्थितियों में देखा जा सकता है। इसी प्रकार हमें यह भी ज्ञात करना है कि विद्युत कणों के लिये आवेश तथा द्रव्यमान के अलावा और कौन-कौन से गुण लाक्षणिक हैं?

लेकिन इससे पहले हम परमाणु की संरचना का अध्ययन करेंगे।

परमाणु-मॉडल

विद्युत-कणों से परमाणु किस प्रकार बना है? इसका उत्तर हमें रेडियम द्वारा उत्सर्जित किरणों की सहायता से मिला। इस असाधारण वस्तु तथा प्राकृतिक एवं कृत्रिम रेडियोएक्टिव तत्त्वों के विशाल परिवार के बारे में हम चौथी पुस्तक में बताएंगे। अब हमें केवल यह जानना आवश्यक है कि रेडियम निर्विघ्न रूप से कठोर विद्युत-चुम्बकीय विकिरण (गामा-किरणों) इलेक्ट्रॉन-धारा (जिन्हें उन दिनों बीटा-किरणें कहा जाता था) और एल्फ़ा-किरणें, जो हीलीयम के परमाणु के दुगुने आवेशित आयन हैं; उत्सर्जित करता है।

अद्वितीय इंग्लिश भौतिकतज्ञ अर्नेस्ट रदरफर्ड (१८७१–१९३७) ने सन १९११ में परमाणु का तथाकथित ग्रहमंडलीय मॉडल प्रस्तुत किया।

वह विभिन्न पदार्थों द्वारा एल्फ़ा कणों के प्रकीर्णन के ध्यानपूर्वक अध्ययन के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचा था। रदरफर्ड ने स्वर्ण पन्नी पर प्रयोग किये जिसकी मोटाई माइक्रोमीटर का केवल एक दसवां भाग थी। यह प्रतीत हुआ कि 10000 एल्फ़ा-कणों में से केवल एक कण ही 10 डिग्री से अधिक कोण पर विचलित होता है।

इन असाधारण सरलता वाले प्रयोगों में प्रत्येक पृथक कण का मार्ग नियत किया गया था। स्पष्ट है कि आधुनिक तकनीकी की सहायता से पूर्णतया स्वचलित रूप से प्रयोगों का किया जाना सम्भव हो गया है।

अतः, एकदम समझ आ जाता है कि परमाणु मुख्यतः... रिक्तता से बने हैं। कभी-कभी सम्मुख होने वाली टक्करों को इस प्रकार समझना चाहिये: परमाणु के अन्दर धनात्मक आवेशित नाभिक होती है। नाभिक के पास इलेक्ट्रॉन स्थित होते हैं। बहुत ही हल्के होने के नाते वे एल्फ़ा-कणों के मार्ग में, महत्वपूर्ण रुकावट उत्पन्न नहीं करते हैं। इलेक्ट्रॉन एल्फ़ा-कणों की गति को कम तो कर देते हैं, लेकिन उनसे टकरा कर पृथक कण अपने मार्ग से विचलित नहीं होता है।

रदरफर्ड की यह धारणा थी कि समान रूप से आवेशित परमाणु की नाभिक और एल्फ़ा-कण की परस्पर क्रिया के बल कूलॉन बल हैं। यह मान कर कि परमाणु का द्रव्यमान उसकी नाभिक में संकेन्द्रित है, उसने एक निश्चित कोण पर कणों के विचलन की प्रायिकता ज्ञात की और सिद्धांत तथा प्रयोग का सुस्पष्ट संयोग प्राप्त किया।

भौतिकतज्ञ अनुमानित मॉडलों को प्रमाणित निम्न प्रकार करते हैं।

— क्या मॉडल प्रयोग के परिणामों का पूर्वाभास कराता है?

— हां।

— अर्थात्, क्या वह वास्तविकता को प्रतिबिम्बित करता है?

— लेकिन, आप इतनी तेजी क्यों कर रहे हैं? मॉडल अनेक परिघटनाओं को समझाता है; अतः वह अच्छा है। और उसका प्रमाण — भविष्य की बात है।

रदरफर्ड के प्रयोगों ने निम्न धारणा को भी सही प्रमाणित किया: कूलॉन बल के प्रभाव से इलेक्ट्रॉन नाभिक के समीप आते हैं।

धारणा के आधार पर कई संख्यात्मक मूल्य भी निकलते थे, जो बाद में सही प्रमाणित हुए। सबसे छोटे परमाण्वीय नाभिक का परिमाण

10^{-13} से० मी० के लगभग और परमाणु का परिमाप 10^{-8} से० मी० के लगभग ज्ञात हुआ।

परिकलनों तथा प्रयोगों के परिणामों की तुलना के फलस्वरूप परस्पर क्रिया करने वाले नाभिकों के आवेशों को निश्चित करना भी सम्भव हो गया। तत्वों की संरचना का आवर्त्त नियम समझने के लिये इन परिकलनों का यदि मुख्य नहीं तो महत्वपूर्ण योग है।

इस प्रकार परमाणु का मॉडल तैयार है। लेकिन शीघ्र ही एक प्रश्न पैदा होता है। इलेक्ट्रॉन (ऋणात्मक आवेशित कण) नाभिक (धनात्मक आवेशित) पर क्यों नहीं गिरते हैं? परमाणु स्थिर क्यों है?

पाठक कहेगा कि यहां न समझ आने वाली कोई बात नहीं है। सूर्य पर ग्रह कहां गिरते हैं? गुरुत्वाकर्षण बल की भांति विद्युत बल भी अभिकेन्द्री बल ही होता है। और नाभिक के चारों ओर इलेक्ट्रॉनों की गोल गति की व्यवस्था करता है।

लेकिन यहीं तो सारी बात है कि ग्रहमंडलीय प्रणाली तथा परमाणु की अनुरूपता केवल स्तरीय है। हमें आगे चलकर ज्ञात होगा कि विद्युत-चुम्बकीय क्षेत्र के साधारण नियमों के दृष्टिकोण से परमाणु को भी विद्युत-चुम्बकीय तरंगें उत्सर्जित करनी चाहिये। तदपि, विद्युत-चुम्बकीयता का ज्ञान आवश्यक नहीं है। पदार्थ, यानी परमाणु, में प्रकाश तथा ऊष्मा उत्सर्जित करने की क्षमता होती है। यदि यह सही है तो परमाणु की ऊर्जा की क्षति भी होती है अर्थात् इलेक्ट्रॉन को नाभिक पर गिरना चाहिये।

तो इस स्थिति से बाहर आने का उपाय क्या है? वह बहुत ही "सरल" है। तथ्यों को स्वीकार करना आवश्यक है तथा उन्हें प्रकृति के नियमों की श्रेणी में लाना होगा। सन् १९१३ में इस कार्य को वर्तमान शताब्दी के महान् भौतिकतज्ञ नीलस् बोर (१८८५–१९६२) ने किया।

ऊर्जा का क्वान्टमीकरण

सभी प्रथम कदमों की भांति यह कदम भी अपेक्षाकृत डर-डर कर उठाया गया था। हम प्रकृति के नये नियम को प्रस्तुत कर रहे हैं जिसने न केवल रदरफ़र्ड के परमाणु को बचाया, बल्कि हमें इस बात

का यकीन करवाया कि बड़े पदार्थों की यांत्रिकी कम द्रव्यमान वाले कणों पर लागू नहीं होते।

प्रकृति इस प्रकार बनी है कि आवेग का आघूर्ण तथा ऊर्जा जैसे अनेक यांत्रिकीय मात्राओं के परस्पर प्रतिक्रियाशील कणों के किसी भी विन्यास के लिये मानों की संख्या असीमित नहीं है। इसके विपरीत परमाणु, जिसके बारे में अब हम आपको बतला रहे हैं, या परमाण्वीय नाभिक, जिसकी संरचना का जिक्र हम बाद में करेंगे, ऊर्जा स्तरों का अपना क्रम रखते हैं, जो केवल इसी विन्यास के लिये विशिष्ट होता है। सबसे निम्न स्तर भी होता है—शून्य। विन्यास की ऊर्जा इस मान से कम नहीं हो सकती। परमाणु के संदर्भ में इसका अर्थ यह है कि एक ऐसी स्थिति होती है जिसमें इलेक्ट्रॉन नाभिक से कम से कम दूरी पर होता है।

परमाणु की ऊर्जा में परिवर्तन केवल कूद की भांति हो सकता है। यदि कूद "ऊपर" की ओर है तो इसका अर्थ हुआ कि परमाणु ने ऊर्जा का अवशोषण किया है। यदि कूद "नीचे" की ओर है तो परमाणु ने ऊर्जा उत्सर्जित की है।

आगे हम देखेंगे कि इन स्थितियों से विभिन्न विन्यासों के उत्सर्जन-स्पेक्ट्रमों का अर्थ किस प्रकार निश्चित किया जाता है।

इसके लिये प्राप्त किया गया नियम ऊर्जा के क्वान्टमीकरण का नियम कहलाता है। अन्य शब्दों में, ऊर्जा का स्वभाव क्वान्टमी होता है।

यह नोट करना चाहिये कि क्वान्टमीकरण नियम एक सामान्य नियम है। वह न केवल परमाणु पर लागू होता है, बल्कि अरबों परमाणुओं से बने किसी भी पदार्थ पर लागू होता है। लेकिन बड़े पदार्थों पर कार्य करते हुए हम सहजता से ऊर्जा के क्वान्टमीकरण पर ध्यान नहीं देते हैं। मोटे तौर से, बात यह है कि अरबों-ख़रबों परमाणुओं से बने पदार्थ में ऊर्जा-स्तरों की संख्या भी अरबों-खरबों बढ़ जाती है। ऊर्जा-स्तर एक-दूसरे के इतने पास स्थित होते हैं कि वास्तव में एक-दूसरे के ऊपर आ गये प्रतीत होते हैं। यही कारण है कि हम ऊर्जा के सम्भव मानों की विविक्ती नोट नहीं करते। इससे पहली पुस्तक में पढ़ाई गई यांत्रिकी बड़े पदार्थों पर बिना परिवर्तन के लागू होती है।

दूसरी पुस्तक में हमने यह कहा कि एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ पर ऊर्जा का स्थानांतरण कार्य अथवा ऊष्मा के रूप में होता है। अब हम ऊर्जा के स्थानांतरण के इन दो रूपों में विभेद का अध्ययन कर सकते हैं। यांत्रिकीय कार्य के दौरान (जैसे, दबाना) विन्यास के ऊर्जा-स्तर एक-दूसरे के अन्दर समा जाते हैं। यह समा जाना तुच्छ ही होता है तथा और बहुत ही सूक्ष्म प्रयोगों द्वारा इसे केवल तब ही देखा जा सकता है जब दबाव बहुत ही अधिक हो। जहां तक ऊष्मीय कार्यविधि का प्रश्न है तो वह है विन्यास अधिक निम्न उर्जा-स्तर से अधिक ऊंचे ऊर्जा-स्तर पर आना (गर्म होना), या अधिक ऊंचे ऊर्जा-स्तर से अधिक निम्न ऊर्जा-स्तर पर आना (ठंडा होना)।

अन्य यांत्रिकीय मात्राओं की भांति ऊर्जा का क्वान्टमीकरण प्रकृति का एक सामान्य नियम है, जिसमें से काफ़ी विभिन्न प्रकार के परिणाम निकलते हैं जो प्रयोगों द्वारा प्रमाणित होते हैं।

हो सकता है आप पूछना चाहें कि ऊर्जा का क्वान्टमीकरण क्यों होता है। इस प्रश्न का उत्तर नहीं है। प्रकृति कुछ इसी प्रकार बनी है। प्रत्येक परिभाषा विशिष्ट तथ्य से अधिक सामान्य तथ्य की पुष्टि करती है। हम एक भी ऐसा प्रमाण नहीं जानते जो इतना सामान्य हो कि उससे ऊर्जा के क्वान्टमीकरण की परिभाषा मिल सके। बेशक, हम भविष्य में ज्ञात होने वाले नियमों को नकार नहीं रहे हैं, जिनसे ऐसे प्रमाण मिलेंगे जो क्वान्टमीकरण नियमों का आधार होंगे। लेकिन चाहे जो भी हो, आज क्वान्टमीकरण नियम प्रकृति के उन चन्द महान् नियमों में से एक है जिसे तर्क पर आधारित परिभाषा नहीं चाहिये। ऊर्जा का क्वान्टमीकरण होता है क्योंकि ऊर्जा का क्वान्टमीकरण... होता है।

इस सामान्य रूप में इस नियम को सन १९२५–२७ में अपने कार्यों के आधार पर फ़्रांसीसी भौतिकतज्ञ लुई दे ब्रोईल, जर्मन भौतिकतज्ञ एरविन श्रेडिन्गेर और वर्नर गेज़ेन्बर्ग ने निर्धारित किया। क्वान्टमीकरण नियम (हां, यहां मैं आपको बतलाना भूल गया कि हिन्दी भाषा में "क्वान्ट" का अर्थ है भाग, अंश) के आधार पर किया जाने वाला सिद्धांत क्वान्टमी या तरंगी यांत्रिकी कहलाता है। तरंगी क्यों? इसके बारे में आपको बाद में बतलाएंगे।

मेन्देलियेव का आवर्त्त-नियम

सन् १८६८ में महान रूसी रसायनज्ञ दिमित्री मेन्देलियेव (१८३४–१९०७) ने स्वयं खोजे गये रासायनिक तत्वों के आवर्त्त-नियम को प्रकाशित किया। यहां हम मेन्देलियेव की सारणी नहीं देंगे, क्योंकि पाठक उसे स्कूल की रसायन पाठ्य-पुस्तक में देख सकता है। यह स्मरण रहे कि उन दिनों ज्ञात तत्वों को उनके परमाणु भार के क्रम में रख कर मेन्देलियेव ने यह नोट किया कि तत्वों के रासायनिक गुण तथा उनके कई भौतिक गुण परमाणु भार के आधार पर आवर्त्त रूप से बदलते हैं।

मेन्देलियेव की तालिका में प्रत्येक तत्व नौ ग्रुपों में से किसी एक ग्रुप में तथा सात आवर्त्तकों में से किसी एक आवर्त्तक में होता है। एक ग्रुप वाले तत्वों को मेन्देलियेव ने स्तम्भों में इस प्रकार रखा कि उनके प्रतीक एक दूसरे के नीचे इस प्रकार आयें कि तत्वों के रासायनिक गुण समान हों। ज्ञात हुआ कि इसे प्राप्त करना केवल उस स्थिति में सम्भव था, जब कुछ अन्य तत्व भी ज्ञात हों। इसलिये इन अज्ञात तत्वों के लिये तालिका में मेन्देलियेव ने "रिक्त कोष्ठक" छोड़ दिये। महान वैज्ञानिक की दूरदर्शिता ने निकेल के परमाणु को कोवाल्ट के बाद "उचित" स्थान पर रखा, हालांकि कोबाल्ट का परमाणु भार उससे काफ़ी अधिक है।

कुछ "रिक्त कोष्ठकों" की पूर्ति मेन्देलियेव के जीवन-काल में ही हो गई थी। इससे वे दुनिया भर में प्रसिद्ध हो गये क्योंकि यह सिद्ध हुआ कि तालिका की पूर्ति कोई औपचारिक कार्य नहीं है बल्कि प्रकृति के एक महान् नियम की खोज है।

तालिका में रासायनिक तत्व की क्रम-संख्या का अर्थ उस समय स्पष्ट हुआ जब वैज्ञानिकों ने रदरफ़र्ड के परमाणु का ग्रहमंडलीय मॉडल तथा ऊर्जा के क्वान्टमीकरण के नियमों के बारे में सभी सन्देह दूर कर लिये। यह अर्थ है क्या? इसका उत्तर बहुत ही सरल है: क्रम संख्या नाभिक के चारों ओर घूमने वाले इलेक्ट्रानों की संख्या के बराबर है। अन्य शब्दों में: तत्व की क्रम संख्या – उसके नाभिक का धनात्मक आवेश है जो इलेक्ट्रॉन के आवेश की इकाइयों में व्यक्त किया गया है।

मेन्देलियेव की तालिका में एक ही स्तम्भ में स्थित परमाणुओं के रासायनिक गुणों में समानता का कारण मेन्देलियेव के आवर्त्त नियम, ऊर्जा के क्वान्टमीकरण के नियम और परमाणुओं के प्रकाशिक तथा एक्स-किरण स्पेक्ट्रमों (इसके बारे में हम बाद में बतलाएंगे) की विशेषताओं के अध्ययन से स्पष्ट हो सका।

परमाणु की ऊर्जा इलेक्ट्रानों तथा नाभिक की परस्पर क्रिया की ऊर्जा है। चूंकि ऊर्जा का क्वान्टमीकरण होता है, तो तर्कसंगत होगा कि हम प्रत्येक परमाणु के इलेक्ट्रानों को ऊर्जा-स्तरों में रख दें। पहला इलेक्ट्रान नाभिक के साथ काफ़ी शक्ति से जुड़ा है, दूसरा कम शक्ति से, तीसरा और भी कम शक्ति से, इत्यादि, अर्थात् इलेक्ट्रॉन ऊर्जा की सीढ़ियों पर स्थित हैं। तर्क हमारा साथ नहीं छोड़ता है और प्रायोगिक रूप से यह तस्वीर सही सिद्ध होती है। प्रथमतः, यह ज्ञात होता है कि प्रत्येक ऊर्जा-स्तर में एक नहीं बल्कि दो इलेक्ट्रॉन हो सकते हैं। हां, यह सच है कि ये इलेक्ट्रॉन समान नहीं हैं, बल्कि "प्रचक्रण" नामक गुण द्वारा एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। यह गुण सदिश है। जो पाठक देखना अधिक पसन्द करते हैं वे इसे निम्न रूप में देख सकते हैं: एक पूर्ण स्तर पर दो "बिन्दु" हैं जिनमें से एक तीर द्वारा "ऊपर" की ओर है तथा दूसरा—"नीचे" की ओर।

स्वयं "प्रचक्रण" शब्द इस प्रकार ज्ञात हुआ। यह अर्थात् "spin" एक अंग्रेज़ी शब्द है जिसका हिन्दी में अर्थ है 'तेज़ी से घूमना"। एक ही स्तर पर स्थित दो इलेक्ट्रानों में विभेद जानने के लिये यह अनुमान कीजिए कि एक इलेक्ट्रान दक्षिणावर्त्त और दूसरा वामावर्त्त दिशाओं में अपनी धुरी पर घूम रहे हैं। इस मॉडल के बारे में परमाणु तथा ग्रहमंडलीय विन्यास में समानता से पता चला। यदि इलेक्ट्रान ग्रह की तरह ही है तो उसे उसकी धुरी पर घूमने क्यों न दिया जाए? यहां मैं फिर से पाठक को पुनः निराश करूंगा: इलेक्ट्रॉन के प्रचक्रण को देखना असम्भव है। उसे किस प्रकार मापा जा सकता है, वह मैं अगले अध्याय में बताऊंगा।

लेकिन यह एकमात्र महान् निष्कर्ष नहीं है (जिसपर हम परमाणुओं के स्पेक्ट्रमों के ध्यानपूर्वक अध्ययन के फलस्वरूप पहुंचे हैं)। दूसरा

निष्कर्ष है ऊर्जा-स्तर एक-दूसरे से समान दूरी पर नहीं हैं बल्कि कभी-कभी ग्रुपों में विभाजित भी होते हैं।

पहले स्तर के बाद जिसे हम K-स्तर कहते हैं, एक उर्जा दरार है जिसके बाद इलेक्ट्रानों का एक ग्रुप ग्राता है जिसे L से व्यक्त करते हैं, उसके बाद 18 इलेक्ट्रॉनों का ग्रुप जिसे हम M से लिखते हैं, ... लेकिन यहां हम सभी परमाणुग्रों के स्तरों व उनके पूर्ण होने के क्रम को नहीं लिखेंगे। यह तस्वीर इतनी सरल है नहीं जितनी लगती है, इसके लिये काफ़ी स्थान सी ग्रावश्यकता है। हमारी इस छोटी-सी इस पुस्तक में विवरण की ग्रावश्यकता नहीं है। मैंने स्तरों का ज़िक्र केवल इसलिये किया, ताकि ग्रापको यह समझ ग्रा जाए कि मेन्देलियेव की सारणी में एक-दूसरे के नीचे स्थित परमाणुग्रों में क्या समानता है। ज्ञात हुग्रा कि स्तर के ऊपर के ग्रुप में इलेक्ट्रॉनों की संख्या उनमें बराबर है।

ग्रब परमाणु को संयोजकता की रासायनिक धारणा भी स्पष्ट होती है। ग्रतः, लीथियम, सोडियम, पोटैशियम, रूबीडियम, सीज़ियम ग्रौर फ़्रेंसियम में स्तरों के ऊपर ग्रुपों में एक-एक इलेक्ट्रॉन है। बेरी-लियम, मैग्नीशियम, कैल्सियम, ग्रादि में दो-दो इलेक्ट्रॉन हैं। संयोजकता वाले इलेक्ट्रॉन नाभिक के साथ सबसे कम शक्ति से जुड़े होते हैं। इसलिये पहले स्तम्भ में स्थित परमाणुग्रों के ग्रायनन के फलस्वरूप सबसे ग्रासान रूप में एक ग्रावेश वाले कण बनते हैं। बेरीलियम, मैग्नीशियम ग्रादि के ग्रायनों पर दो ग्रावेश होते हैं, ग्रादि।

ग्रणुग्रों की वैद्युत संरचना

रसायनज्ञ ग्रणु को पदार्थ का छोटे से छोटा प्रतिनिधि मानते हैं। भौतिकतज्ञों के विचारों में यह केवल उस स्थिति में प्रतिनिधि हो सकता है जब वह एक पृथक् छोटे से पदार्थ के रूप में हो।

क्या साधारण लवण का ग्रणु होता है? बेशक, रसायनज्ञ कहेगा ग्रौर सूत्र भी लिख देगा: NaCl। साधारण लवण – सोडियम क्लोरोइड ही तो है। ग्रणु सोडियम के एक परमाणु तथा क्लोरीन के परमाणु से बना है। लेकिन यह उत्तर केवल ग्रौपचारिक रूप से ही

सही है। वस्तुतः, न तो साधारण लवण के क्रिस्टल में, न ही जल में उसके घोल में, न ही सोडियम क्लोरोइड की वाष्प में हमें परमाणुओं के युगल दिखाई देते हैं, जो किसी एक संपूर्ण रूप में हो। जैसे कि हमने दूसरी पुस्तक में बतलाया था कि क्रिस्टल में सोडियम के परमाणु के चारों ओर क्लोरीन के छः परमाणु हैं। ये सभी छः पड़ोसी समान हैं तथा यह नहीं कहा जा सकता कि उनमें से कौन-सा सोडियम के नियत परमाणु के साथ है।

आइये, साधारण लवण को जल में घोल दें। ज्ञात होगा कि यह घोल धारा का बहुत ही श्रेष्ठ चालक है। सूक्ष्म प्रयोगों द्वारा, जिनके बारे में हम आपको बता चुके हैं, यह सिद्ध किया जा सकता है कि विद्युत धारा क्लोरिन के ऋणात्मक आवेशित परमाणुओं की धारा है जो एक दिशा में प्रवाहित है तथा सोडियम के धनात्मक आवेशित परमाणुओं की धारा है, जो विपरीत दिशा में प्रवाहित है। अतः, घोलने के फलस्वरूप भी सोडियम तथा क्लोरिन के परमाणु पक्की तरह से जुड़ा हुआ परमाणुओं का जोड़ा नहीं बनाते हैं।

परमाणु के मॉडल के बनने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि क्लोरीन का ऋणायन क्लोरीन का परमाणु है जिसमें एक "अतिरिक्त" इलेक्ट्रॉन है; इसके विपरीत सोडियम धनायन में इलेक्ट्रॉन की "कमी" है।

क्या हम इससे यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि ठोस पदार्थ पर परमाणुओं से नहीं, बल्कि आयनों से बना होता है? हाँ, यह अनेक प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया जा चुका है, जिनका उल्लेख हम यहां नहीं करेंगे।

लेकिन सोडियम क्लोराइड की वाष्प के बारे में आपका क्या ख़्याल है? वाष्प में भी हमें कोई अणु नज़र नहीं आया। सोडियम क्लोराइड की वाष्प या आयनों से बनी है या बहुत ही अस्थायी आयनों के ग्रुपों से बनी है। आयनिक यौगिकों के अणुओं के बारे में हम केवल इस शब्द को रासायनिक अर्थ में ही प्रयुक्त कर सकते हैं।

आयनिक यौगिक अवश्य ही जल में घुलनशील हैं। ऐसे घोल, जिनके प्रसिद्ध उदाहरण सोडियम क्लोराइड जैसे धातुओं के साधारण लवण हैं, बहुत ही अच्छे चालक होते हैं और इस प्रकार तीव्र विद्युत-अपघट्य कहलाते हैं।

आइये, अब हम ऐसे पदार्थों के उदाहरणों को देखें जो वास्तविक अणुओं से बने हैं, अर्थात् अणुओं के भौतिक अर्थ में। ये हैं—आक्सीजन, नाइट्रोजन कार्बन डाइआक्साइड गैस, हाइड्रोकार्बन, कार्बोहाइड्रेट, स्टेरॉयड, विटामिन... इस सूची को काफ़ी लम्बा बनाया जा सकता है।

सभी प्रकार के वर्गीकरण किन्हीं न किन्हीं शर्तों के साथ होते हैं। इसलिये मैं पाठक को सूचित करना चाहूंगा कि कभी-कभी हमें ऐसी स्थितियों का सामना करना पड़ता है जब किसी एक ग्रुप में पदार्थ भौतिक अणुओं से बना होता है तथा अन्य में—नहीं। ऐसे पदार्थों में महत्वपूर्ण पदार्थ—जल की गिनती होती है। जल वाष्प के अणु वस्तुतः पृथक् छोटे पदार्थ हैं। लेकिन बर्फ़ के क्रिस्टल में एक अणु को "रेखांकित करना" तथा यह बतलाना कि हाइड्रोजन का यह परमाणु आक्सीजन के उस परमाणु के साथ जुड़ा है, बहुत ही कठिन है।

चाहे कैसा भी न हो, आण्विक क्रिस्टलों की श्रेणी काफ़ी विशाल है।

दूसरी पुस्तक में हमने बतलाया था कि आण्विक क्रिस्टल किस प्रकार बने होते हैं। यहां स्मरण कराना चाहते हैं कि CO_2 सूत्र वाली कार्बन डाइआक्साइड गैस के क्रिस्टल में कार्बन के परमाणु के दो बहुत ही नज़दीकी आक्सीजन के पड़ोसी हैं। शेष सभी स्थितियों में आण्विक क्रिस्टल की संरचना का अध्ययन करते हुये हम यह देखते हैं कि क्रिस्टल को परमाणुओं के बहुत ही करीब-करीब स्थित ग्रुपों में विभाजित किया जा सकता है।

यदि वे काफ़ी करीब स्थित हैं तो अर्थ यह हुआ कि उनका बल बहुत ही अधिक है। वास्तव में भी ऐसा ही है। मोटे शब्दों में, एक ही अणु के परमाणुओं को जोड़ने वाले बल पड़ोस के अणुओं के परमाणुओं पर लागू बलों से सौ, बल्कि हज़ार गुना अधिक होते हैं।

तो फिर अन्तराण्विक आबन्ध क्या है? पर्याप्त रूप से स्पष्ट है कि वैद्युत ऋणात्मक तथा धनात्मक आवेशित आयनों के आकर्षण के विचार को एक तरफ़ छोड़ना असम्भव है। क्योंकि आक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन के समान परमाणुओं से बने हुये अणु देखने में आते हैं। यह अनुमान करना असम्भव है कि एक तो इलेक्ट्रॉन को खो देता है तथा दूसरा उसे प्राप्त कर लेता है। लेकिन दो समान परमाणुओं में से एक के पास इलेक्ट्रॉन किस अधिकार से आने की ठान लेता है।

अन्तराण्विक आबन्ध के सार की परिभाषा केवल क्वान्टमी यांत्रिकी के साथ ही प्रस्तुत हुई। हमने अभी पाठक को बतलाया था कि किसी भी विन्यास की ऊर्जा का क्वान्टमीकरण होता है, तथा ऊर्जा के एक ही स्तर पर विपरीत "प्रचक्रणों" वाले दो इलेक्ट्रॉन स्थित हो सकते हैं। अब क्वान्टमी यांत्रिकी की मुख्य परिकल्पनाओं के आधार पर एक दिलचस्प बात सामने आती है। ज्ञात होता है (यह कोई परि-कल्पना नहीं है, बल्कि कठोर गणितीय निष्कर्ष है, जिसे हम उसकी जटिलता के कारण यहां नहीं दे रहे हैं) कि इलेक्ट्रॉन के लिये सम्भव ऊर्जा का न्यूनतम मान उस क्षेत्र के आकार द्वारा निश्चित होता है, जिसमें वह घूमता है। इसका आकार जितना अधिक होगा, इस "शून्य स्तर" की ऊर्जा उतनी ही कम होगी।

अब आप यह अनुमान करें कि हाइड्रोजन के दो परमाणु एक दूसरे के करीब आते हैं। यदि ये दोनों आपस में जुड़ जाते हैं तो प्रत्येक इलेक्ट्रॉन का "फ़्लैट" लगभग बड़ा हो जाएगा। एक ही फ़्लैट में विपरीत दिशाओं के प्रचक्रणों वाले दो इलेक्ट्रॉन आराम से रह सकते हैं। अतएव, ऐसा सहनिवास लाभदायक होगा। दोनों इलेक्ट्रॉनों के कार्यक्षेत्र भी काफ़ी बड़े हो गये हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि दोनों परमाणुओं के एक में जुड़ने के बाद विन्यास की ऊर्जा कम हो गई है। हमें अच्छी प्रकार ज्ञात है ही कि कोई भी विन्यास सम्भावना के अनुसार यह कोशिश करता है कि कम से कम ऊर्जा वाली स्थिति में आ जाए। इसी कारणवश पहाड़ी से लुढ़कता हुआ गोला स्वयं नीचे आ जाता है।

अतः, रासायनिक आबन्ध के बनने का अर्थ इलेक्ट्रानों का समाजी-करण होना है। कुछ ऐसे इलेक्ट्रान होते हैं (जिन्हें आन्तरिक इलेक्ट्रान कहते हैं), जो परमाणुओं के नाभिकों के इर्दगिर्द घूमते रहते हैं, तथा कुछ ऐसे इलेक्ट्रान होते हैं (जिन्हें संयोजकता इलेक्ट्रॉन कहते हैं) जो कम से कम पड़ोस के दो एक परमाणुओं को अपने वेग में घेर लेते हैं या अणु के सभी परमाणुओं में घूमते हैं।

अणुओं से बने पदार्थों को हम उनके विद्युत गुणों के आधार पर पहचानते हैं। इस प्रकार के पदार्थों के घोल में से विद्युत धारा प्रवाहित नहीं होती। अणु छोटे भागों में विभाजित नहीं होते तथा पूर्ण अणु विद्युत से उदासीन होता है। द्रवों तथा वाष्पों में अणु अपनी संरचना

को बनाये रखते हैं—परमाणुओं का संपूर्ण ग्रुप एक अटूट भाग की तरह घूमता है, प्रगति करता हुआ स्थानांतरित होता है तथा परिक्रमा करता है। एक ही अणु के परमाणु अपने संतुलन के पास केवल इधर-उधर ही जा सकते हैं।

उदासीन अणु पर विद्युत आवेश नहीं होता। लेकिन आप इस निष्कर्ष पर पहुंचने की शीघ्रता न करें कि ऐसा अणु विद्युत-क्षेत्र नहीं बनाता। जब असममित होता है तो उसके ऋणात्मक तथा धनात्मक आवेशों के आकर्षण केन्द्र शायद मिलेंगे नहीं। अन्तर्ज्ञान से स्पष्ट है कि दोनों चिन्हों के आवेशों के आकर्षण केन्द्र का मिलना ऐसे अणुओं में पाया जाएगा जैसे कि आक्सीजन या नाइट्रोजन, जो दो समान परमाणुओं से बने हैं। यह विश्वास करने में भी कठिनाई नहीं होगी कि कार्बन मोनोआक्साइड CO के अणु जैसे अणु में ये केन्द्र एक-दूसरे से थोड़ा हटे हुये होते हैं। इस प्रकार के अणुओं के बारे में कहते हैं कि उनमें द्विध्रुव आघूर्ण होता है।

इस पारिभाषिक शब्द की व्युत्पत्ति निम्न है: "द्विध्रुव" अणु का व्यवहार दो बिन्दुओं वाले आवेशों के विन्यास की तरह होता है (एक बिन्दु—ऋणात्मक आवेशों के आकर्षण का केन्द्र, दूसरा—धनात्मक आवेशों के आकर्षण का केन्द्र)। द्विध्रुव आवेशों के मान तथा द्विध्रुव के "कन्धे" अर्थात् केन्द्रों की दूरी द्वारा निश्चित होता है।

आप अब मुझ से यह प्रमाणित करने के लिये न कहिएगा कि असममित अणु में विद्युत का द्विध्रुव आघूर्ण विद्यमान है। सैद्धान्तिक बातों पर समय व्यतीत न करना आवश्यक है क्या, यदि प्रयोगों द्वारा आसानी से प्रमाणित हो सकता है कि स्थायी (या अन्य शब्दों में, कठोर) द्विध्रुव आघूर्ण एक वास्तविकता है।

परावैद्युत

परावैद्युत, धारा का अचालक तथा पृथक्कारक—एक ही धारणा के तीन नाम हैं।

आण्विक गैसें, आण्विक द्रव, अणुओं से बने हुए ठोस पदार्थों के घोल—सब परावैद्युत के उदाहरण हैं। कार्बनिक तथा अकार्बनिक (जैसे, सिलिकिट, बोरेट) कांच, बृहदणु (macromolecule)

से बने बहुलक (polymer) पदार्थ, प्लास्टिक वस्तुएं, आण्विक क्रिस्टल तथा आयनी क्रिस्टल—ये ठोस परावैद्युत कहलाते हैं।

प्रथम अध्याय में हमने पाठक को याद दिलाया था कि संघनित्र की प्लेटों के बीच में कोई भी परावैद्युत लाने पर संघनित्र की धारिता बढ़ जाती है। अब यह अनुमान कीजिए कि संघनित्र को दिष्ट धारा के स्रोत के साथ जोड़ दिया गया है। आप देखते हैं कि धारिता बढ़ गई है, हालांकि वोल्टता में कोई परिवर्तन नहीं किया गया है। इसका अर्थ यह हुआ कि संघनित्र की प्लेटों पर अतिरिक्त आवेश आ गया है। लगता है क्षेत्र की तीव्रता भी बढ़नी चाहिये। लेकिन क्षेत्र की तीव्रता नहीं बढ़ी; आपको मालूम ही है कि वह वोल्टता की प्लेटों के बीच की दूरी से विभाजित करने पर प्राप्त होने वाले भागफल के बराबर होती है। इस अन्तर्विरोध से कैसे छुटकारा पाया जाये? इसका एकमात्र उपाय है: हम यह मान लें कि पृथक्कारक में विपरीत दिशा वाला विद्युत क्षेत्र उत्पन्न हो गया है। इस परिघटना का नाम है—परावैद्युत का ध्रुवण (polarization of dielectric)।

परावैद्युत में पैदा होने वाले ये विशेष आवेश क्या हैं? पृथ्वी के अन्दर परावैद्युत के आवेश को "प्रवेश कराने" की असफलता का क्या कारण है? पदार्थ की वैद्युत संरचना के बारे में कुछ भी न जानते हुये हम यह कह सकते हैं कि ये आवेश धातु में पाये जाने वाले आवेशों की भांति स्वतंत्र नहीं हैं अपितु "सम्बन्धित" हैं। अणु की संरचना के बारे में पर्याप्त ज्ञान के आधार पर हम व्यापक रूप से ध्रुवण परिघटना का सार समझा सकते हैं तथा सभी समान स्थितियों में "विपरीतक्षेत्र", जो ε के मान के बढ़ने के साथ बढ़ता है, के बनने की क्रिया को समझा सकते हैं।

सबसे पहले हमें यह जानना चाहिये कि परमाणु तथा अणु पर विद्युत क्षेत्र का क्या प्रभाव होता है। विद्युत क्षेत्र के प्रभाव के कारण-वश् उदासीन परमाणु और आयन के इलेक्ट्रॉन क्षेत्र की विपरीत दिशा में सरक जाते हैं। परमाणु या आयन द्विध्रुव में परिवर्तित हो जाता है और विपरीत दिशा वाला क्षेत्र बनाता है। इस प्रकार किसी पदार्थ का ध्रुवण उन परमाणुओं, आयनों या अणुओं के ध्रुवण पर निर्भर करता है जिनसे वह पदार्थ बना है।

ध्रुवण की क्रिया, जिसका हमने अभी वर्णन किया है, मृदु द्विध्रुव क्रिया कहलाती है। यदि क्षेत्र अनुपस्थित है तो द्विध्रुव भी पैदा नहीं होगा। क्षेत्र जितना अधिक होगा, उतना ही अधिक इलेक्ट्रॉनों के गुरुत्वकेन्द्रों का परस्पर स्थानांतरण होगा, अर्थात् उतना ही अधिक "बनने वाला" द्विध्रुव का आघूर्ण होगा; अतः उतना ही अधिक ध्रुवण होगा।

मृदु द्विध्रुवों का बनना तापमान पर निर्भर नहीं करता। प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया जा चुका है कि ऐसे द्विध्रुव होते हैं जिनपर तापमान प्रभाव नहीं डालता। इसका अर्थ यह हुआ कि ऊपर दी गई क्रिया सही है।

लेकिन उन स्थितियों में हम क्या करेंगे, जब परावैद्युत चुबंकशीलता की तापमान पर निर्भरता स्पष्ट होती है? आण्विक संरचना और विद्युत क्षेत्र में पदार्थ की प्रकृति के सम्बन्ध पर किये गये परिशुद्ध प्रयोगों तथा इसके साथ ही तापमानी निर्भरता ε के अध्ययन (तापमान के बढ़ने से ध्रुवण हमेशा कम हो जाता है) के आधार पर हम निम्न निष्कर्ष पर पहुंचते है: यदि विद्युत क्षेत्र की अनुपस्थिति में भी अणुओं में द्विध्रुव आघूर्ण विद्यमान है ("तीव्र" द्विध्रुव) और वे अपना दिशा निर्धारण (orientation) बदल सकते हैं, तो इसका अर्थ यह हुआ कि द्विध्रुव चुंबकशीलता तापमान पर निर्भर करती है।

वस्तुतः, क्षेत्र की अनुपस्थिति में अणु "इच्छानुसार" नियत होते हैं। द्विध्रुव आघूर्ण ज्यामितीय रूप में बनते हैं। इसलिये अनेक अणुओं वाले आयतन के लिये प्राप्त होने वाला आघूर्ण शून्य के बराबर होता है। विद्युत क्षेत्र अणुओं को "बांधता" है और मुख्यतः उन्हें एक ही दिशा में नियत करता है। यहां दो बल परस्पर विरोध करते हैं: ऊष्मीय गति, जो अणुओं की स्थिति के क्रम को बिगाड़ देती है और विद्युत क्षेत्र, जो उनका क्रम बनाता है। स्पष्ट है कि तापमान जितना अधिक होगा, उतनी ही कठिनाई का सामना क्षेत्र को करना पड़ेगा अणुओं को क्रम में रखने के लिये। यहीं से निष्कर्ष निकलता है कि ऐसे पदार्थों का परावैद्युत चुंबकशीलता तापमान के कम होने पर नीचे आनी चाहिये।
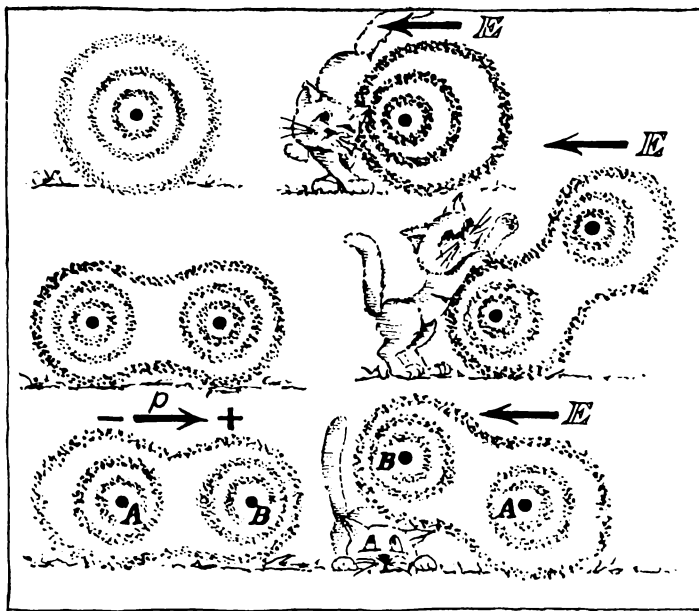
चित्र 2.2

इसे अधिक स्पष्टता से समझाने के लिये चित्र 2.2 प्रस्तुत है। ऊपर की तस्वीर में दिखाया गया है कि परमाणु का ध्रुवण इलेक्ट्रॉनी कोशों के स्थानांतरित तथा विकृत होने का कारण है। परमाणु से इलेक्ट्रॉन जितनी अधिक दूरी पर स्थित होगा, उतना ही अधिक उस पर क्षेत्र का प्रभाव होगा। इन आरेख-रूपी तस्वीरों में बिन्दुओं द्वारा बनी रेखाएं इलेक्ट्रॉन की स्थितियों को सूचित करती हैं। यह कहना आवश्यक है कि ये तस्वीरें महज सापेक्ष हैं, क्योंकि अणुओं में विभिन्न इलेक्ट्रॉनों की विभिन्न स्थितियां होती हैं। (दे० पृ० ११९)

मध्य की तस्वीर में सममित द्विपरमाणुक अणु दिखाया गया है। क्षेत्र की अनुपस्थिति में उसमें आघूर्ण विद्यमान नहीं है। क्षेत्र ही विद्युत आघूर्ण बनाता है। उसका मान विभिन्न हो सकता है तथा यह इस बात पर निर्भर करता है कि अणु की स्थिति क्षेत्र से किस कोण पर है। इलेक्ट्रॉनी कोशों की विकृति के फलस्वरूप ही आघूर्ण बनते हैं।

अंत में, नीचे के आरेख में क्षेत्र की अनुपस्थिति में और द्विध्रुव की विद्यमानता वाले अणु की प्रकृति दिखाई गई है। हमारे आरेख में अणु केवल उलटा हो गया है। क्षेत्र की अनुपस्थिति में आघूर्ण वाले अणुओं से बने पदार्थों में साधारणतया ध्रुवण की दोनों क्रियाएं देखने को मिलेंगी : अणुओं के उलटने के साथ-साथ ही इलेक्ट्रॉनों का स्थानांतरण हो सकता है। इन दोनों क्रियाओं को पृथक् किया जाता है। इसकी निम्न विधि है: बहुत ही कम तापमान पर, जब उष्मीय गति का प्रभाव नगण्य होता है, सब माप ले लिये जाते हैं।

यदि यह मॉडल सही है तो ऐसे पदार्थों में चुम्बकशीलता की ताप-मान पर निर्भरता देखने को नहीं मिलेगी जिनके अणु सममित हैं, जैसे उदाहरणतया आक्सीजन या क्लोरीन के अणु। यदि द्विपरमाणुक दो विभिन्न परमाणुओं से बना है, जैसे, उदाहरणतया, कार्बन मोनो-आक्साइड का अणु, तो इस स्थिति में ε की तापमान पर निर्भरता अवश्य ही देखने को मिलेगी। और वास्तव में ऐसा ही होता है। बहुत ही अधिक द्विध्रुव आघूर्ण वाले अणु का उदाहरण है—नाइट्रोबेन्ज़ीन।

विद्युत क्षेत्र E के बढ़ने का साधारण परावैद्युत पर क्या प्रभाव होगा? स्पष्ट है कि पदार्थ का ध्रुवण बढ़ना चाहिये। यह द्विध्रुवों के खिंचने के फलस्वरूप होगा: परमाणु में यह नाभिक के अनुपात में इलेक्ट्रॉनी अभ्र का सरकना होता है; अणु में यह दो आयनों का एक दूसरे से दूर होना हो सकता है। जैसा भी क्यों न हो, यह प्रश्न स्वाभाविक है: क्षेत्र द्वारा नाभिक से काफ़ी दूरी तक खींचा गया इलेक्ट्रॉन कब तक उसी परमाणु का इलेक्ट्रॉन बना रहता है या दो आयन एक दूसरे से काफ़ी दूरी पर स्थित होने पर भी उसी अणु की संरचना कब तक करते रहते है? निस्संदेह, इसकी एक सीमा है। पर्याप्त तीव्रता E के बाद तथाकथित परावैद्युत भंग हो जाता है (dielectric break-down) इस प्रकार की तीव्रता कई हज़ार किलोवोल्ट प्रति मीटर के बराबर होती है। किसी भी स्थिति में भंग का संबंध इलेक्ट्रॉनों या आयनों के स्वतंत्र हो जाने से, अर्थात् धारा के स्वतंत्र वाहकों के बनने से होता है। परावैद्युत अब परावैद्युत नहीं रहती है और उसमें धारा का प्रवाह आरम्भ हो जाता है।

भंग होने की परिघटना को सामान्यतः उस समय देखा जा सकता
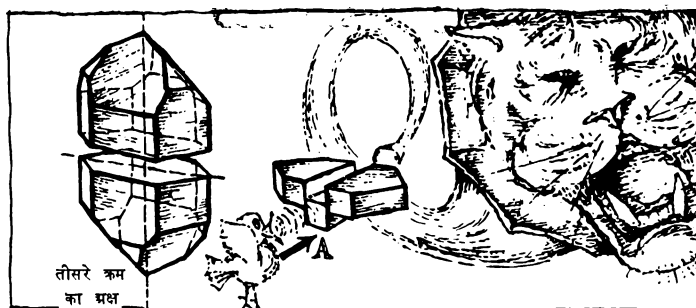
चित्र 2.3

है जब दूरदर्शन-यंत्र या रेडियो सेट में संघनित्र कार्य करना बंद कर देता है। हमें इसके अलावा भंग के अन्य उदाहरण भी ज्ञात हैं: गैसों में विद्युत का विसर्जन। गैसों में विद्युत विसर्जन के बारे में हम विशेष रूप से बतलाएंगे। और अब परावैद्युत परिवार के दो महत्वपूर्ण सदस्यों– दाब वैद्युत तथा लोह-वैद्युत–को देखें।

दाब विद्युत श्रेणी का मुख्य प्रतिनिधि स्फटिक है। इस श्रेणी के सदस्य (इनमें स्फटिक के अलावा शर्करा और तुरमली आते हैं) एक निश्चित सममिति रखते हैं। चित्र 2.3 में स्फटिक का क्रिस्टल दिखाया गया है।

इस क्रिस्टल का मुख्य अक्ष तीसरे क्रम का सममिति अक्ष है। अभिलम्ब समतल पर दूसरे क्रम के तीन अक्ष हैं।

चित्र में दिखाई गई विधि के अनुसार क्रिस्टल में से 2 से० मी० के लगभग मोटी प्लेट काट ली जाती है। हम देखते हैं कि वह मुख्य अक्ष पर लम्ब बनाती है और दूसरे क्रम के अक्ष उसके समतल पर ही स्थित हैं। इसके बाद इस मोटी प्लेट में से दूसरे क्रम के किसी एक अक्ष पर अभिलम्ब एक महीन प्लेट, जिसकी मोटाई लगभग 0.5 मि० मि० हो, काट ली जाती है। इस प्रकार प्राप्त हुई महीन दाब विद्युत प्लेट (चित्र में वह दायीं ओर नीचे को सरका दी गई है) की सहायता से मनोरंजक प्रयोग किये जा सकते हैं।

आइये, सममिति अक्षों पर अभिलम्ब A दिशा की ओर इस

प्लेट को दबायें तथा प्लेट के पक्ष के समतलों को विद्युतमापी के साथ जोड़ दें जिसकी मदद से विद्युत आवेश की उपस्थिति ज्ञात होती है (विद्युत सम्पर्क बनाने के लिये इन समतलों पर चांदी का मुलम्मा चढ़ाना आवश्यक)। आप देखेंगे कि दाब के प्रभाव से प्लेट के किनारों पर विपरीत चिन्ह् वाले आवेश पैदा हो जाते हैं। यदि दबाने के स्थान पर आप खींचना शुरू कर दें तो देखेंगे कि आवेशों के चिन्ह् बदल जाते हैं: जहां, दबाने पर धनात्मक आवेश था, खींचने पर ऋणात्मक आवेश बन जाता है; तथा जहां ऋणात्मक आवेश था – वहां धनात्मक आवेश हो जाता है। इस परिघटना का – दाब या खींचने के फलस्वरूप विद्युत आवेश का उत्पन्न होना – नाम दाब विद्युत रखा गया।

दाब-स्फटिक उपकरण बहुत ही संवेदनशील होते हैं। विद्युत उपकरणों की मदद से हम स्फटिक पर न्यूनतम सम्भव दाब द्वारा बनने वाले उन आवेशों को माप सकते हैं जिन्हें हम किसी अन्य प्रकार से नहीं माप सकते। इसी प्रकार दाब-स्फटिक द्वारा दाब में बहुत ही तेज़ी से होने वाले परिवर्तनों को मापा जा सकता है, जिन्हें अन्य किसी भी प्रकार मापना असम्भव है। इस प्रकार ऊपर बताई गई परिघटना का बहुत ही अधिक व्यावहारिक महत्व है क्योंकि इसे हर प्रकार की यांत्रिक क्रियाओं, ध्वनि सहित, का पंजीकरण करने की विधि के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। आप यदि दाब-स्फटिक यंत्र पर बहुत ही हल्के-से फूंक मारे, तो भी विद्युत यंत्र की सूई हिल जाएगी।

दाब-स्फटिक प्लेटों का उपयोग चिकित्सा जगत् में भी किया जाता है – इन्सान के दिल की धड़कनें इसी की मदद से सुनी जाती हैं। इसी प्रकार इनका तकनीकी क्षेत्रों में प्रयोग किया जाता है: मशीनों का कार्य देखने के लिये, कि कहीं कोई "संदेहपूर्ण" ध्वनि तो सुनाई नहीं दे रही है।

दाब विद्युत प्रभाव के स्रोत स्फटिक को ग्रामोफोन में दाब वैद्युत उद्ग्राही (piezoelectric pick-up) के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। रिकार्ड की धारी में चलने वाली सूई दाब-क्रिस्टल पर दाब डालती है और वह फिर अपनी बारी में विद्युत संकेत भेजता है। विद्युत-धारा तीव्र हो जाती है और लाउडस्पीकर पर आ गिरती है तथा ध्वनि में परिवर्तित हो जाती है।

अभी तक हम उन वस्तुओं की बात कर रहे थे जिनका विद्युत ध्रुवण विद्युत क्षेत्र के द्वारा तथा (कभी-कभी) यांत्रिकी विकृति के फलस्वरूप भी बनता है। यदि बाहरी प्रभाव को नष्ट कर दिया जाए तो पदार्थ उदासीन हो जाता है। लेकिन इस भली-भांति ज्ञात प्रकृति के साथ-साथ ऐसी विशेष वस्तुओं से भी सामना होता है जिनमें बाहरी बल की अनुपस्थिति में कुल विद्युत आघूर्ण विद्यमान होता है। स्पष्ट है कि ऐसे पदार्थ हमें द्रवों या गैसों में नहीं मिलेंगे, क्योंकि ऊष्मीय गति, क्षेत्र को क्रमबाध्य करने वाला बल जिसका विरोध नहीं कर रहा है, एकदम से द्विध्रुव अणुओं के क्रम को बिगाड़ देगा। लेकिन ऐसे क्रिस्टलों की कल्पना की जा सकती है जिनमें परमाणुओं की स्थिति इस प्रकार है कि प्रत्येक मूल कोश में धनायनों तथा ऋणायनों के गुरुत्व-केन्द्र समान रूप से स्थानांतरित हैं, इस स्थिति में सभी द्विध्रुव आघूर्णों की दिशा एक ही है। यहां ध्रुवण की सम्भव अधिकतम सीमा देखी जा सकती थी अर्थात् परावैद्युत चुंबकशीलता का बहुत ही अधिक मान देखा जा सकता था।

ऐसे क्रिस्टल देखने में अवश्य ही आते हैं। इस परिघटना को सबसे पहले लोह लवणों के क्रिस्टलों पर देखा गया और इसी कारणवश् इसका नाम रखा गया लोह वैद्युत।

लोह वैद्युत में बेरियम टाइटेनेट का बहुत ही अधिक व्यावहारिक महत्व है। पदार्थों की इस श्रेणी के अद्वितीय व्यावहार का अध्ययन अब हम इसी को उदाहरण के रूप में प्रयोग करके करेंगे।

क्रिस्टल का मूल कोश चित्र 2.4 में दिखाया गया है। कोश की चोटी बेरियम के परमाणुओं में ली गई है। छोटे चमकते हुये गोले आक्सीजन के धनायन है, और केन्द्र में बड़ा गोला टाइटेनियम का ऋणायन है।

चित्र 2.4

चित्र से ऐसा प्रतीत होता है कि कोश घन जैसा है।
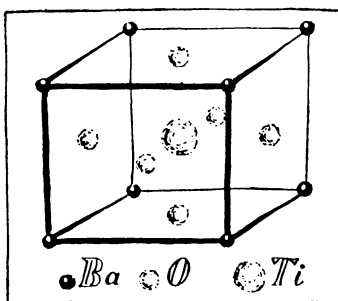
एकदम घन जैसा कोश वास्तव में होता है, लेकिन केवल जब तापमान 120°C से अधिक हो। स्पष्ट है कि घन जैसा कोश सममित होगा तथा उसमें द्विध्रुव आघूर्ण नहीं हो सकता। इसलिये इस तापमान से ऊपर, जिसे क्यूरी तापांक कहते हैं, बेरियम टाइटेनेट के विशेष गुण नष्ट हो जाते हैं। इस तापमान के ऊपर वह साधारण परावैद्युत की भांति व्यवहार करता है।

120°C से नीचे तापमान पर आक्सीजन तथा टाइटेनियम के आयन लगभग 0.1 एंगस्ट्रेम तक विपरीत दिशाओं में हट जाते हैं। कोश मे द्विध्रुव आघूर्ण पैदा हो जाता है।

अब आप निम्न महत्वपूर्ण स्थिति पर ध्यान दें। यह सरकना समान रूप से तीन दिशाओं में हो सकता था—घन के तीन अक्षों के साथ-साथ। सरकने के कारण कोश की आकृति विकृत हो जाती है। इसलिये एक ही दिशा में स्थित द्विध्रुव आघूर्ण वाले क्रिस्टलों को भागों में तोड़ना हमेशा लाभदायक नहीं होता।

चित्र 2.5 में क्रिस्टलों का आदर्श ध्रुवण भागों में तोड़ने की सम्भावना दिखाई गई है (इन भागों को डोमेन कहते हैं)। उस स्थिति के साथ-साथ जब संपूर्ण क्रिस्टल एक ही डोमेन होता है, यानी अधिकतम विद्युत क्षेत्र की स्थिति के साथ-साथ, कम लाभदायक स्थितियां भी सम्भव हैं, यहां तक कि, अंत में, ऐसी स्थितियां भी सम्भव हैं (एकदम दायां चित्र) जब बाहरी क्षेत्र का प्रभाव शून्य के बराबर होता है।
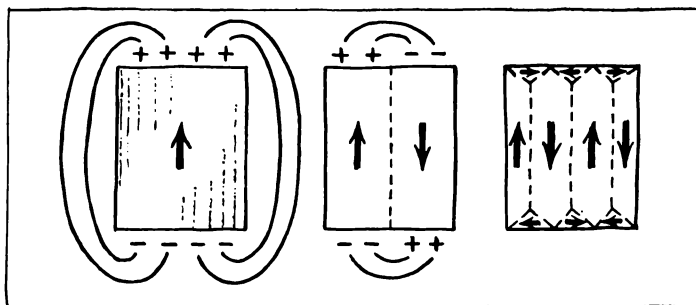
चित्र 2.5

बाहरी विद्युत क्षेत्र के प्रभाव में लोह वैद्युत का व्यवहार कैसा होता है? ज्ञात होता है कि ध्रुवण की क्रिया डोमेन के बढ़ने में होती है, जिसकी "निश्चित" दिशा होती है तथा सीमा भी बदल जाती है। क्षेत्र से न्यून कोण पर स्थित ग्राघूर्ण वाले डोमेन क्षेत्र से अधिक कोण पर स्थित डोमेनों को "खा" जाते हैं। बहुत ही बड़े क्षेत्रों में डोमेनों का उलटना भी देखा जा सकता है।

बेरियम टाइटेनेट मुख्य औद्योगिक लोह वैद्युत है। यह दो पाउडरों को जलाने के फलस्वरूप प्राप्त होता है—टाइटेनियम डाइग्राक्साइड और बेरियम कार्बोनेट। एक प्रकार की मृत्तिका प्राप्त होती है।

मृत्तिका-लोह वैद्युत को विस्तृत रूप से वैद्युत-तकनीकी तथा रेडियो-तकनीकी में प्रयोग किया जाता है। संघनित्रों की परावैद्युत चुंबकशीलता को वे एकदम से बढ़ा देते हैं तो क्या हुआ। जैसा कि हमें ध्रुवण की क्रिया के वर्णन से ज्ञात हुआ इन पदार्थों में ε के मान विद्युत क्षेत्र की तीव्रता के बढ़ने के साथ बढ़ेंगे। संघनित्र "वैरीकैप" में परिवर्तित हो जाता है—प्रत्यावर्त्ती संघनित्र जिसकी मदद से बहुत ही सरलता से ग्रावृत्ति-मॉडुलन किया जाता है। यह क्रिया सभी रेडियो-सेटों तथा दूरदर्शन-यंत्रों में होती है।

अनेक स्थितियों में लोह वैद्युत मृत्तिका स्फटिक का विस्थापन कर देती है। इसकी मदद से अधिक शक्तिशाली ध्वनि निकाली जा सकती है। इसी प्रकार इस स्थिति में पराश्रव्यिकी का प्रवर्धन गुणांक अधिक ऊंचा है। रेडियो-ग्रावृत्ति का स्थायीकरण—एक ऐसा क्षेत्र है जहां स्फटिक की तुलना में कोई अन्य पदार्थ नहीं आ सकता।

विद्युत के बारे में अधिकतर अध्याय कांच या ऐबोनाइट की छड़ द्वारा पैदा होने वाले विद्युत आवेशों से शुरू होते हैं। इस परिघटना का कारण साधारणतया बताया नहीं जाता। क्यों?

सबसे पहले यह नोट करना आवश्यक है कि परावैद्युत के धर्षण के द्वारा विद्युतीकरण पृथक्कारकों के ध्रुवण के साथ, जिसके बारे में हमने आपको अभी-अभी बतलाया है, कोई सम्बन्ध (कम से कम प्रत्यक्ष रूप से) नहीं है। वस्तुतः, ध्रुवण परिघटना—यह सम्बन्धित विद्युत आवेशों का बनना है जिनकी विशेषता यह है कि उन्हें परावैद्युत से "अलग" नहीं ले जाया सकता। कांच या ऐबोनाइट पर बिल्ली

की लोम द्वारा घर्षण के फलस्वरूप पैदा होने वालेआवेश एकदम स्वतंत्र आवेश हैं तथा, बेशक, ये इलेक्ट्रॉन ही हैं।

सामान्य रूप से तस्वीर कुछ-कुछ स्पष्ट हो गई है। शायद, पृथक्कारक पर स्थित स्वतंत्र इलेक्ट्रॉनों की अल्प संख्या उसके अणुओं के साथ विभिन्न परावैद्युतों पर भिन्न-भिन्न बलों द्वारा जुड़ी है। इस-लिए यदि दो पदार्थों को एक-दूसरे के गहरे सम्पर्क में लाया जाए, तो इलेक्ट्रॉन एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ पर चले जाएंगे। विद्युतीकरण हो जाएगा। लेकिन "गहरे सम्पर्क" से हमारा अभिप्राय है सतहों का अन्तर्परमाण्वीय दूरी पर स्थित होना। चूंकि प्रकृति में परमाणु समतल नहीं होते, इसलिये घर्षण के कारण सब प्रकार के उठाव दूर हो जाते हैं और तथाकथित वास्तविक सम्पर्क का क्षेत्रफल बढ़ जाता है।

धातु, अर्धचालक और पृथक्कारक पदार्थों के किसी भी युगल में इलेक्ट्रॉन एक पदार्थ से दूसरे पर जाते हैं। केवल पृथक्कारकों का ही पूर्ण विद्युतीकरण सम्भव है, क्योंकि इनमें पैदा होने वाले आवेश उसी स्थान पर टिके रहते हैं जहां वे एक पदार्थ से दूसरे पर आए थे।

मैं यह नहीं कह सकता कि इस धारणा से काफ़ी सन्तोष मिलता है। अभी स्पष्ट नहीं है कि ऐबोनाइट, कांच और बिल्ली का लोम किस प्रकार अच्छी है। ऐसे अनेक प्रश्न पूछे जा सकते हैं जिनका उत्तर विश्वासजनक नहीं है।

गैसों की चालकता

यदि कांच की नली में गैस भरकर उसमें इलैक्ट्रोड जोड़ दिये जाएं और वोल्टता दे दी जाए तो आपके पास गैसों की चालकता का अध्ययन करने के लिए एक उपकरण बन जाएगा। यहां विविध प्रकार के पदार्थों को प्रयोग किया जा सकता है जिनमें से धारा गुज़रती है, तथा गैस का दाब और वोल्टता भी कम या अधिक की जा सकती है।

पदार्थों की विद्युत संरचना को समझने में गैसों की चालकता के अध्ययन का बहुत महत्व है। इस पर मुख्य कार्य उन्नीसवीं शताब्दी में ही किये गये थे।

चित्र 2.6 में अनेक आकारों वाली नलियां दिखाई गई हैं जिनकी मदद से वैज्ञानिकों ने उपरिलिखित परिघटनाओं का अध्ययन किया

था। चूंकि सभी प्राचीन मूर्तियां और चित्र खरीदे जा चुके हैं, इसलिये कला व्यापारियों ने अपना ध्यान प्रयोगशाला के उपकरणों की ओर दिया तथा आजकल पश्चिमी देशों की पुरावस्तु बेचने वाली दुकानों में चित्र में दिखाई गई दुर्लभ नलियों में से कोई भी नली खरीदी जा सकती है (इसमें कोई शक नहीं कि कीमत भी कम नहीं होगी)।

गैसों में धारा के प्रवाहित होने का कारण है उदासीन अणुओं का धनायनों तथा ऋणायनों में टूटना। इसके अलावा अणुओं या परमाणुओं से इलेक्ट्रॉन अलग हो सकता है। धनात्मक आवेशित आयनों के पुंज तथा विपरीत दिशा में चल रहे ऋणात्मक आवेशित आयनों और इलेक्ट्रॉनों के पुंजों द्वारा धारा बनती है।

गैस को धारा का चालक बनाने के लिये उदासीन अणुओं या परमाणुओं को आवेशित कणों में परिवर्तित करना आवश्यक है। यह क्रिया बाहरी आयोनाइज़र (ionizer) तथा गैसों के कणों के संघटन द्वारा की जा सकती है। जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है आयनन के बाहरी स्रोत हैं—परा-बैंगनी, एक्स, अंतरिक्ष तथा रेडियोऐक्टिव किरणें। इसी प्रकार, बहुत अधिक तापमान पर भी गैस का आयनन हो जाता है।

गैसों में से धारा गुज़रने के समय प्रकाश-प्रभाव भी देखने में आते हैं। संदीप्ति की प्रकृति पदार्थ, दाब तथा वोल्टता पर निर्भर करती है। इस संदीप्ति के अध्ययन का भी भौतिकी के विकास में बहुत महत्व

चित्र 2.6

5*
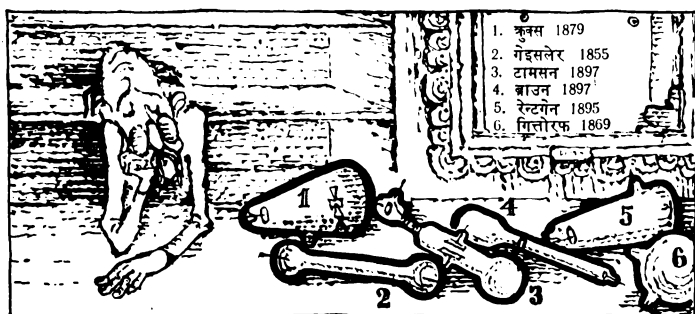
है, बल्कि ठीक-ठीक कहा जाये तो परमाण्वीय ऊर्जा के स्तरों तथा विद्युत-चुम्बकीय विसर्जन के बारे में प्राप्त की गई जानकारी का ग्राधार यही है।

गैस की चालकता पर ग्रोम का नियम लागू नहीं होता। उसके लिये धारा-बल की वोल्टता पर निर्भरता का वक्र लाक्षणिक है। इस वक्र को (गैसों के लिये ही नहीं, बल्कि उन सभी चालक विन्यासों के लिये भी जिन पर ग्रोम का नियम लागू नहीं होता) वोल्ट-ऐम्पेर विशिष्टा कहते हैं (volt ampere characteristic)।

ग्राइये, गैस-विसर्जन नलिका पर वोल्टता बढ़ाने के फलस्वरूप होने वाली सभी प्रकार की गैसों के लिये विशिष्ट परिघटनाग्रों का ग्रध्ययन करें। गैस का यह व्यवहार, जिसका वर्णन हम करने जा रहे हैं, दाब में बहुत ग्रधिक ग्रन्तर होने पर देखा जा सकता है। हम उन तुच्छ दाबों को नहीं लेंगे जिन पर ग्रणुग्रों के मुक्त पथ का परिमाप गैस-विसर्जन नलिका के परिमाप के बराबर हो जाता है। इसी प्रकार हम उन बड़े दाबों को भी एक ग्रोर छोड़ रहे हैं जिन पर गैसों का घनत्व द्रवों के घनत्व के बराबर हो जाता है।

ग्राइये, गैस-विसर्जन नलिका को थोड़ी-सी वोल्टता दें। यदि ग्रायोनाइज़र नहीं है तो नालिका में धारा का प्रवाह नहीं होगा। ग्रायोनाइज़र की उपस्थिति में गैस में ग्रावेशित कण-ग्रायन तथा इलेक्ट्रॉन—होते हैं। क्षेत्र उत्पन्न होने पर कण क्षेत्र द्वारा इलैक्ट्रोड की ग्रोर जाएंगे। इलैक्ट्रोड की ग्रोर कणों के जाने की गति ग्रनेक बातों पर निर्भर करती है जिनमें से सर्वप्रथम हैं—क्षेत्र की तीव्रता ग्रौर गैस का दाब।

दिष्ट विद्युत-बल के प्रभाव में ग्रायनों ग्रौर इलेक्ट्रॉनों की क्रमबद्ध गति ग्रव्यस्थित हो जाती है। विद्युत क्षेत्र द्वारा गतिमय किया गया कण कुछ दूरी तय करता है। इस छोटी-सी दौड़ का ग्रंत ग्रवश्य ही टक्कर से होता है। कम गति पर इस प्रकार की टक्करें प्रत्यास्थ संघट्ट के नियम (law of elastic impact) के ग्रनुसार होती हैं।

मुक्त पथ की ग्रौसत दूरी सबसे पहले गैस के दाब द्वारा निश्चित की जाती है। दाब जितना ग्रधिक होगा, मुक्त पथ भी उतना ही छोटा होगा तथा कणों की क्रमबद्ध गति की ग्रौसत रफ़्तार भी उतनी

ही कम होगी। गैस-विसर्जन नलिका पर दी गई वोल्टता इसके विपरीत कार्य करती है, अर्थात् वह कणों की क्रमबद्ध गति की औसत रफ़्तार बढ़ा देती है।

यदि नलिका पर वोल्टता न दी जाती तो नालिका में निम्न घटनाएं देखने को मिलतीं: आयोनाइज़र आयनों को बनाता, और भिन्न चिन्हों वाले आयन एक दूसरे के साथ मिलते या जैसा कहा जाता है परस्पर पुनर्गठन करते। चूंकि पुनर्गठन में कणों का युगल मिलता है, इसलिए पुनर्गठन की रफ़्तार कणों की संख्या के वर्ग के समानुपातिक होती।

आयोनाइज़र के स्थायी प्रभाव के फलस्वरूप दोनों क्रियाओं के बीच संतुलन बन जाता है। पृथ्वी के चारों ओर आयनमंडल में ऐसा ही हो रहा है। वर्ष और दिन के समय के अनुसार एक घन से० मी० में आयनित कणों की संख्या दस लाख इलेक्ट्रॉन तथा आयनों से दस करोड़ इलेक्ट्रॉन तथा आयन होती है। अतएव, आयनन की डिग्री एक प्रतिशत के लगभग होती है। (आपको स्मरण होगा कि बहुत अधिक ऊंचाई पर वायु में इकाई आयतन में कितने अणु होते हैं?)

नलिका में विद्युत वोल्टता के द्वारा आयनित गैस पर वापिस आ जायें। स्पष्ट है कि वह संतुलन को बिगाड़ देता है क्योंकि आयनों का एक हिस्सा पुनर्गठन करने से पहले ही इलैक्ट्रोडों पर पहुंच जाता है। जैसे-जैसे वोल्टता बढ़ती है वैसे-वैसे समय की इकाई में बनने वाले आयनों की और अधिक संख्या इलैक्ट्रोडों पर पहुंच जाती है। गैस में विद्युत धारा बढ़ती है। ऐसा तब तक होता रहता है जब तक पुनर्गठन के लिये समय बिल्कुल समाप्त नहीं होता; इस स्थिति में आयोनाइज़र द्वारा बनाए गए सभी आयन इलैक्ट्रोडों पर पहुंच जाते हैं। स्पष्ट है कि वोल्टता को और अधिक बढ़ाने पर धारा को नहीं बढ़ाया जा सकता (संतृप्ति धारा, चित्र 2.7)।
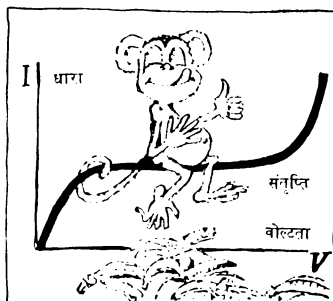
चित्र 2.7

गैस का घनत्व जितना कम

होगा उतनी ही जल्दी क्षेत्र की कम तीव्रता पर संतृप्ति धारा प्राप्त होगी।

संतृप्ति धारा का बल नलिका के आयतन में एक सेकंड में आयोनाइज़र द्वारा बनने वाले आयनों के आवेश के बराबर होता है। सामान्यतः, संतृप्ति धारा अधिक नहीं होती है—वे माइक्रोऐम्पियर या उससे कम होती है। बेशक यह मात्रा आयोनाइज़र से गैस को नष्ट करने वाले कणों की संख्या पर भी निर्भर करती है।

यदि वोल्ट-ऐम्पियर विशिष्टता के अन्तर्गत ही कार्य किया जाये और संतृप्ति धारा की सीमा में ही रहा जाये तथा गैस का बाहरी आयोनाइज़र के प्रभाव से बचाव किया जाये, तो धारा रुक जाएगी। इस स्थिति को पराधीन गैस विसर्जन कहते हैं।

वोल्टता को और अधिक बढ़ाने पर नई परिघटनाएं देखने को मिलती हैं। एक समय आता है जब इलेक्ट्रॉनों की रफ़्तार इतनी अधिक हो जाती है कि वह उदासीन परमाणुओं और अणुओं में से इलेक्ट्रॉनों को निकाल सकते हैं। नलिका पर वोल्टता इस समय इतनी होनी चाहिये कि मुक्त पथ पर इलेक्ट्रॉन अणु के आयनन के लिए पर्याप्त ऊर्जा इकट्ठी कर ले। संघट्ट आयनन का प्रभाव वोल्टता पर धारा की निर्भरता के वक्र पर भी पड़ता है: धारा बढ़ना आरम्भ करती है, क्योंकि वोल्टता के बढ़ने से इलेक्ट्रॉन की गति भी अधिक तेज़ होती है। रफ़्तार के बढ़ने के फलस्वरूप इलेक्ट्रॉन की आयनन करने की क्षमता भी बढ़ जाएकी, और इस प्रकार, आयनों के युगलों की संख्या बढ़ेगी और धारा बल भी बढ़ जाएगा। वोल्ट-एम्पियर विशिष्टता का वक्र तेज़ी से ऊपर की ओर बढ़ता है। संतृप्ति धारा की तुलना में धारा बल सैकड़ों व हज़ारों गुना बढ़ता है। गैस अवलोकित हो जाती है।

यदि अब बाहरी आयोनाइज़र का प्रभाव हटा दिया जाए तो भी धारा रुकेगी नहीं। अब हम स्वाधीन विसर्जन के क्षेत्र में आ गए हैं। यह गुणात्मक परिवर्तन जिस वोल्टता पर होता है उसे गैस विसर्जन की ज्वलन-वोल्टता कहते हैं।

इस क्रांतिक सीमा के बाद धारा का एकदम बढ़ना आवेशों की संख्या का हिमानी रूप में बढ़ने के कारण होता है। इस प्रकार बनने वाला एक इलेक्ट्रॉन उदासीन अणु को नष्ट कर के दो आवेश बनाता

है जिनकी ऊर्जा उनके मार्ग में आने वाले अन्य युगल को तोड़ने की क्षमता रखती है। इन दो आवेशों से चार आवेश प्राप्त होते है, चार से आठ... आप सहमत हो जाएंगे कि इसका 'हिमानी' नाम सही ही है।

अतः संख्यात्मक धारणा बन गई है जो पर्याप्त रूप से गैसों की वोल्ट-एम्पियर विशिष्टता का रूप बतलाती है।

स्वाधीन विसर्जन

इस विसर्जन के अनेक रूप हैं, लेकिन हम केवल कुछ का ही अध्ययन करेंगे।

स्फुलिंग विसर्जन। दो इलैक्ट्रोडों के बीच हवा में जाने वाली स्फुलिंग को सरलतम प्रयोगों द्वारा आसानी से देखा जा सकता है। इसके लिए दो तारों को, जिन पर वोल्टता हो, एक दूसरे के नज़दीक पर्याप्त दूरी पर लाना चाहिये। 'पर्याप्त' से क्या अभिप्राय है? यदि वायु की बात चल रही है तो 30 हज़ार वोल्ट प्रति से० मी० के बराबर क्षेत्र का घनत्व बनाना होगा। अर्थात् एक मि० मी० की मामूली दूरी के लिये 300 वोल्ट विभव का अंतर पर्याप्त होगा। सभी पाठकों ने हर रोज़ के काम-काज में छोटी-छोटी स्फुलिंग देखी ही होगी जब उसने सेल से निकलने वाले दो तारों को अचानक एक दूसरे से छुआ दिया होगा (यहां दाढ़ी बनाने के ब्लेड की मोटाई के बराबर की दूरी पर तारों का लाना आवश्यक है।)

ज्वलन-वोल्टता गैस के घनत्व पर निर्भर करती है। इलैक्ट्रोडों का आकार भी इसमें रोल अदा करता है।

स्फुलिंग न केवल गैस, बल्कि परावैद्युत द्रवों तथा ठोस पदार्थों को भी तोड़ती है। विद्युत-टेकनीशियन को उन सभी पदार्थों की संवि-दारण वोल्टता ज्ञात होनी चाहिये, जिन पर वह कार्य करता है।

अब हमें एकदम स्पष्ट हो गया है कि आकाश में दिखने वाले बिजली दो बादलों के बीच, जिन पर विद्युत के विपरीत चिन्हों वाले आवेश हैं, एक स्फुलिंग है। लेकिन अपने समय में भौतिकतज्ञों मिखाइल वसीलियेविच लोमोनोसोव (१७११–१७६५), बेन्ज़ेमीन फ़्रेंकलिन

(१७०६–१७६०) ने इसे सिद्ध करने के लिये सम्पूर्ण शक्ति लगा दी थी। और गियोर्ग रिखमान (१७११–१७५३), लोमोनोसोव के साथी, को तो जीवन से हाथ धोना पड़ा क्योंकि उन्होंने पतंग की पूंछ द्वारा आकाश से बिजली को ज़मीन पर लाने की कोशिश की।

बिजली के स्फुलिंग विसर्जन के बारे में काफ़ी दिलचस्प आंकड़े प्रस्तुत किये जा सकते हैं। बादलों और पृथ्वी के बीच वोल्टता $10^8 — 10^9$ वोल्ट के लगभग है, धारा बल दस ऐम्पियर से सैकड़ों – हज़ारों ऐम्पियर तक होता है, अवलोकित चैनल का व्यास 10—20 से० मी० तक होता है।

बिजली की फ़्लैश की अवधि बहुत कम – माइक्रोसेकंड के लगभग होती है। यह कहना कठिन नहीं है कि बिजली के चैनल में गुज़रने वाली विद्युत की मात्रा भी अधिक नहीं होती।

आकाश में होने वाले स्फुलिंगों का सिने कैमरों की मदद से भली-भांति अध्ययन किया जा चुका है। आम तौर से बिजली अनेक स्फुलिंग विसर्जनों का समूह होती है, जो एक ही मार्ग पर चलते हैं। बिजली में एक प्रकार का 'नेता' होता है, जो विद्युत आवेशों के लिये सबसे आसान शाखाओं में विभक्त मार्ग बनाता है।

गोलाकार बिजली भी प्रायः देखी गई है। लेकिन, अफ़सोस, कि उसे प्रयोगशाला में बनाया नहीं जा सका। ये चमकने वाले गोले 10—20 से० मी० व्यास के गैसीय प्लैज्मा होते हैं। ये धीरे-धीरे चलते हैं और कभी-कभी तो एक ही स्थान पर खड़े रहते हैं। इनकी अवधि कुछ सेकंड या मिनट ही होती है और ये विस्फोट के साथ नष्ट हो जाते हैं। इस मनोरंजक परिघटना की कोई व्यापक रूप से धारणा अभी तक प्रस्तुत नहीं की गई है।

आर्क विसर्जन। इसे सर्वप्रथम सन् १८०२ में व० व० पेतरोव ने प्राप्त किया। इसके लिये वह वोल्टता के शक्तिशाली स्रोत से जुड़े कार्बन के दो टुकड़ों को परस्पर सम्पर्क में लाया, फिर इलैक्ट्राडों को आगे-पीछे किया। यह विधि आज भी प्रचलित है। यह सच है कि आजकल विशेष कार्बन प्रयोग किये जाते हैं जिन्हें संपीडित ग्रैफ़ाइट पाउडर से बनाया जाता है। धनात्मक कार्बन ऋणात्मक कार्बन की तुलना में अधिक तेज़ी से जलता है। इसलिये आप केवल देखकर ही

बता सकते हैं कि कौन-सा कार्बन धनात्मक ध्रुव से जोड़ा गया है। इस इलैक्ट्रोड के सिरे पर एक गर्त्त बन जाएगा, अर्थात् गर्त (crater)। सामान्य दाब पर वायु में गर्त का तापमान 4000 डिग्री तक पहुंच जाता है। यदि दाब बढ़ा दिया जाए तो आर्क का तापमान 6000 डिग्री तक ले जाया जा सकता है यानी सूर्य की सतह के तापमान के बराबर। धातु के इलैक्ट्रोडों के बीच आर्क एक ज्वाला बनाती है जिसका तापमान काफ़ी कम होता है।

आर्क विसर्जन को बनाये रखने के लिये 40—50 वोल्ट के बराबर की वोल्टता चाहिये। धारा सौ ऐम्पियर के बराबर होगी क्योंकि अवलोकित गैसीय स्तम्भ का प्रतिरोध अधिक नहीं होगा।

इतने कम वोल्टता पर गैस की इतनी अधिक विद्युत-चालकता का क्या कारण है? अणु कम रफ़्तार पर इधर-उधर दौड़ते हैं और उनकी टक्करें शक्तिशाली धारा के बनने में कोई महत्वपूर्ण रोल अदा नहीं कर सकती। इसका कारण निम्न है: पहली बार सम्पर्क के स्थान पर बहुत ही तेज़ी से गर्मी का उत्सर्जन होता है। इसके फलस्वरूप तापन इलेक्ट्रॉन उत्सर्जन होता है—कैथोड इलेक्ट्रॉनों को काफ़ी बड़ी संख्या में निष्कासित करता है। यहां से यह निष्कर्ष निकलता है कि केवल कैथोड पर ही अधिक तापमान की आवश्यकता है, ऐनोड चाहे ठंडा ही रहे।

इस प्रकार के आर्क विसर्जन की क्रिया स्फुलिंग विसर्जन की तरह बिल्कुल नहीं है।

पाठक को यह स्मरण कराना आवश्यक नहीं है कि इस परिघटना का व्यावहारिक रूप से कितना महत्व है। आर्क विसर्जन का प्रयोग धातुओं के वेल्डन (welding) तथा उन्हें काटने और विद्युत-धातुकर्म में किया जाता है।

दीप्ति विसर्जन। स्वाधीन विसर्जन के इस रूप का भी व्यावहारिक रूप से काफ़ी महत्व है क्योंकि यह प्रतिदीप्ति नलिकाओं में होता है जिन्हें अन्य शब्दों में दिन की रोशनी के लैम्प (luminescent lamp) कहते हैं। नलिका की बनावट और उसमें गैस (गैस का दाब वायुमंडलीय दाब से काफ़ी कम होता है) इस प्रकार भरी जाती है कि वह ज्वलन वोल्टता से अधिक वोल्टता पर कार्य कर सके। प्रतिदी-

प्ति नलिका में विद्युत धारा इलेक्ट्रॉनों द्वारा अणुओं के आयनन तथा नलिका के कैथोड से निष्कासित इलेक्ट्रॉनों की मदद से बनती है। प्रतिदीप्ति नलिका एकदम से नहीं जलती है। इसका कारण ऐसा लगता है कि पहला धक्का उन आवेशित कणों की छोटी संख्या से मिलना चाहिये, जो किसी भी गैस में हमेशा मिलते हैं।

किरीट विसर्जन (corona discharge)। यह वायुमंडलीय दाब पर बहुत ही अधिक असमान क्षेत्र में मिलता है, जैसे तारों के पास या किसी तीक्ष्ण कोने के पास। इस स्थिति वोल्टता अधिक होनी चाहिये – दस लाख वोल्ट प्रति मीटर के लगभग। तीक्ष्ण कोने पर कौन-सा ध्रुव है – यह अर्थहीन है। इसलिये धनात्मक तथा ऋणात्मक किरीट – दोनों ही हो सकते हैं। चूंकि तीक्ष्ण कोने से दूरी पर क्षेत्र की तीव्रता कम हो जाती है, इसलिये अधिक दूरी पर किरीट एकदम लुप्त हो जाता है। किरीट विसर्जन को हम गैस के अंतराल का अपूर्ण विसर्जन कह सकते हैं। किरीट इलेक्ट्रॉनों की हिमानी से बनता है, जो या तो तीक्ष्ण कोने की ओर या उससे बाह्य आकाश में दूर चलती है। स्पष्ट है कि किरीट के क्षेत्र में इलेक्ट्रानों के अलावा – वायु के उदासीन अणुओं के टूटने के फलस्वरूप बनने वाले ऋणात्मक तथा धनात्मक आयन भी उपस्थित होते हैं। तीक्ष्ण कोने के पास केवल उसी छोटे-से क्षेत्र में किरीट अवलोकित होता, जहां इलेक्ट्रॉनी हिमानी होती है।

वायुमंडलीय अवस्थाएं और सर्वप्रथम नमी किरीट के बनने पर प्रभाव डालती हैं।

वायुमंडलीय विद्युत क्षेत्र के कारण पेड़ों, तार के खम्भों की चोटियां भी चमक सकती हैं। प्राचीन काल में इस परिघटना का नाम संत ऐल्म का प्रकाश रखा गया। इसका दिखाई देना बहुत बुरा समझा जाता था। इस बात का युक्तिमूलक कारण भी समझ आता है, चूंकि तूफ़ान, आंधी से पहले इसके दिखाई देने की काफ़ी सम्भावना होती है। अभी-अभी हाल ही में एक बहुत शिक्षाप्रद घटना घटी है। शौकीन शोधकर्ता किरलिआन दम्पति ने निम्न परिघटना का बहुत वर्षों तक अध्ययन किया। कोई भी व्यक्ति, जिसका एक हाथ बहुत ही उच्च वोल्टता के स्रोत से जुड़ा है, अपने इस हाथ को फ़ोटो-फ़िल्म पर रखता

है जिसे धारा के इस परिपथ के दूसरे इलैक्ट्रोड से पृथक्कारक द्वारा अलग कर दिया गया है। वोल्टता शुरू करने से फ़िल्म पर हथेली और उंगलियों का एक धुंधला-सा चित्र बन जाता है। चित्र के प्रकट होने का कारण किरीट विसर्जन का बनना बताया गया है। स्वाभाविक है कि यह वोल्टता उस वोल्टता से कम होनी चाहिये, जिस पर स्फुलिंग ज्वलन की सम्भावना हो।

इन प्रयोगों ने तथाकथित परा-मनोविज्ञान के विशेषज्ञों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। परा-मनोविज्ञान को अधिकतर भौतिकज्ञ तथा मनोवैज्ञानिक मिथ्या ही कहते हैं। ध्यान देने का कारण यह था कि खोजकर्ता और उनके अनुयायियों ने फ़ोटो-चित्र के स्वरूप को व्यक्ति की मानसिक दशा के साथ सम्बन्धित कर दिया था।

इन प्रयोगों की बहस के खुले प्रचार ने अमेरिका के विश्वविद्यालयों में कार्य कर रहे भौतिकतज्ञों और मनोवैज्ञानिकों के एक समूह को विवश कर दिया कि वे इस संदेहहीन तथ्य का अधिक ध्यानपूर्वक अध्ययन करें और समझाएं कि इस विधि द्वारा विभिन्न व्यक्तियों के लिये गये फ़ोटो-चित्र विभिन्न क्यों थे और अलग-अलग स्थितियों में एक ही व्यक्ति के फ़ोटो-चित्र भी वस्तुतः भिन्न क्यों थे?

शोधकर्ता निम्न निष्कर्ष पर पहुंचे कि किरलिआन विधि द्वारा प्राप्त की गई फ़ोटो वास्तव में किरीट विसर्जन के चित्र हैं जो उद्भासन (exposure) के समय होता है। चित्रों में अधिकतर स्थितियों में विभिन्नता का कारण हाथ की नमी और तंतुओं में जल की उपस्थिति है। उद्भासन के समय नमी फ़ोटो-फ़िल्म के पायस पर छा जाती है और विद्युत-क्षेत्र तथा फ़ोटो के स्वरूप को बदल देती है।

शोधकर्ताओं का अनुमान है कि भविष्य में इस विधि को, जिसे वे "किरीट विसर्जन फ़ोटोग्राफ़ी" कहना अधिक उचित समझते हैं, "सजीव और निर्जीव पदार्थों में नमी को मालूम करने तथा उसकी मात्रा निश्चित करने के लिए" प्रयुक्त किया जाएगा।

इस मनोरंजन तथ्य से, जो "Scientific American" नामक पत्रिका के दिसम्बर १९७६ के अंक में छपा था, दो निष्कर्ष निकलते हैं। सर्वप्रथम यह कि प्रत्येक यथार्थ परिघटना पर ध्यान देना चाहिये और सम्भव है कि उसका कोई व्यवहारिक उपयोग भी

हो सके। दूसरा यह कि शोधकर्ता को चाहिये कि वह ऐसे प्रलोभन में न आए जिससे वह आधुनिक वैज्ञानिक धारणाओं के आधार पर परिघटना की व्याख्या न दे पाये। केवल उसके बाद ही, जब, जैसा कि सिद्ध किया जाएगा, प्रचलित धारणाएं नई खोज को समझाने में असफल हो जाएं, अपनी खोज को विशेषज्ञों के न्यायालय में ले जाना चाहिये।

यथार्थ तथ्यों को, जिन्हें मिथ्यापूर्ण परिभाषा दे दी जाती है, पुराने चुटकुले के आधार पर "तिलचटों पर प्रयोग" कहा जा सकता है। यह चुटकुला इस प्रकार है: एक तिलचटे के पांव काट दिये जाते हैं और उसे एक मेज़ पर स्वस्थ तिलचटे के साथ रख कर मेज़ पर आवाज़ की जाती है। स्वस्थ तिलचटा भागने लगता है लेकिन अंगभंग तिलचटा अपने स्थान से ज़रा-सा भी नहीं हिलता इससे यह निष्कर्ष निकालते हैं कि तिलचटे की श्रवणशक्ति उसके पांवों में होती है।

हर साल "तिलचटों पर प्रयोग" जैसे अनेक लेख विभिन्न पत्रिकाओं में छपते हैं। इस बारे में पाठक को सावधान कर देना उचित है।

पदार्थ की प्लैज्मा अवस्था

Plasmenzustand शब्द सन् १६३६ में सबसे पहले दो जर्मन वैज्ञानिकों ने प्रयुक्त किया था जिनके लेख का इस पुस्तक के लेखक ने सोवियत पत्रिका "भौतिक, विज्ञान में प्रगति" के लिये रूसी भाषा में अनुवाद किया था। यह पारिभाषिक शब्द सही प्रतीत होता है। वस्तुतः, प्लैज़्मा न तो ठोस पदार्थ है, न द्रव है और न ही गैस है। यह पदार्थ की विशेष अवस्था है।

गैसों का तापिक आयनन, अर्थात परमाणुओं से इलैक्ट्रॉनों का भंजन और उदासीन अणु का आयनों में टूटना, 5—6 हज़ार डिग्री से अधिक तापमान पर आरम्भ होता है। तो फिर क्या हमें इस समस्या पर विचार करना चाहिये? क्योंकि प्रकृति में ऐसे पदार्थ हैं ही नहीं जो बहुत अधिक तापमान पर टिक सकें।

निस्संदेह, विचार करना ही चाहिये। अधिकतर खगोलीय पिंड, जैसे कि सूर्य, प्लैज़्मा अवस्था में हैं। प्लैज़्मा के उदाहरण के रूप में

ग्रायन मंडल को लिया जा सकता है। चुम्बकीय क्षेत्रों की मदद से, जिन्हें चुम्बकीय संरोधिकाएं भी कहते हैं, प्लैज़्मा को ग्रसीमित मात्रा में प्रयोगशाला में भी रखा जा सकता है। इसके ग्रलावा, गैस विसर्जन का प्लैज़्मा भी होता है।

गैस के ग्रायनन की सीमा तापमान पर ही नहीं, बल्कि दाब पर भी निर्भर करती है। 1 मि० मी० दाब पर तथा 30 हज़ार डिग्री तापमान पर हाइड्रोजन गैस का लगभग पूरा-पूरा ग्रायनन हो जाएगा। इन ग्रवस्थाग्रों में एक उदासीन परमाणु 20 हज़ार ग्रावेशित कणों के बराबर होता है।

हाइड्रोजन की प्लैज़्मा ग्रवस्था दो गैसों के कणों से बनती है जो ग्रव्यवस्थित रूप से एक दूसरे के साथ टकराते हुये घूमते रहते हैं। ये हैं: प्रोटॉनों की "गैस" तथा इलेक्ट्रॉनों की "गैस"। ग्रन्य पदार्थों से बना हुग्रा प्लैज़्मा बहुत-सी "गैसों" का मिश्रण होता है। उसमें इलेक्ट्रॉन, खुली नाभिक, विभिन्न ग्रायन तथा उदासीन कणों की छोटी-सी संख्या विद्यमान होती है।

हज़ारों, लाखों डिग्री तापमान वाले प्लैज़्मा को ठंडा प्लैज़्मा कहते हैं। गर्म प्लैज़्मा का तापमान की डिग्री करोड़ों में होती है।

लेकिन प्लैज़्मा के तापमान की धारणा को ध्यानपूर्वक समझना चाहिये। पाठक को ज्ञात ही है कि एकमानी रूप से तापमान कणों की गतिज ऊर्जा द्वारा निश्चित किया जाता है। भारी ग्रौर हल्के कणों से बनी गैस में संतुलन की ग्रवस्था उस समय बनती है जब भारी ग्रौर हल्के कणों की मान गतिज ऊर्जा एकसमान हो जाती है। इसका ग्रर्थ यह हुग्रा कि बहुत समय तक स्थायी ग्रवस्था में स्थित गैस में भारी कणों की गति धीमी होती है ग्रौर हल्के कणों की गति तेज़ होती है। संतुलन बनाने के लिये ग्रावश्यक समय इस बात पर निर्भर करता है कि "ग्रारम्भ में" क्या ग्रवस्था थी। लेकिन सभी समान स्थितियों में संतुलन उतनी ही देर से बनेगा जितना कणों के द्रव्यमानों में ग्रंतर ग्रधिक होगा।

यही है वह बात जो हम प्लैज़्मा की स्थिति में देखते हैं। क्योंकि इलेक्ट्रॉन ग्रौर सबसे हल्की नाभिक के द्रव्यमानों का ग्रंतर दो हज़ार गुने के लगभग है। प्रत्येक टकराव के फलस्वरूप इलेक्ट्रॉन नाभिक

या ग्रायन को ग्रपनी ऊर्जा का मात्र छोटा-सा भाग देता है। ग्रतः बहुत ही ग्रधिक बार टकराव होने के बाद ही प्लैज़्मा के सभी कणों की मान गतिज ऊर्जा समान हो पाती है। इस प्रकार के प्लैज़्मा को समतापी कहते हैं। उदाहरण के तौर पर, इस प्रकार का प्लैज़्मा सूर्य तथा ग्रन्य तारों के गर्भ में स्थित है। गर्म प्लैज़्मा में संतुलन के बनने का समय एक सेकंड के ग्रंश मात्र से सेकंडों तक होता है।

गैस विसर्जन के प्लैज़्मा (जैसे स्फुलिंग, ग्रार्क इत्यादि) की स्थिति कुछ ग्रौर ही है। यहां कण न केवल ग्रव्यवस्थित रूप से गतिशील होते हैं, बल्कि विद्युत धारा भी बनाते हैं। तेज़ी से घूमता हुग्रा इलेक्ट्रॉन धीरे-धीरे चलने वाले ग्रायनों को ग्रपनी ऊर्जा का ग्रधिक भाग देने में ग्रसफल रहता है। इसलिये गैस विसर्जन में इलेक्ट्रॉनों के घूमने की ग्रौसत चाल ग्रायनों की ग्रौसत चाल से बहुत ही ग्रधिक होती है। इस प्रकार के प्लैज़्मा को ग्रसमतापी कहते हैं ग्रौर इसके लिये दो प्रकार के (बल्कि तीन प्रकार के यदि उदासीन कणों पर भी विचार किया जाय) तापमान लाक्षणिक हैं। स्वाभाविक है कि इलेक्ट्रॉनी तापमान ग्रायनों के तापमान से कहीं ग्रधिक होगा। ग्रतः ग्रार्क विसर्जन में इलेक्ट्रॉनी तापमान 10000—100000 डिग्री के बराबर होता है ग्रौर ग्रायनी तापमान केवल 1000 डिग्री के लगभग होता है।

प्लैज़्मा में कणों की प्रकृति को व्यक्त करने के लिये उन्हीं मात्राग्रों को प्रयोग किया जा सकता है जिन्हें हम गैसों के गतिज सिद्धांत में प्रयोग करते हैं। ऐसी ग्रनेक विधियां ज्ञात कर ली गई हैं जिनकी मदद से प्रत्यक्ष या ग्रप्रत्यक्ष रूप से कणों के स्वतंत्र मार्ग की लम्बाई, स्वतंत्र मार्ग तय करने में लगा समय, विभिन्न प्रकार के कणों का संकेन्द्रण निश्चित किया जा सकता है।

हम यहां बहुत ही ग्रधिक संकेन्द्रण वाले हाइड्रोजन के प्लैज़्मा (10^{20} ग्रायन प्रति घन मीटर) की कुछ संख्याएं प्रस्तुत कर रहे हैं, ताकि पाठक को उन मात्राग्रों के बारे में थोड़ा-सा मालूम हो जाय जिनसे उसका सामना होगा। प्रतीत होता है कि ठंडे प्लैज़्मा में (तापमान – दस हज़ार डिग्री) स्वतंत्र मार्ग की लम्बाई 0.03 से० मी० के बराबर है ग्रौर यह स्वतंत्र मार्ग तय करने का समय $4 \cdot 10^{-10}$ से० के

बराबर है। यही प्लैज़्मा यदि दस करोड़ डिग्री तक गर्म किया जाये तो ऊपर दिये गये मान क्रमशः निम्न प्रकार होंगे : $3 \cdot 10^6$ से० मी० या $4 \cdot 10^{-4}$ सेकंड।

ऊपर दी गई संख्याएं प्रस्तुत करते समय हमें यह ग्रवश्य ही कहना चाहिये कि हम इलेक्ट्रॉनों ग्रौर ग्रायनों की टक्करों के बारे में बात कर रहे थे।

यह काफ़ी स्पष्ट ही है कि बहुत-से कणों वाला ग्रायतन विद्युत के प्रति उदासीन होगा। लेकिन हो सकता है हम यह जानना चाहें कि ग्राकाश में किसी एक बिन्दु पर विद्युत क्षेत्र की क्या प्रकृति होगी। वह बहुत ही शीघ्रता से ग्रौर शक्ति से बदलेगी, क्योंकि इस बिन्दु के पास कभी तो ग्रायन ग्राएंगे ग्रौर कभी इलैक्ट्रान। इस परिवर्तन की शीघ्रता मापी जा सकती है ग्रौर क्षेत्र का ग्रौसत मान भी ज्ञात किया जा सकता है। प्लैज़्मा बहुत ही परिशुद्धता से उदासीनता की शर्तें पूरी करता है। नियमानुसार हमें "ग्रर्ध-उदासीनता" शब्द प्रयुक्त करना चाहिये जिसका ग्रर्थ हुग्रा लगभग उदासीन। लेकिन इस "लगभग" से क्या ग्रभिप्राय है?

काफ़ी सरल परिकल्पना से हमें यह पता चलता है कि प्लैज़्मा के एक से० मी० के बराबर लम्बाई वाला हिस्सा लेते हैं। इस हिस्से के प्रत्येक बिन्दु पर इलेक्ट्रॉनों ग्रौर ग्रायनों का संकेन्द्रण ज्ञात करते हैं। "ग्रर्ध-उदासीनता" के ग्रर्थ के ग्रनुसार ये संकेन्द्रण "लगभग" बराबर होने चाहिये। ग्राइये, ग्रब यह ग्रनुमान करें कि एक घन से० मी० में इलेक्ट्रॉनों की "ग्रतिरिक्त" मात्रा है जो धनात्मक ग्रावेशों से उदासीन नहीं होती है। ग्राप देखेंगे कि यदि इलैक्ट्रॉनों ग्रौर ग्रायनों के संकेन्द्रणों का ग्रंतर प्रतिशत के एक ग्ररब ग्रंश के बराबर हो, तो विचाराधीन हिस्से में कणों के घनत्व पर, जो पृथ्वी की सतह पर वायु के घनत्व के बराबर हो, 1000 वो० से० मी० का क्षेत्र बन जाता है। यही है "लगभग" का ग्रर्थ।

दो चिन्हों वाले ग्रावेशों का संतुलन भी केवल न्यूनतम क्षण भर के लिये ही बिगड़ता है। बनने वाला क्षेत्र ग्रतिरिक्त कणों को बाहर फेंक देगा। यह स्वचलन एक से० मी० के हज़ारवें ग्रंश के बराबर हिस्सों पर लागू होता है।

चुम्बकीय संरोधिकाओं में स्थित प्लैज़्मा के बारे में हम चौथी पुस्तक में भी ज़िक्र करेंगे। निस्संदेह, पाठक "तोकोमाक" क़िस्म के उपकरण के नाम से या सम्भवत: उसके वर्णन से भी परिचित होगा। उसका सुधार करने के कार्य में वैज्ञानिकों का पूरा समुदाय जुटा हुआ है। बात वस्तुत: यह है कि उच्च तापमान वाले प्लैज़्मा के बनाने की सम्भावना के आधार पर हल्की परमाण्वीय नाभिकों को मिलाया जा सकता है, जिसके फलस्वरूप ऊर्जा की विशाल मात्रा का उत्सर्जन होगा। भौतिकज्ञ इस अभिक्रिया को पूर्णतया करने में बम्ब में तो सफल हो गये हैं। लेकिन क्या हमें वह प्लैज़्मा बनाने में सफलता प्राप्त होगी जिसका तापमान भी पर्याप्त हो तथा जीवन अवधि भी पर्याप्त हो ताकि परमाण्वीय रिऐक्टर में होने वाली शृंखला-अभिक्रिया जैसी शृंखला-अभिक्रिया आरम्भ हो जाये? अभी तक इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक है।

धातु

ठोस पदार्थों का उनके विद्युत प्रतिरोध के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में विभाजन इलेक्ट्रॉनों की गतिशीलता पर निर्भर करता है।

विद्युत धारा गतिशील आवेशित कणों का प्रवाह है। जब भी हम आयनों या इलेक्ट्रॉनों के प्रवाह की बात करते हैं तो हमारा अभिप्राय हमेशा विद्युत धारा से होता है। किसी द्रव में से गुज़रते समय विद्युत धारा का व्यवहार उसी प्रकार पूर्णतया स्पष्ट होता है, चूंकि इलैक्ट्रोडों पर होने वाला पदार्थ का निक्षेपण देखा जा सकता है। जहां तक ठोस पदार्थों का प्रश्न है तो उनमें से गुज़रने वाली विद्युत धारा के स्वरूप के बारे में जानकारी हम केवल अप्रत्यक्ष रूप से ही प्राप्त कर सकते हैं।

हमारे पास ऐसे अनेक तथ्य हैं जिनके आधार पर हम निम्न बातों का समर्थन कर सकते हैं। किसी भी ठोस पदार्थ में परमाण्वीय नाभिकाओं का स्थानांतरण नहीं होता। विद्युत धारा को इलेक्ट्रॉन ही बनाते हैं। धारा के स्रोत द्वारा दी जाने वाली ऊर्जा के प्रभाव से इलेक्ट्रॉन गतिशील होते हैं। यह स्रोत ठोस पदार्थ में विद्युत क्षेत्र पैदा कर देता है।

वोल्टता और विद्युत क्षेत्र की तीव्रता का सूत्र किसी भी चालक

के लिये सही है। इस प्रकार पृ० १६ और २३ पर दिये गये सूत्रों को जोड़ कर हम ठोस चालक के लिये ओम के नियम को निम्न रूप में लिख सकते हैं :

$$j = \sigma E$$

(यहां, $\sigma = 1/\rho$ विशिष्ट वैद्युत चालकता कहलाती है)।

ठोस पदार्थों के इलेक्ट्रॉनों को युग्मित और स्वतंत्र इलेक्ट्रॉनों में बांटा जा सकता हैं। युग्मित इलेक्ट्रॉन नियत परमाणुओं के साथ जुड़े होते हैं और स्वतंत्र इलेक्ट्रॉन एक प्रकार की इलेक्ट्रॉनी गैस बनाते हैं। ये इलेक्ट्रॉन ठोस पदार्थ में कहीं भी स्थित हो सकते हैं तथा इनका स्थानांतरण भी हो सकता है। विद्युत वोल्टता की अनुपस्थिति में स्वतंत्र इलेक्ट्रॉनों का क्रम अव्यवस्थित होता है। स्वतंत्र इलेक्ट्रॉनों के मार्ग में जितनी अधिक रुकावट आएगी, उतना ही अधिक वे स्थायी परमाणुओं और एक-दूसरे के साथ टकराएंगे, जिसके फलस्वरूप पदार्थ का विद्युत प्रतिरोध भी उतना ही अधिक होगा।

परावैद्युतों में अधिकतर इलेक्ट्रॉन परमाणुओं या अणुओं के साथ जुड़े हुए होते हैं। स्वतंत्र इलेक्ट्रॉनों की संख्या नगण्य होती है।

धातुओं में प्रत्येक परमाणु एक या दो इलेक्ट्रॉन सामुदायिक प्रयोग के लिये दे देता है। यही इलेक्ट्रॉनी गैस धारा का वाहक होती है।

एक बहुत ही मोटे मॉडल के आधार पर हम वैद्युत चालकता की मात्रा का अनुमान लगा सकते हैं और मॉडल की जांच कर सकते हैं।

उसी प्रकार, जिस प्रकार हमने अणुओं की गैस का अध्ययन किया था, आइये, मान लें कि प्रत्येक इलेक्ट्रॉन बगैर टकराये एक नियत दूरी तय करता है। धातु के परमाणुओं की दूरी कई एंग्स्ट्रम के बराबर होती है। इसलिये यह कहना युक्तिसंगत होगा कि इलेक्ट्रॉनों के स्वतंत्र मार्ग की दूरी 10 Å या 10^{-7} से० मी० के लगभग होनी चाहिये।

त्वरक बल eE के प्रभाव से इलेक्ट्रॉन की गति का समय l/v के बराबर है, जहां v – इलेक्ट्रॉन की चाल है। तापिक इलेक्ट्रॉनी उत्सर्जन के अध्ययन के समय प्राप्त हुए आंकड़ों के आधार पर इलेक्ट्रॉनों की अव्यवस्थित चाल ज्ञात की जा सकती है। यह चाल 10^8 से० मी० प्रति सेकंड के लगभग होगी।

इलेक्ट्रॉनों की व्यवस्थित गति की रफ़्तार मालूम करने के लिए अर्थात् धारा बनाने वाली गति की रफ़्तार ज्ञात करने के लिये त्वरण eE/m को स्वतंत्र मार्ग तय करने में लगे समय से गुणा करना चाहिये। यहां हम यह मान रहे हैं कि प्रत्येक टक्कर के कारण इलेक्ट्रॉन की गति रुक जाती है तथा वह अपनी रफ़्तार पुनः बनाता है। गुणा करने पर आपको धारा बनाने वाली गति की रफ़्तार प्राप्त होगी:

$$u = \frac{eEl}{mv}$$

अब, आइये, धातु का विशिष्ट प्रतिरोध ज्ञात करें। यदि सही मान प्राप्त होगा तो इसका अर्थ यह होगा कि हमारा मॉडल सही था।

पाठक को यह बता दें कि धारा का घनत्व j एक यूनिट आयतन में इलेक्ट्रॉनों की संख्या और इलेक्ट्रॉन के आवेश तथा व्यवस्थित रफ़्तार के गुणनफल के रूप में भी लिखा जा सकता: $j = neu$। इस सूत्र में इलेक्ट्रॉनों की व्यवस्थित रफ़्तार का मान रखने पर $j = \frac{ne^2l}{mv}E$ प्राप्त होता है, अतः विशिष्ट वैद्युत चालकता

$$\sigma = \frac{ne^2l}{mv}$$

के बराबर होगी।

यदि यह मान लिया जाए कि प्रत्येक परमाणु सामुदायिक प्रयोग के लिये एक इलेक्ट्रॉन देता है तो प्रतीत होगा कि चालक का विशिष्ट प्रतिरोध 10^{-5} ओम० मी० के लगभग है। यह मात्रा बहुत ही परिशुद्ध है। यह न केवल हमारे मोटे मॉडल को, बल्कि हमारे "सिद्धांत" की राशियों के मानों के हमारे चयन को भी सही प्रमाणित करती है। "सिद्धांत" शब्द को मैं ने दोहरे चिन्हों में इसलिये रखा है, क्योंकि अभी यह काफ़ी स्थूल और प्रारम्भिक है। लेकिन यह उदाहरण किसी परिघटना को समझाने की सामान्य भौतिक विधि को दर्शाता है।

स्वतंत्र इलेक्ट्रॉनी गैस के सिद्धांत के अनुसार तापमान के कम होने के साथ वैद्युत प्रतिरोध भी कम हो जाना चाहिये। लेकिन आप इस स्थिति को इलेक्ट्रॉनों की गति की अव्यवस्थित रफ़्तार के साथ जोड़ने में शीघ्रता न करें। यहां इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। यह

रफ़्तार तापमान पर कम निर्भर करती है। प्रतिरोध के कम होने का कारण परमाणुओं के दोलन में रुकावट का न होना है, जिसके फलस्वरूप इलेक्ट्रॉनों का स्वतंत्र मार्ग और अधिक लम्बा हो जाता है।

इसी तथ्य को निम्न शब्दों द्वारा भी व्यक्त किया जा सकता है: आयाम के बढ़ने से इलेक्ट्रॉनों के परमाणुओं के दोलनों का विभिन्न दिशाओं में अधिक डिग्री में प्रकीर्णन होता है। इसके फलस्वरूप, निस्संदेह, धारा की दिशा में रफ़्तार का बढ़ना कम ही जाएगा, अर्थात् प्रतिरोध अवश्य ही बढ़ेगा।

इलेक्ट्रॉनों के प्रकीर्णन में बढ़ोतरी अशुद्ध धातु (और न केवल धातु में ही) में प्रतिरोध के बढ़ने की सूचक है। वस्तुतः, अशुद्ध परमाणु क्रिस्टलीय संरचना में दोष पैदा करते हैं तथा अतएव इलेक्ट्रॉनों के प्रकीर्णन में सहायक होते हैं।

वैद्युत ऊर्जा तारों द्वारा दी जाती है। वैद्युत प्रतिरोध के कारण तार धारा के स्रोत से ऊर्जा एकत्र कर लेते हैं। इस प्रकार होने वाले नुकसान की मात्रा काफ़ी अधिक होती है, और इस तकनीकी समस्या का हल ढूंढ़ना अतिआवश्यक है।

लेकिन आशा है कि इस समस्या का हल निकल आएगा, क्योंकि एक विशेष परिघटना – अतिचालकता – देखने में आती है।

सन १९११ में हालैंड के भौतिकतज्ञ कैमेरलिंग-ऑनेस ने यह ज्ञात किया था कि परम शून्य के लगभग तापमान पर अनेक पदार्थ वैद्युत प्रतिरोध की विशेषता एकदम खो देते हैं। यदि अतिचालक के छल्ले में विद्युत धारा उत्तेजित कर दी जाये, तो वह बगैर कम हुए कई दिनों तक चलती रहेगी। शुद्ध धातुओं में सबसे अधिक तापमान, जिस पर अतिचालकता के गुण प्रकट होते हैं, नायोबियम का होता है (9 K)। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि वैज्ञानिकों की टीम कितनी दृढ़ता से उन अतिचालकों की खोज में संलग्न है जो और अधिक तापमान पर यह असाधारण गुण प्रकट कर सकें। अभी तक कोई विशेष सफलता प्राप्त नहीं हो सकी है। एक ऐसा ऐलाय प्राप्त किया गया है जो 20 K के लगभग तापमान पर अतिचालक बन जाता है।

लेकिन यह कहना निराधार नहीं होगा कि इस सीमा को बढ़ाया जाना चाहिए (हो सकता है, इसे सामान्य तापमान पर ले आया

जाये)। इनकी खोज विशेष बहुलक पदार्थों तथा मिश्रित पटलित वस्तुओं में की जा रही है, जिनमें परावैद्युत धातु के साथ बारी-बारी से आती है। इस समस्या का अधिमूल्यांकन नहीं किया जा सकता है। मैं साहसपूर्वक कह सकता हूं कि यह आधुनिक भौतिकी की अतिमहत्वपूर्ण समस्याओं में से एक है।

जैसे ही इस परिघटना का सिद्धांत प्रस्तुत किया गया वैसे ही पर्याप्त उच्च तापमान पर अतिचालकता के गुण प्राप्त करने वाले अतिचालकों की खोज पर किये गये कार्यों ने महत्व हासिल किया। सिद्धांत ने आवश्यक वस्तुओं को खोज निकालने का मार्ग दिखाया।

यह सही है कि परिघटना की खोज तथा उसको समझाने के बीच काफ़ी बड़े समय का अंतर है। इस सिद्धांत को १९५७ में प्रस्तुत किया गया। यह नोट करना आवश्यक है कि क्वान्टमी भौतिकी के नियम, जिनकी मदद से अतिचालकता सिद्धांत प्रस्तुत किया जा सका, सन् १९२६ में ही ज्ञात कर लिये गये थे। इससे स्पष्ट होता है कि परिघटना को समझना बिल्कुल भी सरल नहीं था। इस पुस्तक में मैं आपको तथाकथित इतिहास के मध्य से ही समझाना शुरू कर सकता हूं। प्रतीत होता है कि परमाण्वीय जाली के दोलन की चाल धीमी हो जाने के कारण कुछ इलेक्ट्रॉन "जोड़े बनाने में" सफल हो जाते हैं। इस प्रकार के युगल का व्यवहार सुसंगत होता है। जब युगलों का परमाणुओं में प्रकीर्णन होता है (और यही प्रकीर्णन प्रतिरोध का कारण बनता है, जैसा कि हम ऊपर बता चुके हैं) तो युगल के किसी एक सदस्य का एक ओर हट जाने का प्रतिकरण उसके "मित्र" के व्यवहार द्वारा हो जाता है। प्रतिकरण से हमारा अभिप्राय है कि इलेक्ट्रॉनों के युगल का कुछ आवेग अपरिवर्तित रहता है। अतः इलेक्ट्रॉनों का प्रकीर्णन गायब नहीं होता, अपितु धारा के प्रवाह पर असर डालना बंद कर देता है।

अतिचालक में युग्मित इलेक्ट्रॉनों के साथ-साथ सामान्य इलेक्ट्रॉनी गैस भी विद्यमान होती है। इस प्रकार, प्रतीत होता है कि दो द्रव एक साथ विद्यमान हैं—एक सामान्य तथा दूसरा अतिचालक। अतिचालक के तापमान के शून्य से ऊपर बढ़ने के साथ तापिक गति इलेक्ट्रॉनों के "युगलों" को और अधिक संख्या में तोड़ना आरम्भ कर देगी

अर्थात् सामान्य इलेक्ट्रॉनी गैस की मात्रा और बढ़ेगी। अंत में ऐसा क्रांतिक तापमान आ जाएगा जब अन्तिम इलेक्ट्रॉनी युगल भी लुप्त हो जाएगा।

दूसरी पुस्तक में दो द्रवों—सामान्य तथा विशेष—की सहायता से तरल हीलियम में देखी गई अतितरलता की परिघटना समझाई गई है। ये दो परिघटनाएं एक दूसरे के काफ़ी समीप हैं—अतिचालकता—यह इलेक्ट्रॉनी द्रव की अतितरलता है।

अभी-अभी इलेक्ट्रॉनों के जिस युगल का ज़िक्र किया गया है उसका कुल प्रचक्रण शून्य के बराबर है। वे कण, जिनका प्रचक्रण शून्य या पूर्ण संख्या के बराबर होता है, बोसॉन कहलाते हैं। सामान्य स्थितियों में बोसॉन एक ही ऊर्जा स्तर पर बड़ी संख्या में इकट्ठे हो सकते हैं। इस अवस्था में उनकी गति आदर्श रूप से सुसंगत होती है तथा उनके स्थानांतरण के बीच किसी प्रकार की कोई रुकावट नहीं आ सकती। हम इस परिघटना पर चौथी पुस्तक में पुनः लौटेंगे।

धातु में से इलेक्ट्रॉनों का निष्कासन

चूंकि इलेक्ट्रॉनों का एक भाग तीव्र कणों की गैस की भांति व्यवहार करता है, इसलिये आशा करना स्वाभाविक है कि इलेक्ट्रॉन धातु की सतह से बाहर भी आ सकते हैं। धातु से बाहर आने के लिये इलेक्ट्रॉन में धनात्मक आयनों के आकर्षण बल से अधिक बल होना चाहिये। इस ध्येय को हासिल करने के लिये इलेक्ट्रॉन द्वारा किया जाने वाला कार्य कार्य-फलन कहलाता है।

धातु का तापमान जितना अधिक होगा, इलेक्ट्रॉनों की गति की गतिज चाल भी उतनी ही अधिक होगी। यदि धातु को तपाया जाये तो इलेक्ट्रॉनों की काफ़ी बड़ी संख्या गायब हो जाएगी।

तापिक-इलेक्ट्रॉनी उत्सर्जन—यह धातु से इलेक्ट्रॉनों के निष्कासन का नाम है—का अध्ययन सरल प्रयोग द्वारा किया जा सकता है। विद्युत बल्ब में एक अतिरिक्त इलैक्ट्रोड जोड़ दिया जाता है। संवेदी उपकरण द्वारा विद्युत धारा की मात्रा मापी जा सकती है जो "वाष्पित"

इलेक्ट्रॉनों के एक भाग के इलैक्ट्रोड पर जमा होने के कारणवश बनती है (जी हां, एक भाग, क्योंकि बल्ब के तंतु से इलेक्ट्रॉन विभिन्न कोणों पर निकलते हैं)।

कार्य-फलन आंकने के लिये "अवरोधी" वोल्टता का सहारा लेना पड़ेगा, अर्थात् जोड़े गये इलैक्ट्रौड के पास सेल का ऋणात्मक ध्रुव लाना पड़ेगा। वोल्टता को धीरे-धीरे बढ़ाते हुए हम उसके ऐसे मान पर पहुंच जाएंगे जब इलेक्ट्रॉन इलैक्ट्रोड तक नहीं पहुंच सकेंगे।

टंगस्टन के लिये इलेक्ट्रॉनों का कार्य-फलन 5 इलेक्ट्रॉन-वोल्ट के लगभग होता है। आवश्यकतानुसार, विशेष लेप की सहायता से इसका मान 1 इलेक्ट्रॉन-वोल्ट तक लाया जा सकता है।

इलेक्ट्रॉन-वोल्ट – यह कार्य की क्या इकाई है? इसके नाम से समझना कठिन नहीं है कि यह उस ऊर्जा के समान है जो 1 B वोल्टता के प्रभाव में स्थित मार्ग को तय करने में इलेक्ट्रॉन प्राप्त करता है। एक इलेक्ट्रॉन-वोल्ट $1{,}6 \cdot 10^{-19}$ जू० के बराबर होता है। हालांकि इलेक्ट्रॉनों की तापिक चाल काफ़ी अधिक होती है, फिर भी इलेक्ट्रॉन का द्रव्यमान बहुत कम होता है। इसलिये अवरोध की अधिकतम सीमा काफ़ी अधिक है। सिद्धांत तथा प्रयोगों से सिद्ध होता है कि इलेक्ट्रॉनों का निष्कासन एकाएक तापमान पर निर्भर करता है। तापमान का 500 से 2000 K तक बढ़ना उत्सर्जित धारा को हज़ारों गुना अधिक कर देता है।

तापिक गति द्वारा धातु में से इलेक्ट्रॉनों का निष्कासन एक प्राकृतिक क्रिया है। लेकिन इलेक्ट्रॉन को धातु में से बाहर गिराया भी जा सकता है।

सर्वप्रथम, इसके लिये इलेक्ट्रॉनों द्वारा ही धातु पर बमबारी की जाती है। यह परिघटना द्वितीय इलेक्ट्रॉनी उत्सर्जन कहलाती है। इसे तकनीकी उपकरणों में इलेक्ट्रॉनों के वर्धन के उपयोग के लिये किया जाता है।

ठोस पदार्थों से प्रकाश द्वारा इलेक्ट्रॉनों का निष्कासन एक अत्यधिक महत्वपूर्ण विधि है। इस परिघटना का नाम फ़ोटान प्रभाव (photoeffect) है।

तापिक वैद्युत परिघटनाएं

१५० वर्षों से भी अधिक पूर्व अर्थात बहुत पहले (मानव के विकास की तुलना में यह एक क्षण है, परन्तु विज्ञान के विकास की तुलना में यह लगभग अनन्त है) एक साधारण तथ्य ज्ञात किया गया था। यदि ताम्र तथा बिस्मथ के तारों के हिस्सों को झाल द्वारा दो स्थानों पर जोड़ कर एक श्रृंखला बनाई जाए तो उसमें से धारा का प्रवाह होगा। धारा का प्रवाह केवल उसी स्थिति में होगा जब एक झाल पर दूसरे झाल की अपेक्षा अधिक तापमान होगा। इसी परिघटना को तापिक वैद्युत कहते हैं।

श्रृंखला चालक (chain conductor) में से इलेक्ट्रॉनों के प्रवाह का क्या कारण है। यह परिघटना इतनी सरल भी नहीं है। वैद्युतगतिक बल दो कारणों से बनता है। प्रथम – संस्पर्श विद्युत क्षेत्र ; दूसरा – तापीय विद्युत क्षेत्र।

हमने अभी-अभी कहा था कि धातु में से इलेक्ट्रॉनों के निष्कासन के लिये कार्य आवश्यक है। यह अनुमान करना स्वाभाविक ही होगा कि भिन्न-भिन्न धातुओं के लिये यह कार्य-फलन A भिन्न होगा। यदि ऐसा है तो दो धातु के झालों के बीच वोल्टता पैदा होती है जो

$$\frac{1}{e}(A_1 - A_2)$$

के बराबर है।

प्रयोगों द्वारा हम संस्पर्श वोल्टता की विद्यमानता के बारे में विश्वास कर सकते हैं। लेकिन एक बंद श्रृंखला में वह स्वयं में विद्युत धारा के प्रवाह का कारण नहीं बन सकती। वस्तुतः, बंद श्रृंखला दो झालों से बना है तथा संस्पर्श वोल्टता एक दूसरे का अवशोषण ही करेगी। लेकिन झालों के तापमानों के अन्तर द्वारा वैद्युत-गतिक बल कैसे बन जाता है? इसका उत्तर हमें तर्क से मिलता है। सम्भव है कि संस्पर्श वोल्टता तापमान पर निर्भर करती है। दो झालों में से एक का गर्म होना वोल्टता को असमान कर देता है जिसके कारणवश् धारा बनती है। लेकिन एक अन्य घटना पर भी ध्यान देना आवश्यक है। यह अनुमान करना स्वाभाविक ही है कि चालक के छोरों पर विद्युत क्षेत्र

उपस्थित होगा यदि इन छोरों पर भिन्न-भिन्न तापमान है। ज्ञात ही है कि अधिक तापमान पर इलेक्ट्रॉन अधिक तेज़ी से गतिशील होते हैं। यदि ऐसा ही है तो विद्युत आवेशों का विसरण आरम्भ हो जाएगा और यह तब तक जारी रहेगा जब तक समान विस्तारण की अवस्था को संतुलित करने वाला क्षेत्र पैदा नहीं होता।

प्रयोगों से एकदम निस्संदेह सिद्ध होता है कि ये दोनों परिघटनाएं एक साथ ही होती हैं तथा सिद्धांत बनाते समय दोनों पर ध्यान देना आवश्यक है।

तापिक वैद्युत गतिक बल अधिक परिमाण में नहीं होते—तापमानों का अन्तर 100 डिग्री होने पर वे 1 मिलीवोल्ट के बराबर होते हैं। लेकिन ये वोल्टता आसानी से मापी जा सकती है। इसलिये तापिक वैद्युत गतिक प्रभाव को तापमान मापने के लिये उपयोग किया जाता है। क्योंकि तरल धातु के अन्दर आप कांच का थर्मामीटर नहीं डाल सकते हैं। ऐसी स्थितियों में तापवैद्युत युग्म (तापमान मापने वाले तापविद्युतक को कहते हैं) एक बहुत ही उपयोगी उपकरण है। वस्तुतः, तापवैद्युत युग्म में अन्य कई उपयोगी बातें हैं। बहुत अधिक दूरी पर तापमान मापने की सम्भावना कितनी अधिक है। और संवेदनशीलता का तो कहना ही क्या? विद्युत माप बहुत ही परिशुद्ध होते हैं, और ज्ञात होता है कि तापवैद्युत युग्म की सहायता से तापमानों के बीच एक डिग्री के दस लाखों अंशों के अन्तर को भी मापा जा सकता है।

उस अत्यधिक संवेदनशीलता के कारण ताप विद्युतकों को बहुत ही दूरी पर स्थित पदार्थों की दिशा से आने वाली तापिक धाराओं को मापने के लिये उपयोग किया जाता है। स्वयं पाठक ताप विद्युतक के अन्य उपयोगों के बारे में कल्पना कर सकता है। इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि प्रति सेकंड अर्ग के दसवें अंश का मापा जाना उसके लिये सीमा नहीं है।

संचायक सेल की भांति, कभी-कभी ताप विद्युतकों को बैटरी में प्रयोग करते हैं। यदि अधिक ऊर्जा की ज़रूरत नहीं हो तो इस प्रकार की बैटरी ऊर्जा के जनित्र (generator) के रूप में प्रयोग की जा सकती है जिसका उपयोग रेडियो-संचार में होता है।

अर्धचालक

तत्त्व, रासायनिक यौगिकों सहित बहुत से पदार्थ चालकता के मान के आधार पर चालकों तथा पृथक्कारकों के बीच काफ़ी विस्तृत अन्तर की पूर्ति करते हैं। ऐसे पदार्थों के बारे में बहुत समय से ही ज्ञात था। लेकिन २० वर्ष पहले शायद ही किसी ने यह सोचा होगा कि अर्धचालकों की भौतिकी उद्योग के एक नए विभाग को जन्म देगी जिसका महत्वपूर्ण रूप से आंकना असम्भव होगा। अर्धचालकों के बग़ैर आधुनिक कम्प्यूटर, दूरदर्शन यंत्र तथा टेप-रिकार्डर – सभी कुछ असम्भव है। अर्धचालकों के बिना आधुनिक रेडियो-तकनीकी भी समझ के बाहर है।

पृथक्कारकों की चालकता 10^{-8} तथा 10^{-18} ओम $^{-1} \cdot M^{-1}$ के बराबर होती है; और धातुओं की चालकता 10^{2} और 10^{4} इन्हीं इकाईयों के बराबर होती है। अर्धचालकों की विशिष्ट चालकता इन दो अंतरालों के बीच स्थित है। लेकिन हमें शीघ्र ही ज्ञात होगा कि हम अर्धचालकों के साथ उनकी प्रतिरोध की मात्रा के कारण ही कार्य नहीं कर रहे हैं।

धातुओं की भांति जब अर्धचालकों में से विद्युत धारा का प्रवाह होता है तो हम उनमें किसी प्रकार का रासायनिक परिवर्तन नहीं देखते हैं। इसका अर्थ हुआ कि इन पदार्थों के आयन, जो क्रिस्टलीय जाली का स्वरूप बनाते हैं, क्षेत्र के प्रभाव के कारण स्थानांतरित नहीं होते। अतः, धातुओं की भांति, यहां भी चालकता इलेक्ट्रॉनों की गति के कारण होती है।

हालांकि यह स्थिति स्वयं में स्पष्ट ही है, लेकिन अर्धचालकों के अध्ययन के आरम्भ-काल में ही भौतिकतज्ञों ने यह प्रयोगों द्वारा जानने की कोशिश की थी कि विद्युत धारा के वाहक कौन-से आवेश हैं? ठोस पदार्थों के लिये इस प्रयोग को "हाल" प्रभाव द्वारा किया जा सकता है।

अगले अध्याय में मैं आपको बताऊंगा कि चुम्बकीय क्षेत्र के प्रभाव में धनात्मक तथा ऋणात्मक कण विभिन्न दिशाओं में विचलित हो जाते हैं। यदि किसी ठोस पदार्थ को पट्टी के रूप में बनाया जाये जिसके
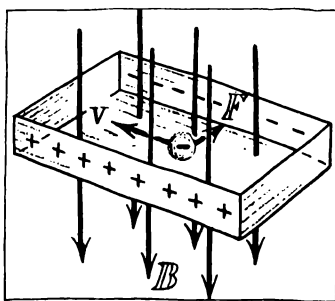
चित्र 2.8

अन्दर आवेश गतिशील है, और तदनुरूप से उससे चुम्बकीय क्षेत्र एक निश्चित दिशा में रखा जाये तो प्लेट के छोरों पर वोल्टता पैदा हो जाएगी। इस प्रयोग का आरेख चित्र 2.8 में दिया गया है।

भौतिकतज्ञ किस प्रकार चकित हुए होंगे जब उन्होंने यह देखा होगा कि कुछ पदार्थ उक्त अध्ययन के समय कभी-कभी तो इस प्रकार व्यवहार करते हैं जैसे कि तार में से धनात्मक कण प्रवाह कर रहे हों, और कभी-कभी इस प्रकार व्यवहार करते हैं जैसे कि विद्युत के वाहकों पर ऋणात्मक चिन्ह लगा हो। इस प्रकार के व्यवहार का नाम रखना कठिन नहीं है। पहली स्थिति का नाम रखते हैं धनात्मक चालकता p-type, तथा दूसरी का – ऋणात्मक चालकता n-type। लेकिन मूल बात नाम में नहीं है बल्कि कार्य के तत्व में है। इसमें किसी प्रकार का कोई सन्देह नहीं है कि अर्धचालक के अन्दर इलेक्ट्रॉन गति करते हैं। तो फिर इस अन्तर्विरोध का क्या हल है? धनात्मक चालकता को किस प्रकार समझा जाये?

अनुमान कीजिये कि आपके सामने व्यायाम करने वाले युवकों की एक पक्ति है। किसी कारणवश् पंक्ति में से एक युवक बाहर चला जाता है। स्थान रिक्त हो जाता है। हालांकि यह कहना सुन्दर नहीं लगेगा, लेकिन आइये यह कहें कि एक "छेद" हो गया है। यदि युवक दायें से बायें हट जाएंगे तो "छेद" बायें से दायें हट जाएगा। यही वह आरेख है जिसकी मदद से हम अर्धचालकों की धनात्मक चालकता को समझ सकते हैं।

अर्धचालकों में स्वतंत्र इलेक्ट्रॉनों का संकेन्द्रण बहुत कम होता है। इसलिये चालकता का अर्थ स्वयं ही हमें बतलाता है (धारा के लिये हाल ही में निकाला गया सूत्र आपको याद ही होगा) कि अर्धचालक में अधिकतर परमाणु आयन नहीं होते हैं बल्कि उदासीन परमाणु कहलाते

हैं। लेकिन अर्धचालक पृथक्कारक नहीं होता है। अर्थात् इलेक्ट्रॉनों की एक छोटी संख्या स्वतंत्र कर दी गई है। ये इलेक्ट्रॉन, धातु की भांति, गतिमय होंगे और ऋणात्मक यानी इलेक्ट्रॉनिक चालकता बनाएंगे। लेकिन धनात्मक आयन जो उदासीन परमाणुओं से घिरा है अस्थायी अवस्था में स्थित होता है। जैसे ही ठोस पदार्थ पर विद्युत क्षेत्र प्रभाव डालता है, धनात्मक आयन अपने पड़ोसी से इलेक्ट्रॉन लेने की कोशिश करता है। और ठीक इसी प्रकार पड़ोसी परमाणु भी कोशिश करता है। धनात्मक आयन पूर्णतया "छेद" के समान है। इलेक्ट्रॉन के छिने जाने के बाद स्वतंत्र इलेक्ट्रॉनों की गति में परिवर्तन होता है। इस प्रकार धनात्मक या "छेद" वाली चालकता बनती है।

सम्भव है कि आपको यह मॉडल पसन्द न आया हो। एक अन्य मॉडल प्रस्तुत करना चाहूंगा। हमने कहा था कि कणों की ऊर्जा क्वान्टित होती है। यह प्रकृति का मुख्य नियम है। अर्धचालकों में होने वाली सभी परिघटनाएं समझ में आ सकती हैं यदि यह मान लिया जाए कि परमाणु की भांति धातुओं में भी इलेक्ट्रॉन ऊर्जा स्तरों पर स्थित होते हैं। चूंकि ठोस पदार्थ में इलेक्ट्रॉनों की संख्या बहुत अधिक होती है तो स्तर एक दूसरे के मिलकर ऊर्जा-पट्टिका बनाते हैं।

यदि इलेक्ट्रॉनों की परस्पर क्रिया बहुत ही क्षीण है तो ऊर्जा-पट्टिका की चौड़ाई भी कम होगी। इसलिये आंतरिक इलेक्ट्रॉनों पर इस बात का कोई प्रभाव नहीं पड़ता कि परमाणु, जिनके वे इलेक्ट्रॉन हैं, किसी धातु की संरचना का भाग बनते हैं।

लेकिन संयोजन वाले इलेक्ट्रॉनों के साथ स्थिति एकदम अलग है। उनके स्तर भी पट्टिका बनाते हैं। विभिन्न पदार्थों में इन पट्टिकाओं की चौड़ाई और उनकी "दूरी" विभिन्न होती है (यहां कहना चाहिये—ऊर्जा अंतराल, "दूरी" यहां भौतिकी का दुर्बोध शब्द है)।

यह चित्र अच्छी प्रकार ठोस पदार्थों को विद्युत चालकता के आधार पर धातुओं, अर्धचालकों तथा पृथक्कारकों में विभाजित करता है (चित्र 2.9)। जब पट्टिका इलेक्ट्रॉनों से पूर्णतया भरी होती है तथा ऊपर की रिक्त पट्टिका काफ़ी दूरी पर स्थित होती है तो पदार्थ पृथक्कारक होता है। यदि ऊपर की पट्टिका इलेक्ट्रॉनों से पूर्णतया भरी हुई न हो तो यह पदार्थ धातु होगा, क्योंकि कोई भी विद्युत क्षेत्र
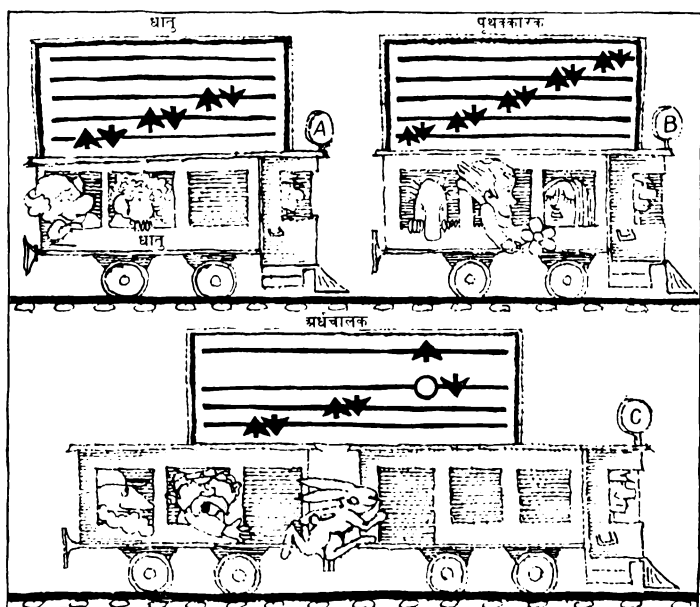
चित्र 2.9

चाहे कितना भी छोटा क्यों न हो इलेक्ट्रॉन को अधिक ऊपर के ऊर्जा स्तर पर ला सकता है। अर्धचालक की विशेषता है कि उसकी ऊपर की पट्टिका उसकी समीपतम नीचे की पट्टिका से छोटे-से अंतराल द्वारा अलग की होती है। पृथक्कारक तथा धातु की अपेक्षा अर्धचालक में तापिक गति इलेक्ट्रॉन को एक पट्टिका से दूसरी पट्टिका पर ला सकती है। क्षेत्र की अनुपस्थिति में ऊपर और नीचे इस प्रकार के संक्रमणों की संख्या समान होती है। तापमान के बढ़ने से केवल ऊपर की पट्टिका में इलेक्ट्रॉनों का संकेन्द्रण अधिक हो जाता है।

लेकिन क्षेत्र के प्रभाव में अर्धचालक का व्यवहार कैसा होगा?

अब ऊपर की पट्टिका में स्थित स्वतंत्र इलेक्ट्रॉन गतिशील हो जाता है तथा ऋणात्मक चालकता बनाने में अपका सहयोग देता है। लेकिन ऊपर तथा नीचे होने वाले संक्रमणों का संतुलन बिगड़ जाएगा। इसलिये नीचे की पट्टिका में "छेद" बन जाता है जो क्षेत्र के प्रभाव में विपरीत

दिशा में गति करता है। इस प्रकार के अर्धचालक मिश्रित चालकता वाले चालक कहलाते हैं (धनात्मक-ऋणात्मक)।

अर्धचालकों का पट्टिका-सिद्धांत एक स्वस्थ सिद्धांत है। पाठक को यह नहीं सोचना चाहिये कि ऊपर प्रस्तुत किया गया मॉडल अप्राकृतिक है तथा खाली दिमाग की उपज है। वह बहुत ही सरल तथा स्पष्ट तरीके से धातु और अर्धचालक में अंतर समझाता है और विशेष रूप से तापमान में परिवर्तन होने पर उनके व्यवहार में होने वाली प्रतिक्रिया को समझाता है। जैसा कि गत अनुच्छेद में बतलाया गया था कि तापमान के बढ़ने पर धातुओं की वैद्युत चालकता कम हो जाती है—इलेक्ट्रॉन प्रायः अवरोधों का सामना करते हैं। अर्धचालकों में तापमान के बढ़ने पर इलेक्ट्रॉनों और छेदों की संख्या भी बढ़ जाती है अर्थात् चालकता बढ़ जाती है। जैसा कि परिकलनों से स्पष्ट हो जाएगा, यह प्रभाव अवरोधों के कारण होने वाली चालकता की कमी से कहीं अधिक आगे बढ़ जाता है।

तकनीकी के लिये मुख्य रूप से मिश्रण वाले चालक महत्व रखते हैं। इस प्रकार ऐसे पदार्थ बनाना सम्भव हो जाता है जो या तो केवल धनात्मक या फिर केवल ऋणात्मक चालकता रखते हैं। यह विचार हद से ज़्यादा सरल है।

अत्याधिक प्रचलित अर्धचालक हैं—जर्मेनियम तथा सिलिकन। ये चतुः संयोजी तत्व है। प्रत्येक परमाणु चार पड़ोसियों के साथ जुड़ा है। आदर्श रूप से परिशुद्ध जर्मेनियम मिश्रित किस्म का अर्धचालक होगा। 1 से० मी०^3 में इलेक्ट्रॉनों और छेदों की संख्या बहुत ही कम होती है। वह $2{,}5 \cdot 10^{13}$ के बराबर है। इसका अर्थ यह हुआ कि एक स्वतंत्र इलेक्ट्रॉन तथा एक छेद एक अरब परमाणुओं में पाया जाता है।

आइये, जर्मेनियम के एक परमाणु को आर्सेनिक के परमाणु पर रख दें। आर्सेनिक पांच संयोजी होता है। उसके चार परमाणु तो मेहमानदार यानी जर्मेनियम के चार परमाणुओं के साथ जुड़ जाएंगे, परन्तु एक परमाणु स्वतंत्र रह जाएगा। इस पदार्थ में इलेक्ट्रॉनी (ऋणात्मक) चालकता होगी; क्योंकि, स्पष्ट है कि आर्सेनिक के परमाणु की उपस्थिति से छेद तो बन नहीं सकता है।

यदि आर्सेनिक में तुच्छ अशुद्धि भी हो—दस लाख परमाणुओं में

एक परमाणु – तो जर्मेनियम की चालकता हज़ार गुना अधिक बढ़ जाएगी।

एकदम स्पष्ट है कि जर्मेनियम को p-किस्म के चालक में परिवर्तित करने के लिये क्या आवश्यक है। इसके लिये जर्मेनियम के परमाणु को त्रि-संयोजी परमाणु पर रखना होगा, जैसे कि इंडियम का परमाणु।

अब स्थिति निम्न प्रकार होगी। मेहमान के साथ मिलकर जर्मेनियम का परमाणु धनात्मक आयन में बदल जाएगा, क्योंकि उसे चाहे कुछ भी क्यों न हो इंडियम के परमाणु के साथ सम्बंध बनाना ही पड़ेगा जिसमें एक इलेक्ट्रॉन की कमी है। लेकिन हमें पहले ही से ज्ञात है कि धनात्मक आयन छेद का कार्य करता है। क्षेत्र के प्रभाव में "छेद" अपनी जगह से हटेगा तथा स्वतंत्र इलेक्ट्रॉनों की गति होगी ही नहीं।

इसमें कोई हैरानी की बात नहीं है कि अर्धचालकों के उद्योगों ने परिशुद्ध क्रिस्टलों की वृद्धि की विधि पर बहुत बड़ा प्रभाव डाला है। ऐसा होता भी क्यों नहीं, चूंकि अशुद्धि का दस लाखवां भाग भी असर डालता है।

यह सोचना ग़लत होगा कि n-किस्म के चालकों में छेद चालकता नहीं होती। छेद होते तो अवश्य हैं लेकिन स्वतंत्र इलेक्ट्रॉनों की संख्या की तुलना में अधिक नहीं होते। n-किस्म के अर्धचालकों में धारा के मुख्य वाहक इलेक्ट्रॉन होते हैं, तथा अल्पमत में स्थित छेद अप्रधान वाहक कहलाते हैं। इसके विपरीत p-किस्म में मुख्य वाहक छेद होते हैं तथा अप्रधान वाहक – इलेक्ट्रॉन।

p—n-संक्रमण

अब जब आपको यह स्पष्ट हो गया है कि p-तथा n-अर्धचालक क्या होता है तो एक अन्य दिलचस्प तथ्य को जानना चाहिए जो आधुनिक इलेक्ट्रॉनिकी के लिये बहुत महत्वपूर्ण है। यह प्रभाव p-तथा n-अर्धचालकों के संक्रमण क्षेत्र में पैदा होता है, जो एक दूसरे के साथ दृढ़ता से जुड़े होते हैं (p—n-संक्रमण)। p—n-संक्रमण पर आधारित उपकरणों की पूरी कक्षा का नाम अंग्रेज़ी शब्द (transition) यानी संक्रमण पर रखा गया है। यदि बराबर अनुप्रस्थ काटवाले दो छड़ लिये जाये जिनके फलक पर बहुत ही सफाई से पालिश की गई हो

ग्रौर इनमें से एक छड़ जर्मेनियम का हो जिसमें इंडियम की अशुद्धि हो (p-क़िस्म का अर्धचालक), तथा दूसरा As की अशुद्धि वाले जर्मेनियम का हो और फिर इन दोनों के फलकों की तरफ़ से जोड़ कर दबाया जाये तो क्या होगा ? वास्तविक रूप से हमारे पास जर्मे-नियम का एक क्रिस्टल बन जाएगा जिसके एक भाग में स्वतंत्र इलेक्ट्रॉनों की अतिरिक्त संख्या होगी एवं दूसरे भाग में अतिरिक्त छेद होंगे।

इस व्याख्या को आसान करने के लिये आइये धारा के अप्रधान वाहकों को भूल जाये। समय के आरम्भ में (दे० चित्र 2.10, ऊपर) क्रिस्टल के दोनों भाग विद्युत के दृष्टिकोण से उदासीन हैं। लेकिन n-भाग में (विद्युत उदासीनता के बावजूद) इलेक्ट्रॉनों की "अतिरिक्त" संख्या विद्यमान है (काले बिन्दु) और दायीं ओर p-भाग में "अतिरिक्त" छेद (गोले) हैं।

इलेक्ट्रॉन तथा छेद दोनों ही स्वतंत्रता से अपनी सीमा के बाहर जा सकते हैं। इसका कारण बिल्कुल वही है जो दो गैसों से भरे बर्तनों को एक दूसरे के साथ मिलाने से होता है। लेकिन गैसों के अणुओं के विपरीत इलेक्ट्रॉन तथा छेद पुनर्योजन की विशेषता रखते हैं।

चित्र 2.10

हमारे पास छः काले
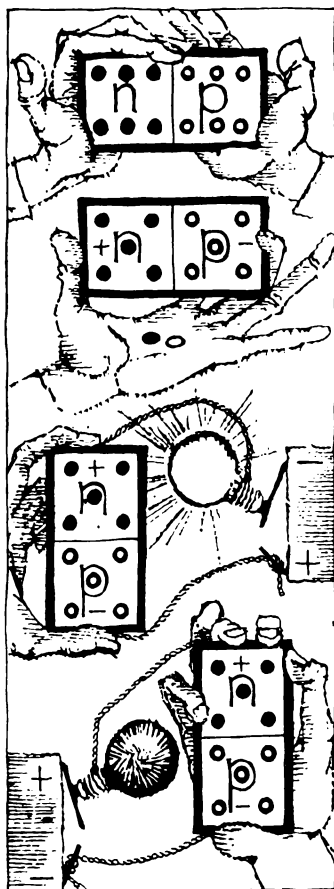
बिन्दु बायीं ओर थे तथा छः गोले दायीं ओर थे। जैसे ही संक्रमण आरम्भ हुआ तो बिन्दुओं तथा गोलों ने एक-दूसरे को नष्ट कर दिया। अगले आरेख में दिखाया गया है कि बायीं ओर इलेक्ट्रॉनों की संख्या इस भाग के विद्युत उदासीनता के लिये आवश्यक संख्या से कम रह गई है तथा दायीं ओर एक गोला कम हो गया है।

बायीं ओर के इलेक्ट्रॉनों को लेकर हमने उसे धनात्मक आवेशित कर दिया है और इसी प्रकार दायीं ओर ऋणात्मक आवेश पैदा कर दिया है।

अब अन्य छेदों व इलेक्ट्रॉनों के लिये सीमा पार करना कठिन हो गया है। इसके लिये उन्हें विद्युत क्षेत्र के विपरीत जाना होगा। कुछ समय तक तो संक्रमण जारी रहेगा जब तक कि तापिक गति हर प्रकार के ऊर्जा अवरोधों पर काबू पाने के लिये मदद करती रहेगी, उसके बाद गतिज संतुलन बन जाएगा।

यदि p—n-बिस्कुट पर वोल्टता लागू की जाए और वह भी इस प्रकार जैसा कि ऊपर से तीसरे आरेख में दिखाया गया है, तो क्या होगा? स्पष्ट है कि इस स्थिति में हम धारा के वाहक को अतिरिक्त ऊर्जा दे रहे हैं जिसकी मदद से वह अवरोधों को पार कर सकता है।

इसके विपरीत यदि n-भाग पर धनात्मक ध्रुव लाया जाये तो इलेक्ट्रॉनों व छेदों का संक्रमण असम्भव बना रहेगा।

इस प्रकार, p—n-संक्रमण दिष्टकृत गुणों से परिपूर्ण है।

आजकल तकनीकी के विभिन्न क्षेत्रों में दिष्टकारी प्रयोग किये जा रहे हैं जिनकी कार्यविधि हमने अभी आपको बतलायी है (वाल्व, डायोड – ये इसके पर्यायवाची शब्द हैं)।

हमारा आरेख काफ़ी मोटा है। उसमें हमने किसी भी हिस्से में उन छेदों या इलेक्ट्रॉनों के व्यवहार को नहीं देखा है जो बिना पुनर्योजन के सीमा के बाहर जा सकते हैं। इसके अलावा मुख्य बात तो रह ही गई, यानी धारा के अप्रधान वाहकों पर तो ध्यान ही नहीं दिया जिसके कारण p—n-बिस्कुट द्वारा धारा का दिष्टकरण अपूर्ण है। वास्तव में, क्षेत्र लागू करने पर सबसे नीचे के आरेख में हल्की-सी धारा अवश्य ही बनती है।

आइये, अब हम कुछ ऐसी विस्तृत घटनाओं का ज़िक्र करें जो गतिज संतुलन बनने के समय सीमा पर होती हैं।

ऊपर अनुमान किये गये साधारण विचार को एक तरफ़ रख दें, यानी स्मरण करें कि अप्रधान वाहक भी होते हैं।

गतिज संतुलन के बनने की क्रिया का चित्र कुछ इस प्रकार होगा। छेद वाली धारा p-क्रिस्टल की गहराई से सीमा की दिशा में बढ़ने लगती है। इसका कारण वे छेद हैं जो p—n-संक्रमण तक पहुंच जाते हैं तथा इलेक्ट्रॉनों के साथ पुनर्योजन किये बिना ही उसके पार चले जाते हैं।

निस्संदेह इसके अलावा इन छेदों में विभव प्राचीर के पार जाने की पर्याप्त ऊर्जा होनी चाहिये।

संक्रमण क्षेत्र को पार करते समय यह धारा इलेक्ट्रॉनों के साथ पुनर्योजन करने के कारण धीरे-धीरे कम होती जाती है। उसी समय n-भाग में गहराई की ओर से छेद वाली धारा विपरीत दिशा में बढ़ने लगती है। इस क्षेत्र में छेदों की संख्या काफ़ी कम है लेकिन उन्हें p-भाग में जाने के लिये किसी प्राचीर को पार करने की आवश्यकता नहीं है। यह कहा जा सकता है कि प्राचीर इस प्रकार काम करता है ताकि दिष्ट धारा (direct current) तथा प्रतीप धारा (reverse current) दोनों एक दूसरे को प्रतिकारित करते रहे।

ऊपर कही गई सभी बातें विद्युत धारा के लिये भी सही हैं। यह सच है कि छेद वाली तथा इलेक्ट्रॉनों वाली धाराओं की मात्रा आपस में एक दूसरे से काफ़ी भिन्न, हो सकती है क्योंकि p-तथा n-भागों में अशुद्धि की मात्रा भिन्न है अर्थात् स्वतंत्र वाहक भी भिन्न-भिन्न हैं। उदाहरणतया, यदि p-भाग में छेदों की संख्या n-भाग में इलेक्ट्रॉनों की संख्या से अधिक है तो इलेक्ट्रॉनी धारा की अपेक्षा छेदों वाली धारा अधिक होगी। इस स्थिति में p-भाग को धारा के स्वतंत्र वाहकों का उत्सर्जक (emitter) कहते हैं तथा n-भाग को आधार कहते हैं।

p—n-सीमा पर घटने वाली घटनाओं के इतने विस्तृत वर्णन से हमें स्पष्ट हो जाएगा कि धारा का दिष्टकरण पूरा नहीं हो सकता।

वस्तुतः, यदि p-क्रिस्टल पर धनात्मक ध्रुव लाया जाये तो प्राचीर कम हो जाएगा। वोल्टता इलेक्ट्रॉनों को दूर कर देती है। यदि n-भाग पर धनात्मक ध्रुव लाया जाए तो धारा के स्रोत से पैदा होने वाले विद्युत क्षेत्र की दिशा प्राचीर के क्षेत्र की दिशा से मिल जाती है। संक्रमण में क्षेत्र का विस्तार हो जाएगा। अब प्राचीर को पार करने की सामर्थ्य रखने वाले इलेक्ट्रॉनों की संख्या कम हो जाएगी, ठीक उसी प्रकार जैसे विपरीत दिशा में जाने वाले छेदों की संख्या कम हो जाएगी। यहां से ही संक्रमण के क्षेत्र में प्रतिरोध बढ़ जाता है जिसके कारण तथाकथित असममित वोल्ट-एम्पेयर विशिष्टता बनती है।

अतः और अधिक गहरे अध्ययन से हमें स्पष्ट हो जाता है कि संक्रमण कोश में होने वाला दिष्टकरण अपूर्ण क्यों होता है।

अध्याय ३

विद्युत-चुम्बकीयता

चुम्बकीय क्षेत्र का परिमाप

कुछ प्रकार के लोह अयस्क से बने हुए तारों तथा छड़ों की परस्पर क्रिया बहुत प्राचीन समय से ज्ञात है। इन वस्तुओं में एक ख़ास विशेषता थी: इनका एक सिरा उत्तर दिशा को इंगित करता था। इस प्रकार छड़ के दोनों सिरों के नाम रखे जा सकते हैं: उत्तर तथा दक्षिण ध्रुव। यह आसानी से सिद्ध हो गया कि समान ध्रुव आपस में एक दूसरे से प्रतिकर्षित होते हैं जबकि असमान ध्रुव आकर्षित होते हैं।

चुम्बक नामी इन विशेष पदार्थों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने वाले थे विलियम गिल्बेर्ट (१५४०–१६०३)। पृथ्वी के विभिन्न भागों पर उनके व्यवहार की प्रकृति के नियम तथा उनकी परस्पर प्रतिक्रिया के नियम स्पष्ट किये गये।

२१ जूलाई १८२० को डेनिश भौतिकतज्ञ ऐरस्टेड ने अपना शोधकार्य प्रस्तुत किया तथा उसका काफ़ी प्रचार भी किया। इस शोध लेख का शीर्षक काफ़ी चकित करने वाला था: "चुम्बकीय सूई पर होने वाले विद्युत संघर्ष के प्रभाव संबंधी पर प्रयोग"। इस छोटे-से लेख से – जिसमें केवल चार पृष्ठ थे – पाठक को यह मालूम होता था कि ऐरस्टेड ने (सही रूप से कहा जाए तो उसके एक छात्र ने) नोट किया कि यदि चुम्बकीय सूई को एक तार के पास रखा जाए जिसमें धारा प्रवाह कर रही हो तो सूई हिलेगी।

इस खोज के तुरंत बाद एक अन्य खोज हुई। अद्वितीय फ़्रांसीसी भौतिकतज्ञ आन्द्रे मेरी ऐम्पेयर (१७७५–१८३६) ने ज्ञात किया कि विद्युत धाराएं परस्पर प्रतिक्रिया करती हैं।

इस प्रकार हमें ज्ञात हुआ कि चुम्बक अन्य चुम्बकों तथा धाराओं पर प्रभाव डालते हैं और धाराएं अन्य धाराओं तथा चुम्बकों पर प्रभाव डालती हैं।

विद्युत की भांति इन परस्पर प्रतिक्रियाओं का वर्णन करने में क्षेत्र की धारणा को समझाने से आसानी हो जाएगी। यह कहें कि विद्युत धाराएं, प्राकृतिक और कृत्रिम चुम्बक चुम्बकीय क्षेत्र पैदा करते हैं।

यहां नोट करना आवश्यक है कि विद्युत और चुम्बकीय क्षेत्रों की विद्यमानता की वास्तविकता, या अन्य शब्दों में वह परिस्थिति जब क्षेत्र द्रव्य का एक रूप होता है, का प्रमाण हमें केवल चर क्षेत्रों के अध्ययन से मिलता है। इस अवस्था पर क्षेत्र हमारे लिये मात्र सहायक धारणा है इससे अधिक नहीं। वस्तुतः, चुम्बकीय क्षेत्र के स्रोत किसी भी आवरण के पीछे छिपे हो सकते हैं, लेकिन हम आकाश में उनकी उपस्थिति का पता उनके व्यवहार से लगा सकते हैं।

चुम्बकीय क्षेत्र की उपस्थिति वही विन्यास प्रतिक्रिया करते हैं जो उसे बनाते हैं यानी चुम्बकीय क्षेत्र चुम्बकीय सूई तथा विद्युत धाराओं पर प्रभाव डालता है। चुम्बकीयता का अध्ययन करने वाले शोधकर्ता के लिये सबसे मुख्य प्रश्न है चुम्बकीय क्षेत्र के आकाश को "महसूस" करना। विद्युत क्षेत्र का वर्णन करते समय हमने क्षेत्र के प्रत्येक बिन्दु पर एक ही आवेश पर लागू बल की मात्रा निश्चित की थी। तो फिर चुम्बकीय क्षेत्र का वर्णन किस प्रकार किया जाए?

साधारण रूप से छोटी-सी चुम्बकीय सूई का व्यवहार काफ़ी कठिन है। वह कभी-कभी तो विशेष प्रकार से मुड़ जाती है और कभी-कभी सीधी तरह काम करती है। चुम्बकीय क्षेत्र का वर्णन करने के लिये सूई के रास्ते में किसी प्रकार की कोई बाधा डालनी चाहिये। सर्वप्रथम यह नोट करना चाहिये कि उसका उत्तर ध्रुव किस दिशा की ओर है (अर्थात्, वह सिर जो धारा व चुम्बकीय पदार्थों के प्रभाव की अनुपस्थिति में उत्तर दिशा की ओर होता है)।

हमने ऊपर बतलाया था कि विद्युत क्षेत्र की बल रेखाओं को व्यक्त करने की आरेखी विधि के लिये बल रेखाओं से परिचित होना आवश्यक है। वैद्युत बल रेखाओं की दिशा से ज्ञात हुआ था कि धनात्मक आवेश किस दिशा की ओर मुड़ता है। रेखाओं का धनापन बल की मात्रा

बतलाता है। इसी प्रकार हम चुम्बकीय क्षेत्र को व्यक्त कर सकते हैं। स्वतंत्र रूप से घूमने वाली चुम्बकीय सूई का सिरा बल रेखाओं की दिशा बतलाएगा।

यह तो ठीक है; लेकिन चुम्बकीय क्षेत्र की "तीव्रता" को कैसे मापा जाए? यह बहुत ही सरल तरीके से ज्ञात किया जा सकता है यानी चुम्बकीय सूई पर लागू बल के आघूर्ण द्वारा। लेकिन एक अन्य विधि को भी ज्ञात करना आवश्यक है। क्योंकि चुम्बकीय सूई "अपने ही प्रकार की वस्तु" है। चुम्बकीय सूई पर प्रयोग करते हुए हमें चुम्बकीय क्षेत्र की तीव्रता तथा सूई के लाक्षणिक माप को ज्ञात करना चाहिये। भौतिकतज्ञ इस प्रकार स्थिति से दूर ही रहना पसन्द करते हैं। एक साथ दो घोड़ों पर बैठने की कोशिश करना व्यर्थ ही साबित होगा।

इसलिये पहले हम चुम्बकीय सूई पर ही कार्य करेंगे और बल रेखाओं के आरेख बनाने की विधि की तलाश करेंगे। चुम्बकीय क्षेत्र की "तीव्रता" के लिये सांख्यिक माप को प्रयोग करने के लिये ऐम्पेयर द्वारा सन १८२० में किये गये एक प्रयोग का अध्ययन करेंगे जिसकी मदद से उसने सिद्ध किया कि धारा की आकृति चुम्बकीय सूई की भांति व्यवहार करती है। यानी धारा की आकृति चुम्बकीय क्षेत्र में घूमता है और वह भी इस प्रकार की उसके समतल पर लम्ब उसी दिशा में होता है जिस दिशा की ओर चुम्बकीय सूई होती है अर्थात् बल रेखाओं के साथ-साथ। धारा की आकृति का वह भाग उत्तरी ध्रुव होता है जिसमें धारा का प्रवाह वामावर्त्त होता है।

चुम्बकीय सूई से भिन्न धारा की आकृति ऐसी चीज़ नहीं है जिसे समझाना असम्भव हो। धारा की आकृति के गुण धारा बल, क्षेत्रफल तथा क्षेत्रफल पर लम्ब की दिशा के द्वारा समान रूप से निश्चित किये जाते हैं। यह अनुमान किया जा सकता है कि ऐसी आकृति चुम्बकीय क्षेत्र को महसूस करने के लिये काफ़ी बुरा साधन नहीं है।

अतः हम अब चुम्बकीय क्षेत्र की "तीव्रता" के माप के रूप में धारा की आकृति पर लागू परिक्रामी आघूर्ण (rotatory moment) को लेते हैं। यह सोचना अनावश्यक है कि ऐसा उपकरण चुम्बकीय सूई की तुलना में कम उपयोगी है। एक विपुण शोधकर्ता नन्हें-से क्षेत्र

की आकृति बना सकता है तथा अंशांकित कमानी को दबा कर क्षेत्र के घूर्णन को संतुलित करने की सरल विधि ज्ञात कर सकता है।

सबसे पहले हमें यह ज्ञात करना चाहिये कि अपरिवर्तित चुम्बकीय क्षेत्र के किसी एक निश्चित बिन्दु पर विभिन्न प्रायोगिक आकृतियों का क्या व्यवहार होगा।

इसका परिणाम निम्न है: बल का आघूर्ण धारा बल और क्षेत्रफल के गुणनफल के समानुपातिक है। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रायोगिक आकृति के लिये स्वयं धारा बल तथा क्षेत्रफल लाक्षणिक नहीं है, बल्कि उनका गुणनफल लाक्षणिक है।

इस गुणनफल के अलावा हमें यह भी मालूम होना चाहिये कि क्षेत्र की दिशा की तुलना में आकृति का लम्ब किस प्रकार स्थित है। क्योंकि आकृति का व्यवहार चुम्बकीय सूई के व्यवहार की भांति होता है। यदि आकृति को इस प्रकार रखा जाए कि उसका धनात्मक लम्ब (यानी उत्तरी भाग से आने वाला सदिश) बल रेखाओं की दिशा में ही हो, तो वह इसी स्थिति में बना रहेगा (बल का आघूर्ण शून्य के बराबर है) (चित्र 3.1, नीचे)। यदि उसे इस प्रकार रखा जाए कि लम्ब बल रेखाओं पर 90° के कोण को बनाए तो बल का आघूर्ण अधिकतम होगा (चित्र 3.1, ऊपर)।

चित्र 3.1

इन सब बातों से यह निष्कर्ष निकलता है कि एक और धारणा को प्रवेश करना चाहिये – एक ऐसी धारणा, जैसा कि हमें आगे चलकर मालूम होगा, जो बहुत महत्वपूर्ण है। हम धारा की आकृति को M
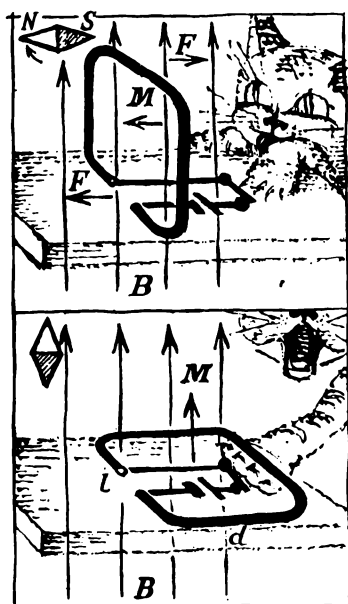
सदिश द्वारा लिखेंगे, और इसका नाम चुम्बकीय आघूर्ण रख देते हैं (चित्र 3.1)। चुम्बकीय आघूर्ण की मात्रा धारा बल I और आकृति के क्षेत्रफल $S=l \cdot d$ के गुणनफल के बराबर होती है:

$$M=IS$$

S सदिश को आकृति के समतल पर धनात्मक लम्ब की दिशा दे दी जाती है।

इस प्रकार हमारे पास एक उपकरण तैयार हो गया जिसकी मदद से हम क्षेत्र को माप सकते हैं। प्रायोगिक आकृति पर लागू बल का अधिकतम आघूर्ण मापना सबसे आसान है।

क्षेत्र के एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु पर जाते हुए या स्रोतों का स्थानांतरण करके क्षेत्र को बदलने से या क्षेत्र बनाने वाले धारा बलों को बदल कर हम प्रत्येक बार उन बलों के आघूर्ण के विभिन्न मान F प्राप्त करेंगे, जो प्रायोगिक आकृतियों पर लागू हैं। बल के आघूर्ण का अधिकतम मान निम्न प्रकार लिखा जा सकता है:

$$N=BM$$

यहां B – वह मात्रा है जिसे हम क्षेत्र के माप के रूप में स्वीकार करेंगे। इसका नाम चुम्बकीय प्रेरण है। इस प्रकार, चुम्बकीय प्रेरण प्रायोगिक आकृति पर एकसमान चुम्बकीय आघूर्ण के साथ लागू बल के अधिकतम आघूर्ण के बराबर है।

बल रेखाओं का घनापन अर्थात् क्षेत्रफल की प्रति इकाई पर आने वाली उनकी संख्या को हम B मान के समानुपातिक मानेंगे। सदिश B की दिशा बल रेखाओं के साथ-साथ है।

चुम्बकीय आघूर्ण, चुम्बकीय प्रेरण और हमारा पुराना साथी बल का आघूर्ण सभी सदिश हैं। लेकिन थोड़ा विचार करने के बाद हम स्वीकार करेंगे कि ये सदिश स्थानांतरण, चाल, त्वरण, बल ... इत्यादि के सदिशों से भिन्न हैं। वस्तुतः, उदाहरणतया, किसी पदार्थ की गति की चाल का सदिश उसकी गति की दिशा बतलाता है; त्वरण तथा बल के सदिश यह बतलाते हैं कि आकर्षण या प्रतिकर्षण की क्या दिशा है। तीर, जिससे हम सदिश के प्रतीक – भाग को

समाप्त करते हैं, इन उदाहरणों में यथार्थ और निष्पक्ष अर्थ रखता है। जहां तक हमारे नये मित्रों तथा बल आघूर्ण का प्रश्न है तो बात कुछ और ही है। सदिशों की दिशा घूर्णन के अक्ष के साथ-साथ है। स्पष्ट है कि घूर्णन के अक्ष के प्रतीक भाग के किसी भी एक सिरे पर रखी हुई सूई पूर्णतया सापेक्ष है। और सदिश की दिशा का सापेक्ष होना भी अतिआवश्यक है। घूर्णन के अक्ष के अंत पर सूई रखने का कोई महत्व नहीं है। लेकिन घूर्णन की दिशा का यथार्थ महत्व है। इसी को तो हम व्यक्त करना चाहते हैं। आइये, तय करें कि घूर्णन के अक्ष को सूई द्वारा इस प्रकार युक्त करें कि सदिश के विपरीत देखने पर दक्षिणावर्त या वामावर्त्त घूर्णन दिखाई दे। भौतिकतज्ञ वामावर्त्त के पक्ष में हैं।

सदिश की इन दोनों कोटियों के नाम हैं जो इनका अर्थ स्वयं स्पष्ट करते हैं: ध्रुवीय तथा अक्षीय।

विभिन्न विन्यासों के क्षेत्र के माप हमें निम्न नियमों पर पहुंचा देते हैं। चुम्बकों में हम हमेशा दो ध्रुवों को देखते हैं: उत्तरी, जिसमें से बल रेखाएं निकलती हैं तथा दक्षिणी – जिस पर आकर वे समाप्त होती हैं। चुम्बक के अन्दर बल रेखाओं के साथ क्या होता है, स्वाभाविक है कि हमें प्रयोगों की मदद से ज्ञात नहीं हो सकता।

जहां तक धाराओं के चुम्बकीय क्षेत्रों (चित्र 3.2) का प्रश्न है तो निम्न बातें देखने में आती हैं: चुम्बकीय बल रेखाएं धारा के पास ही मुड़ जाती हैं। और यहां यदि धारा के साथ-साथ नजर दौड़ाई जाये तो बल रेखाओं की दिशा दक्षिणावर्त हो जाएगी। चित्रों में बिन्दु और क्रॉस का अर्थ है कि धारा हमारी ओर आ रही है तथा हमसे विपरीत दिशा में जा रही है (ये सर्वसामान्य प्रतीक हैं)।

जैसा कि सूत्र से स्पष्ट है, चुम्बकीय आघूर्ण वर्ग मीटर से गुणित ऐम्पेयर में मापा जाता है।

चुम्बकीय प्रेरण की इकाई टेसला है। एक टेसला 1 कि० ग्रा०/ $(A \cdot c^2)$ के बराबर है।

चुम्बकीय क्षेत्र या तो धारा से बनते हैं या फिर स्थायी चुम्बकों द्वारा बनते हैं। चुम्बकीय क्षेत्र धारा तथा स्थायी चुम्बकों पर प्रभाव डालते हैं। यदि किसी कारणवश शोधकर्ता चुम्बकीय क्षेत्र की धारणा
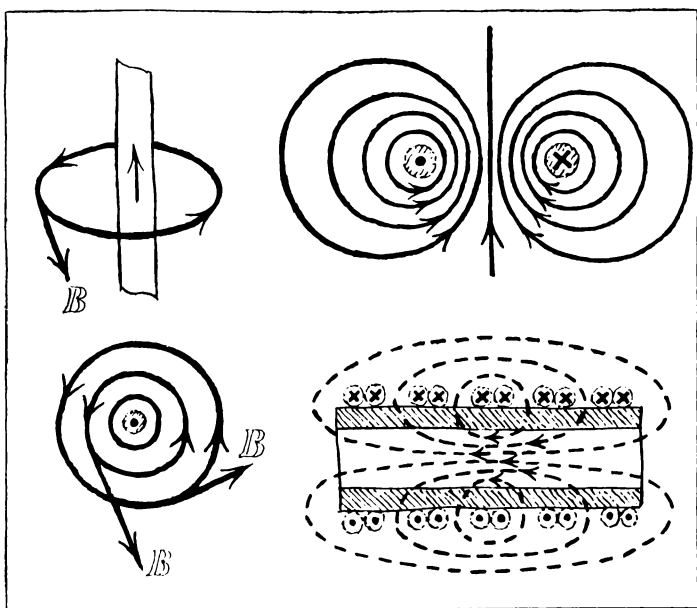
चित्र 3.2

को इस्तेमाल नहीं करना चाहता है तो चुम्बकीय क्षेत्रों से संबंधित सभी परस्पर होने वाली प्रतिक्रियाओं को चार वर्गों में बांटा जा सकता हैं: चुम्बकीय अर्थात् चुम्बक का चुम्बक पर प्रभाव, विद्युत चुम्बकीय यानी धारा का चुम्बक पर प्रभाव; चुम्बकीय-विद्युत यानी चुम्बक का विद्युत पर प्रभाव, तथा अंत में विद्युतगतिक यानी धारा का धारा पर प्रभाव।

मुख्य रूप से इन पारिभाषिक शब्दों को तकनीशियन प्रयुक्त करते हैं। उदाहरणतया, वे किसी उपकरण को चुम्बकीय-विद्युत उस स्थिति में कहेंगे जब चुम्बक तो पक्की तरह से जड़ दिया गया हो लेकिन धारा का फ़्रेम सुचल रखा गया हो।

धारा बल की इकाई की आधुनिक परिभाषा का आधार विद्युत-गतिक प्रतिक्रियाएं हैं। यह परिभाषा निम्न प्रकार है: ऐम्पेयर परिवर्तित न होनेवाली धारा का वह बल है जो निर्वात में एक दूसरे से एक

मीटर की दूरी पर स्थित अपरिमित लम्बाई तथा तुच्छ गोल अनुप्रस्थ काट वाले दो समानंतर सीधे चालकों में से गुज़र कर इन चालकों के बीच $2 \cdot 10^{-7}$ न्यूटोन प्रति मीटर के बराबर का बल उत्पन्न कर दे।

समस्त विश्व द्वारा स्वीकृत SI प्रणाली के अनुसार धारा बल की इकाई मुख्य है। तदनुसार कूलॉन को ऐम्पेयर-सेकंड द्वारा निर्धारित किया जाता है। मैं पाठक के सामने यह स्वीकार करना चाहूंगा कि मुझे इकाईयों की वह प्रणाली अधिक पसन्द है जिसमें विद्युत की मात्रा की इकाई मुख्य है तथा विद्युत-अपघटन के समय जमा होनेवाली रजत की मात्रा द्वारा व्यक्त होती है। लेकिन माप-विशेषज्ञों को इस के बारे में अधिक ज्ञान है। शायद, ऊपर दी गई परिभाषा में बहुत-सी अच्छाइयां हैं लेकिन मुझे लगता है कि विद्युत-गतिक बलों को अत्यधिक परिशुद्धता के साथ प्रायोगिक रूप से मापना कोई आसान कार्य नहीं है।

चुम्बकीय क्षेत्र को निश्चित करने की विधि तथा चुम्बकीय क्षेत्र की दिशा से धारा पर लागू बलों की दिशा ज्ञात करने की विधि (इसके बारे में थोड़ी देर बाद बतलाया जाएगा) जानते हुए पाठक स्वयं ही बता सकता है कि समानांतर प्रवाह करने वाली धाराएं आकर्षित होती हैं जबकि विपरीत दिशा में प्रवाह करने वाली धाराएं प्रतिकर्षित होती हैं।

एकसमान चुम्बकीय क्षेत्र के प्रभाव

ऐसे चुम्बकीय क्षेत्रों को एकसमान (uniform magnetic field) कहा जाता है जो क्षेत्र के किसी भी सूचक पर किसी भी स्थान पर एकसमान रूप से प्रभाव डालते हैं।

इस प्रकार का क्षेत्र चुम्बक के ध्रुवों के मध्य उत्पन्न किया जा सकता है। स्वाभाविक है कि ध्रुव एक दूसरे के जितने नज़दीक स्थित होंगे तथा चुम्बक के फलकों की समतल सतहें जितनी अधिक होंगी, उतना ही एकसमान क्षेत्र बनेगा।

एकसमान चुम्बकीय क्षेत्र का चुम्बकीय सूई तथा धारा की आकृति पर प्रभाव आपको ज्ञात ही है: यदि संतुलित करने वाला स्प्रिंग अनुपस्थित है तो वे क्षेत्र में इस प्रकार युक्त हो जाएंगे कि उनका

चुम्बकीय आघूर्ण क्षेत्र की दिशा के अनुकूल होगा। "उत्तरी ध्रुव" चुम्बक के "दक्षिणी ध्रुव" की ओर होगा। इसी तथ्य को हम निम्न शब्दों में व्यक्त कर सकते हैं: चुम्बकीय आघूर्ण चुम्बकीय क्षेत्र की बल रेखाओं के साथ-साथ स्थित होता है।

आइये, अब हम चुम्बकीय क्षेत्र का गतिमय आवेशों पर प्रभाव देखें।

इस बात का विश्वास कि यह प्रभाव वास्तव में होता है और वह भी कि कुछ कम नहीं होता, अत्यधिक सरलता से हो सकता है। इलेक्ट्रॉनी किरण, जो इलेक्ट्रॉन गन से निकल रही हो, के पास स्कूल में प्रयोग किया जाने वाला चुम्बक ले आना ही पर्याप्त होगा। स्क्रीन पर अवलोकित बिन्दु अपने स्थान से हट जाएगा तथा चुम्बक की स्थिति के आधार पर अपना स्थान बदलता रहेगा।

इस परिघटना के गुणात्मक प्रदर्शन के बाद हम संख्यात्मक अध्ययन आरम्भ कर सकते हैं। अब हमें ज्ञात होगा कि बल रेखाओं पर समकोण बनाते हुए v रफ़्तार से क्षेत्र में गतिमय इलेक्ट्रॉन पर चुम्बकीय क्षेत्र B की ओर से प्रभाव डालने वाले बल की मात्रा

$$F = evB$$

के बराबर है। यहां e—कण का आवेश है (यह नियम न केवल इलेक्ट्रॉनों के लिये, बल्कि सभी आवेशित कणों के लिये सही है)।

और यदि कण चुम्बकीय क्षेत्र की बल रेखा के साथ-साथ चलता है तो उस पर क्षेत्र का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। त्रिकोणमिति से परिचित पाठक के लिये क्षेत्र से किसी कोण पर होने वाली गति के बल का सूत्र लिखना कठिन नहीं होगा। हम इस लेख को उन सूत्रों द्वारा नहीं भरेंगे जिनकी हमें आगे चल कर कोई आवश्यकता नहीं होगी।

लेकिन अभी तक हमने बल की दिशा के बारे में कुछ नहीं बतलाया है। लेकिन यह बहुत ही महत्वपूर्ण है। प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि बल न केवल कण की गति की दिशा बल्कि प्रेरण की दिशा पर भी लम्ब बनाता है। अन्य शब्दों में: वह v तथा B सदिशों में से गुज़रने वाले समतल पर लम्ब बनाता है। लेकिन इतना कहना ही
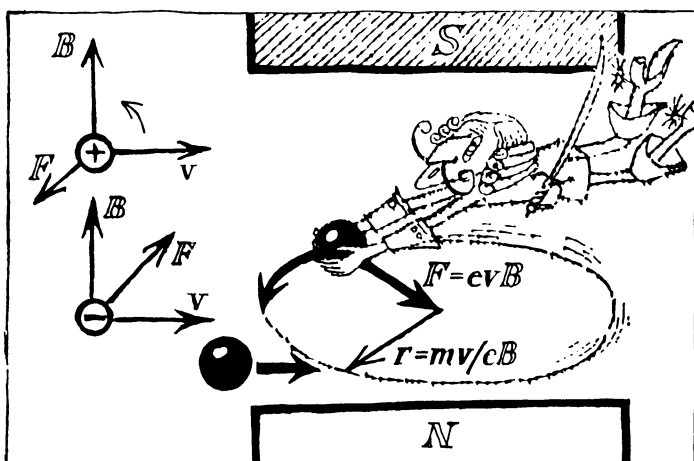
चित्र 3.3

प्रर्याप्त नहीं है। प्रत्येक सिक्के के दो पहलू होते हैं। उनमें क्या अन्तर होता है? उनका अन्तर होता है उस घूर्णन की दिशा में जिसमें एक सदिश दूसरे के साथ जुड़ा होता है। यदि सदिश v का घूर्णन सदिश B की ओर 180° से कम कोण पर वामावर्त्त में हो रहा हो तो यह धनात्मक पहलू हुआ।

चित्र 3.3 में दिखाये गये सरल सदिश चित्रों से ज्ञात होता है कि धनात्मक आवेशित कण धनात्मक लम्ब की ओर झुक जाता है। इलेक्ट्रॉन का झुकाव विपरीत दिशा में होता है।

आइये, अब यह देखें कि यदि इलेक्ट्रॉन स्थायी चुम्बकीय क्षेत्र में 90° के कोण पर आ जाये तो उसका यह नियम हमें किस दिलचस्प निष्कर्ष पर पहुंचा देगा। स्वाभाविक है कि उसकी गति गोलाकार होगी। चुम्बकीय क्षेत्र का बल अभिकेन्द्र बल होता है। अब हम आसानी से mv^2/r तथा evB को समान करके गोले का अर्धव्यास ज्ञात कर सकते हैं। अतः प्रपथ का अर्धव्यास हुआ :

$$r = mv/eB$$

इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि कण के व्यवहार से आप उसके गुणों को ज्ञात कर सकते हैं। लेकिन यहां भी वही पुरानी कहानी है जिसका सामना हमने विद्युत क्षेत्र में कण की गति का अध्ययन करते समय किया था। विद्युत आवेश तथा कण का द्रव्यमान पृथक रूप से ज्ञात करना मुश्किल है। इस स्थिति में भी प्रयोग हमें e/m अनुपात के मान पर ले आता है।

अतः कण गोले की परिधि के ऊपर घूमेगा यदि उसकी रफ़्तार की दिशा चुम्बकीय क्षेत्र पर समकोण बनाती है; तथा कण की गति जड़त्व (inertia) पर होगी यदि उसकी रफ़्तार की दिशा चुम्बकीय क्षेत्र के साथ-साथ है। लेकिन सामान्य तौर पर क्या होता है? इस प्रश्न का उत्तर एकदम हाज़िर है। कण की गति सर्पिल में होती है जिसका अक्ष बल रेखा है। चुम्बकीय क्षेत्र में प्रवेश करते समय इलेक्ट्रॉन द्वारा बनाये गये कोण के आधार पर सर्पिल या तो अत्यधिक कुण्डलित लूप से बनता है या कम कुण्डलित लूप से बनता है।

चूंकि चुम्बकीय क्षेत्र गतिमय कण पर प्रभाव डालता है तो उसका प्रभाव तार के प्रत्येक उस भाग पर भी पड़ना चाहिये जिस में से धारा का प्रवाह हो रहा हो। आइये, l लम्बाई की इलेक्ट्रॉनी किरण के एक भाग को देखें। अनुमान करें कि इस भाग पर n कण स्थित हैं। समान लम्बाई वाली तार पर, जिस पर समान रफ़्तार से समान संख्या में कण चल रहे हैं, लागू बल $nevB$ के बराबर होगा। बल समय की निश्चित इकाई में तार में से गुज़रने वाले संपूर्ण आवेश के बराबर होता है। τ समय, जिसके दौरान l पथ को विचाराधीन इलेक्ट्रॉन पार करेंगे,

$$\tau = l/v$$

के बराबर होगा। अर्थात धारा के बल को निम्न प्रकार लिखा जा सकता है:

$$I = \frac{ne}{\tau} = \frac{nev}{l}$$

$$v = Il/ne$$
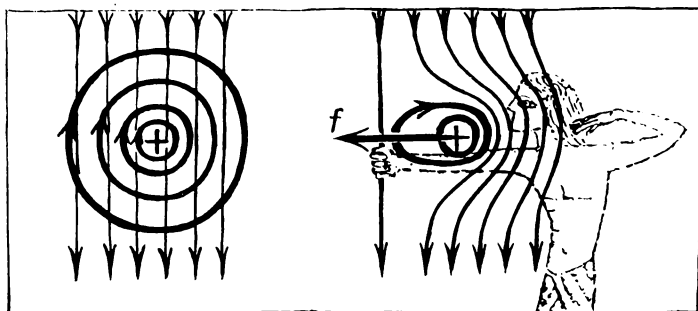
चित्र 3.4

समीकरण में से रफ़्तार को उस बल के सूत्र में लिखने पर, जो इलेक्ट्रॉनी किरण के "भाग" पर लागू है, हमें l लम्बाई वाले चालक पर लागू बल का मान प्राप्त हो जाएगा, जो निम्न है:

$$F = IlB$$

यह केवल उसी स्थिति के लिये सही है जब तार क्षेत्र पर लम्ब बना रहा हो।

उस तार के विचलन की दिशा, जिसमें से धारा का प्रवाह हो रहा हो, चित्र 3.3 में दिखाये गये ग्रारेख की मदद से ज्ञात की जा सकती है।

उन्नीसवीं शताब्दी में कार्य करने वाले शोधकर्ताग्रों को पूर्ण सम्मान देते हुए मैं चित्र 3.4 प्रस्तुत करना चाहूंगा। यह चित्र केवल शास्त्रीय महत्व ही नहीं रखता। इसकी मदद से धारा विचलन का नियम ग्रासानी से याद किया जा सकता है। चित्र से स्पष्ट है कि (हमसे विपरीत दिशा में जाने वाली) धारा का ग्रपना क्षेत्र बाहरी क्षेत्र के साथ किस प्रकार बैठता है, जिसका परिणाम दायीं ग्रोर दिखाया गया है। यदि ग्राप यह मान लें कि बल रेखाएं ईथर द्रव्य का खिंचाव ही है (पिछली शताब्दी में यह दृष्टिकोण काफ़ी प्रचलित था) तो चालक के स्थानांतरण की दिशा चित्र द्वारा व्यक्त की जा सकती है: चालक क्षेत्र द्वारा बाहर की ग्रोर धकेला जाता है।

आइये, अब हम यह देखें कि गतिमय कण तथा धारा के हिस्से पर चुम्बकीय क्षेत्र का प्रभाव वही परिघटना है जिससे हमने चुम्बकीय क्षेत्रों के प्रभावों के अध्ययन को आरम्भ किया था।

चित्र 3.1 पर वापिस आइये। धारा की आकृति पर लागू बलों को इस चित्र में दिखाया गया है। बल रेखाओं के साथ-साथ स्थित तार के हिस्सों पर बल कोई प्रभाव नहीं डालते ; अन्य हिस्सों पर बलों का एक जोड़ा प्रभाव डालता है, तथा चित्र से स्पष्ट है कि इस जोड़े का आघूर्ण बल और पाद (leg of cathode) के गुणनफल के एकदम बराबर है :

$$N = IlBd = ISB = MB$$

इस प्रकार आकृति के चुम्बकीय आघूर्ण तथा चुम्बकीय प्रेरण के मान के गुणनफल के रूप में बल आघूर्ण का समीकरण आवेश पर लागू बल के सूत्र से प्रत्यक्ष रूप से निकलता है।

हां, आपको यह बतला दें कि $F = evB$ सूत्र, जिससे हमने यह अनुच्छेद आरम्भ किया था, लोरेन्स सूत्र कहलाता है (हेनरीक ऐन्तोन लोरेन्स, १८५३–१९२८, हालैंड के भौतिकतज्ञ जिन्होंने यह सूत्र सन् १८९५ में प्रस्तुत किया)।

असमान चुम्बकीय क्षेत्र के प्रभाव

असमान चुम्बकीय क्षेत्र को उत्पन्न करना एकदम कठिन नहीं है। चुम्बक के ध्रुवों की आकृति मोड़ दी जा सकती है (चित्र 3.5)। तब बल रेखाओं की गति नीचे दिये गये चित्र के अनुसार होगी।

मान लें कि ध्रुव के बीच काफ़ी दूरी है, और अब किसी एक ध्रुव के निकट चुम्बकीय सूई रख देते हैं। जैसा कि हमने ज़िक्र किया था कि सामान्यतः चुम्बकीय सूई न केवल हिलेगी बल्कि निश्चित रूप से गति भी करेगी। क्षेत्र के एकसमान होने पर चुम्बकीय सूई (या धारा की आकृति) की केवल एक घुमावदार गति ही देखी जा सकती है। असमान क्षेत्र में दोनों प्रकार की गति देखी जा सकती है। सूई इस प्रकार हिलेगी कि वह बल रेखाओं की दिशा में आ जाए, फिर उसके

बाद ध्रुव की ओर आकृष्ट हो जाएगी (चित्र 3.5)। सूई उस ओर खिंची हुई चली जाती है, जिधर अधिक शक्तिशाली क्षेत्र होता है। (इसमें कोई शक नहीं कि कलाकार ने अतिशयोक्ति कर दी है— शक्तिशाली क्षेत्र शायद ही दिशा-सूचक को तोड़ सके)।

इस प्रकार की प्रकृति का क्या कारण है? स्पष्ट है कि असमान क्षेत्र में सूई पर बल के एक से अधिक जोड़े प्रभाव डालते हैं। असमान क्षेत्र में स्थित सूई के उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवों पर लागू "बल" समान नहीं हैं। वही सिरा जो अधिक शक्तिशाली क्षेत्र में स्थित होता है अधिक बल से प्रभावित होता है। इसीलिये एक चक्कर के बाद बलों का आरेख दिये गये चित्र की तरह होता है: अधिक शक्तिशाली क्षेत्र की ओर अतिरिक्त बल इकट्ठा हो जाता है।

सच है कि नगण्य मात्र धारा की आकृति भी ठीक इसी प्रकार व्यवहार करेगी। इस प्रकार दो "ध्रुवों" वाली सूई के मॉडल से आरम्भ करके मैं ने सचित्र करने के अपने विचार के साथ समझौता कर लिया है।

तो फिर प्रकृति का नियम क्या है? बल किसके बराबर होता है? प्रयोग तथा विश्लेषणों से पता चलता है कि M चुम्बकीय आघूर्ण वाले किसी भी विन्यास के लिये यह बल विन्यास के आघूर्ण तथा क्षेत्र की वृद्धि के ढाल के गुणनफल के बराबर होता है।
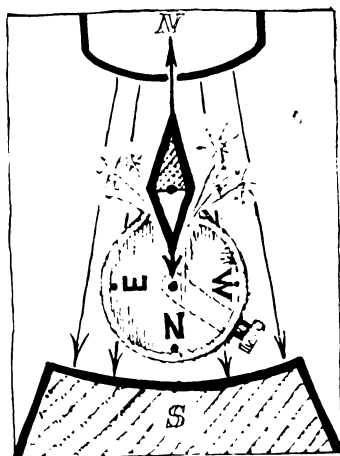
चित्र 3.5

चुम्बकीय सूई को बल रेखाओं की दिश में युक्त हो जाने दीजिए। चुम्बकीय सूई के उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवों के स्थानों पर क्षेत्र के मान भिन्न होंगे। आइये, ध्रुव में से गुज़रती हुई रेखा के साथ-साथ स्थित क्षेत्र का आरेख बनाते हैं। सरलता के लिये ध्रुवों के बीच क्षेत्र के वास्तविक वक्र के भाग को सरल रेखा द्वारा

बदल दें, और यह उतनी ही परिशुद्धता से हो जाएगा जितनी की सूई छोटी होगी अर्थात् ध्रुव परस्पर जितनी कम दूरी पर होंगे। ढाल यानी आरेख में इस सरल रेखा द्वारा क्षैतिज अक्ष पर बनने वाले कोण की टेन्जैंट क्षेत्रों के अन्तर को सूई की लम्बाई से भाग देने पर प्राप्त भागफल के बराबर होगी। सूत्र निम्न प्रकार लिखा जाएगा :

$$F = M(B_N - B_S)/l$$

यहां l – सूई की लम्बाई है, B_N तथा B_S – सूई के उत्तरी और दक्षिणी सिरों पर क्षेत्र के मान हैं। (आप इस बात से चकित न होएं कि कोण की टेन्जैंट यहां विमीय मात्रा है)।

यदि सूत्र में भिन्न के स्थान पर हम कोण के टेन्जैंट का मान लिख दें जो क्षेत्र की गति दिखाने वाले वक्र को उस बिन्दु पर छूती है जहां विचाराधीन कण स्थित है, तो "ध्रुव" गायब हो जाएंगे तथा सूत्र किसी भी कण या कणों के विन्यास के लिये सही होगा।

अतः, असमान क्षेत्र में कोई भी विन्यास या कण का, जिनमें चुम्बकीय आघूर्ण विद्यमान हैं, चुम्बक के ध्रुवों की ओर आकर्षित होना या उनसे प्रतिकर्षित होना इस बात पर निर्भर करता है कि चुम्बकीय आघूर्ण बल रेखाओं की ओर है या विपरीत।

लेकिन क्या चुम्बकीय आघूर्ण क्षेत्र की दिशा के विपरीत भी स्थित हो सकता है? जी हां। लेकिन ऐसा किन स्थितियों में होता है – इसके बारे में आगे पढ़िये।

ऐम्पेयरी धारा

उन्नीसवीं शताब्दी तक भौतिकीय सिद्धांत का निर्माण करना कोई कठिन कार्य नहीं था। कोई पदार्थ गर्म हो गया तो अर्थ हुआ कि उसमें अधिक ताप है। दवाई शीघ्र ही नींद ला देती है – अर्थ हुआ कि उसमें नींद लाने वाली शक्ति है। लोह के कुछ छड़ उत्तर दिशा को सूचित करते हैं। हालांकि यह व्यवहार चकित कर देता है लेकिन हम झट से कह उठते हैं कि इन छड़ों या सूइयों में चुम्बकीय आत्मा है। जैसा कि आपको मालूम ही है कि चुम्बकीय सूइयां समुद्री यात्रियों के बहुत काम आती रही हैं। लेकिन कभी-कभी वे सामान्य कार्य करना बंद कर

देती थीं। यहां भी बात समझ में आ जाती है: यहां कसूरवार बनते हैं भूत-प्रेत। लोहे, स्टील तथा अन्य ऐलायों का चुम्बक बनाया जाना भी हमें कुछ अधिक चकित नहीं करता है। ये केवल सरल पदार्थ हैं जिनके अन्दर चुम्बकीय आत्मा प्रवेश कर जाती है।

ऐरस्टेड और ऐम्पेयर की खोजों के बाद स्पष्ट हो गया कि वैद्युत तथा चुम्बकीय परिघटनाओं के बीच एक पुल बनाया जा सकता है। एक समय दोनों सिद्धांतों का समान रूप से विस्तार हुआ। एक दृष्टिकोण के अनुसार सभी कुछ स्पष्ट था कि तार, जिसमें विद्युत धारा का प्रवाह हो रहा है, चुम्बक में बदल जाता है। दूसरा दृष्टिकोण ऐम्पेयर ने प्रस्तुत किया। उसने कहा कि लोहे की चुम्बकीय आत्मा अतिसूक्ष्म वैद्युत धाराओं से बनी है।

अनेक व्यक्तियों को ऐम्पेयर का दृष्टिकोण अधिक तर्कसंगत लगा। लेकिन इस विचार पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया क्योंकि उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में किसी भी व्यक्ति ने न केवल इन धाराओं को खोज निकालने की सम्भावना सोची थी, बल्कि इस बात पर भी विश्वास नहीं किया था कि जगत् अणुओं तथा परमाणुओं से बना है।

लेकिन केवल इसके बाद ही जब बीसवीं शताब्दी में अनेक अद्वितीय प्रयोगों की मदद से सिद्ध कर दिया गया कि हमारे चारों ओर का जगत् वास्तव में ही परमाणुओं से बना है और परमाणु इलेक्ट्रॉनों तथा परमाण्वीय नाभिकों से बने हैं, लोगों ने ऐम्पेयरी धाराओं की विद्यमानता के बारे में विश्वास किया कि यह एक ऐसा तथ्य है जिसकी मदद से पदार्थों के चुम्बकीय गुणों को समझा जा सकता है। अधिकतर वैज्ञानिक इस बात से सहमत हो गये कि ऐम्पेयर की "आण्विक धारा" परमाण्वीय नाभिक के चारों ओर इलेक्ट्रॉनों की गति से बनती है।

प्रतीत होता था कि इन विचारों की सहायता से चुम्बकीय परिघटनाओं को समझाया जा सकेगा। वस्तुतः, नाभिक के चारों ओर घूमने वाले इलेक्ट्रॉन को विद्युत धारा के सदृश बनाया जा सकता है और हम उसका चुम्बकीय आघूर्ण भी निश्चित कर सकते हैं और फिर इस आघूर्ण को गतिमय आवेशित कण के आवेग के आघूर्ण के साथ मिलाया जा सकता है।

अन्तिम तथ्य को काफ़ी सरलता से सिद्ध किया जा सकता है।

मान लें कि इलेक्ट्रॉन r अर्धव्यास की परिधि पर घूम रहा है। चूंकि धारा का बल समय की इकाई में लिये जाने वाले आवेश के बराबर होता है, तो घूमने वाले इलेक्ट्रॉन को धारा के सदृश किया जा सकता है, जिसका बल $I = Ne$ के बराबर है, यहां N प्रति सेकंड में चक्करों की संख्या के साथ निम्न अनुपात द्वारा जोड़ा जा सकता है: $v = N \cdot 2\pi r$, यानी धारा का बल बराबर हुआ:

$$I = \frac{ve}{2\pi r}$$

नाभिक के चारों ओर घूमने वाले इलेक्ट्रॉन के चुम्बकीय आघूर्ण को स्वभावतः कक्षीय कहा जा सकता है। वह

$$M = IS = \frac{ve}{2\pi r}\,\pi r^2 = \frac{1}{2}\,evr$$

के बराबर है।

यहां पाठक को याद करा दें, (दे० प्रथम पुस्तक) कण के आवेग का आघूर्ण $L = mvr$ के बराबर है। इससे हमें स्पष्ट होता है कि आवेश के आघूर्ण तथा चुम्बकीय आघूर्ण के मध्य परमाण्वीय भौतिकी के लिये एक बहुत ही महत्वपूर्ण अनुपात है:

$$M = \frac{e}{2m}\,L$$

इससे निष्कर्ष निकलता है कि परमाणुओं में चुम्बकीय आघूर्ण अवश्य ही होना चाहिये।

विभिन्न विधियों के द्वारा, जिनका हम यहां वर्णन नहीं करेंगे, विभिन्न पदार्थों की परमाण्वीय गैस प्राप्त की जा सकती हैं। गैस चैम्बर में किये गये दो छिद्रों के द्वारा हाइड्रोजन, लिथियम, बेरीलियम... के उदासीन परमाणुओं के पुंज बनाये जाते हैं। इन्हें असमान चुम्बकीय क्षेत्र में से गुज़ारा जा सकता है और पुंजों के चिन्हों को स्क्रीन पर देखा जा सकता है। प्रकृति से जो प्रश्न हम पूछ रहे

हैं, वह निम्न प्रकार है: क्या अपने सीधे मार्ग से परमाणुओं के पुंज विचलित होंगे? और यदि हां, तो किस प्रकार?

परमाणु में कक्षीय आघूर्ण होता है अर्थात वह चुम्बकीय सूई की भांति व्यवहार करता है। यदि चुम्बकीय आघूर्ण क्षेत्र के साथ-साथ स्थित है तो परमाणु का विचलन अधिक शक्तिशाली क्षेत्र में अवश्य ही होना चाहिये; इसके विपरीत असमानांतर स्थिति में वह कम शक्ति-शाली क्षेत्र में विचलित होना चाहिये। विचलन का मान पृष्ठ ११३ पर दिये गये चुम्बकीय सूई पर लागू बल को निश्चित करने के लिये प्रयोग किये जाने वाले सूत्र द्वारा ज्ञात किया जा सकता है।

सर्वप्रथम, जो बात दिमाग में आती है वह यह है कि परमाणुओं के चुम्बकीय आघूर्ण अव्यस्थित रूप से स्थित होते हैं। यदि ऐसा है तो पुंज का टूटना स्वाभाविक ही है।

लेकिन प्रयोग से हम एकदम दूसरे परिणामों पर पहुंचे। परमाणुओं का किरण-पुंज कभी भी लुप्त नहीं होता, उसका केवल परमाणुओं की किस्म के आधार पर दो, तीन, चार या अधिक घटकों में विपाटन हो जाता है। विपाटन सदैव सममित होता है। कुछ स्थितियों में कभी अविचलित किरण-पुंज की उपस्थिति देखी गई है तो कभी अनुपस्थिति और, अंत में, कभी-कभी तो विपाटन होता ही नहीं।

अपने समय में भौतिकतज्ञों द्वारा किये गये अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रयोगों में से एक इस प्रयोग से, सर्वप्रथम यह निष्कर्ष निकलता है कि परमाणु के चारों ओर इलेक्ट्रॉनों की गति को वस्तुतः बन्द विद्युत धारा के सदृश किया जा सकता है, यानी सदृश के संकुचित तथा पूर्णतया निश्चित अर्थ में। बन्द धाराओं की भांति, परमाणुओं को भी चुम्बकीय आघूर्ण दिया जा सकता है। और इसके अलावा, परमाणुओं के चुम्बकीय आघूर्ण चुम्बकीय प्रेरण के सदिश की दिशा पर कुछ ही विविक्त कोण बना सकते हैं। अन्य शब्दों में, इस दिशा पर चुम्बकीय आघूर्णों के प्रक्षेपण का क्वान्टीकरण हो जाता है।

सैद्धांतिक भौतिकी के लिये यह बहुत ही ख़ुशी की बात थी कि संपूर्ण विस्तार में तथ्यों की भविष्यवाणी कर दी गई थी। सिद्धांत से यह निष्कर्ष निकलता है कि इलेक्ट्रॉन के आवेग का आघूर्ण तथा चुम्बकीय आघूर्ण, जिनके लिये उनकी उत्पत्ति के कारण परमाण्वीय इलेक्ट्रॉनों

को नाभिक के क्षेत्र में गतिमय करना आवश्यक है (इन्हें कक्षीय* आघूर्ण कहते हैं), असमानांतर हैं, और क्षेत्र की दिशा पर उनके प्रक्षेपण को निम्न प्रकार लिखा जा सकता है:

$$L_z = m\frac{h}{2\pi}, \quad M_z = m\mu$$

यहां m – एक पूर्ण संख्या है जिसका मान 0,1,2,3, ... हो सकता है; $h/2\pi$ – आवेग के आघूर्ण के प्रक्षेपण का न्यूनतम सम्भव मान; μ – चुम्बकीय आघूर्ण के प्रक्षेपण का न्यूनतम सम्भव मान, h तथा μ के मान प्रयोगों द्वारा ज्ञात किये जाते हैं:

$$h = 6{,}62 \cdot 10^{-27} \text{ अर्ग०से०}; \quad \mu = 0{,}93 \cdot 10^{-20} \text{ अर्ग}/G$$

यहां आपको बतला दें कि भौतिकी के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण इन स्थिरांकों के नाम क्वान्टमी भौतिकी का आधार रखने वाले महान वैज्ञानिकों के नाम पर रखे गए हैं: h – प्लांक स्थिरांक कहलाता है तथा μ – बोर मैग्नेटॉन कहलाता है।

लेकिन विभिन्न तत्त्वों के परमाणुओं के किरण-पुंजों के विपाटन के विभिन्न व्यवहारों को समझने के लिये क्वान्टमी यांत्रिकी की परिकल्पनाएं पर्याप्त नहीं थीं। आगे चल कर सरलतम परमाणु भी – हाइड्रोजन के परमाणु – आशा के विपरीत व्यवहार करने लगे। क्वान्टमी यांत्रिकी के नियमों में एक अन्य बहुत ही महत्वपूर्ण परिकल्पना जोड़ना आवश्यक हो गया, जिसका हमने पिछले पृष्ठों पर मामूली-सा ज़िक्र किया था। इलेक्ट्रॉन का (बाद में मालूम हुआ कि हर प्रारम्भिक कण का भी) अपना आवेग आघूर्ण (स्पिन) होता है तथा तदनुसार चुम्बकीय आघूर्ण भी होता है। इलेक्ट्रॉन की समानता चुम्बकीय सूई के साथ करने के लिये परमाण्वीय इलेक्ट्रॉनों की गति की प्रकृति का विस्तारपूर्वक अध्ययन करना आवश्यक है।

---

*ऐसा नाम ऐतिहासिक कारणों से रखा गया था: क्योंकि परमाण्वीय सिद्धांत की शुरूआत इस कल्पना से की गई थी कि परमाणु सूर्य-मंडल की भांति ही है।

परमाणु का इलेक्ट्रॉनी अभ्र

इलेक्ट्रॉन की गति को देखना असम्भव है। इसके अलावा ऐसी भी आशा नहीं करनी चाहिये कि विज्ञान इतनी प्रगति कर लेगा कि इलेक्ट्रॉन को देखना सम्भव हो जाएगा। इसका कारण पर्याप्त रूप से स्पष्ट है। "देखने" के लिये "उद्भासित" करना आवश्यक है। "उद्भासित" करने का अर्थ हुआ – इलेक्ट्रॉन पर किसी अन्य किरण की ऊर्जा से प्रभाव डालना। चूंकि इलेक्ट्रॉन अतिसूक्ष्म है, उसका द्रव्यमान बहुत ही कम है तो उसे देखने के लिये उपयोग किये जाने वाले उपकरण की ओर से होनेवाली ज़रा-सी बाधा के कारण इलेक्ट्रॉन अपने स्थान से हट जाएगा।

परमाणु की संरचना सम्बन्धी वे सभी बातें ही नहीं जो शीघ्र ही हम पाठक को बताने जा रहे हैं, बल्कि पदार्थ की इलेक्ट्रॉनी संरचना के सिद्धांत के बारे में भी सभी बातें सिद्धांत के ही परिणाम हैं, किन्हीं प्रयोगों के नहीं। लेकिन हम इन विचारों की सत्यता पर विश्वास तभी करने लगे जब सिद्धांत के आधार पर तर्कसंगत विचारों को अनगनित प्रयोगों द्वारा आंका गया। इलेक्ट्रॉनी संरचना का चित्र, जिसे हम देख नहीं सकते हैं, उतने विश्वास से हम बनाते हैं, जितने विश्वास से शेरलॉक होमस् अपराधी द्वारा छोड़े गये निशानों के आधार पर अपराध का चित्र बनाता है।

सिद्धांत के विश्वास का बहुत बड़ा स्रोत हमें इस तथ्य से मिलता है कि इलेक्ट्रॉनी संरचना का चित्र हमें क्वान्टमी यांत्रिकी के उन्हीं नियमों से मिलता है जो अन्य प्रयोगों द्वारा निर्धारित किये जाते हैं।

हम पहले ही बता चुके हैं कि मेन्देलियेव की सारणी में तत्त्व की क्रम संख्या उसकी नाभिक का आवेश ही है या अन्य शब्दों में, उदासीन परमाणु के इलेक्ट्रॉनों की संख्या है। हाइड्रोजन के परमाणु में एक इलेक्ट्रॉन है, हीलियम में – दो, लिथियम – तीन, बेरिलियम में चार, आदि।

ये सब इलेक्ट्रॉन किस प्रकार गति करते हैं? इस प्रश्न का उत्तर इतना सरल नहीं है तथा वह केवल लगभग ही है। कठिनाई का कारण

यह है कि इलेक्ट्रॉन न केवल नाभिक के साथ परस्पर क्रिया करते हैं, बल्कि एक दूसरे के साथ भी परस्पर क्रिया करते हैं। हर्ष की बात है कि इलेक्ट्रॉनों का आपसी प्रतिकर्षण इतना अधिक महत्व नहीं रखता, जितना कि इलेक्ट्रॉन तथा नाभिक की परस्पर क्रिया की गति का है। यही वह अवस्था है जिसके आधार पर विभिन्न परमाणुओं में इलेक्ट्रॉनों की गति के व्यवहार के बारे में किन्हीं निष्कर्षों पर पहुंचा जाता है।

प्रत्येक इलेक्ट्रॉन को प्रकृति ने आकाश का क्षेत्र दिया है जिसके अन्दर वह घूमता है। अपने आकार के अनुसार इलेक्ट्रॉनों के ये क्षेत्र विभिन्न कोटियों में बांटे गये हैं तथा लातिनी अक्षरों से सूचित किये गये हैं: s, p, d तथा f।

सबसे से आरामदायक s-इलेक्ट्रॉन का "फ़्लैट" है। उसका आकार एक गोल कोश के रूप में है। सिद्धांत से पता चलता है कि इलेक्ट्रॉन अधिकतर इस गोल कोश के केन्द्र में रहता है। इसलिये इस इलेक्ट्रॉन के गोल कक्ष की बात करना बहुत ही बड़ी भूल होगी।

p-इलेक्ट्रॉन का क्षेत्र एकदम अलग आकार रखता है। उसका स्वरूप व्यायाम करते समय प्रयोग किये जाने वाले डम्बेल जैसा है। इलेक्ट्रॉनों की अन्य कोटियां और भी अधिक जटिल आकार रखती हैं।

मेन्देलियेव सारणी में किसी भी परमाणु के लिये सिद्धांत (कुछ प्रायोगिक अतिश्योक्ति के साथ ही) से यह पता चल जाता है कि उसमें किसी भी कोटि के कितने इलेक्ट्रॉन विद्यमान है।

क्या इलेक्ट्रॉनों का गति की इन कोटियों में विस्तारण उनके K, L, M... ऊर्जा स्तरों में विस्तारण, जिसके बारे में हमने आपको पिछले अध्याय में बतलाया था, के साथ कोई सम्बन्ध रखता है? जी हां, वह सम्बन्ध एकदम प्रत्यक्ष है। सिद्धांत तथा प्रयोगों से पता चलता है कि K-स्तर वाले इलेक्ट्रॉन केवल s-कोटि के ही हो सकते हैं, तथा L-स्तर के इलेक्ट्रॉन s-तथा p-कोटि के, और M-स्तर के—s-, p-तथा d-कोटि के हो सकते हैं, इत्यादि।

हम परमाणुओं की इलेक्ट्रॉनी संरचना का अध्ययन बिल्कुल नहीं करेंगे। सारणी के प्रथम पांच तत्त्वों की इलेक्ट्रॉनी संरचना को ही देखेंगे। हाइड्रोजन, हीलियम, लिथियम तथा बेरिलियम के परमाणु केवल s-कोटि के इलेक्ट्रॉन रखते हैं। बोरॉन का परमाणु चार s-

इलेक्ट्रॉन तथा एक p-इलेक्ट्रॉन रखता है।

s-इलेक्ट्रॉन के आकाश के क्षेत्र का गोल सममित आकार एक इलेक्ट्रॉन वाले परमाणु के चुम्बकीय आघूर्ण के बारे में हमारे विचारों को संदेहात्मक बना देगा। वस्तुतः, जब आवेग का आघूर्ण समान तथा सब दिशाओं में समान प्रायिकता के मान रख सकता है तो इस विन्यास का औसतन घूर्णन आघूर्ण यानी कि चुम्बकीय आघूर्ण भी शून्य के बराबर होने चाहिए। इस स्वाभाविक निष्कर्ष पर क्वान्टमी भौतिकी भी पहुंचती है: s-इलेक्ट्रॉन वाले परमाणु चुम्बकीय आघूर्ण नहीं रख सकते।

यदि ऐसा है तो फिर असमान चुम्बकीय क्षेत्र में मेन्देलियेव सारणी के प्रथम चार तत्त्वों के परमाण्वीय किरण-पूंज विचलित नहीं होने चाहिये। लेकिन वास्तव में क्या ऐसा होता है? प्रतीत होता है कि यह पूर्वकथन हाइड्रोजन एवं लिथियम के परमाणुओं के लिये सही नहीं है। इन परमाणुओं के किरण-पुंज अपवाद रूप से विचित्रता से व्यवहार करते हैं। दोनों ही स्थितियों में परमाणुओं के किरण-पुंजों का दो घटकों में विपाटन होता है जिनका विचलन प्रारम्भिक दिशा से समान दूरी पर विपरीत दिशाओं में होता है। लेकिन यह समझ के बाहर है!

कणों के चुम्बकीय आघूर्ण

इलेक्ट्रॉन का प्रचक्रण सन् १९२५ में प्रकट हुआ। सूक्ष्म-जगत की घटनाओं में भाग लेने वालों की संख्या में इसको स्वीकार करने की अनिवार्यता पर अब्राहम गाउडस्मिथ तथा जार्ज उलेनबेक ने ज़ोर डाला। यह मानते हुए कि इलेक्ट्रॉन का अपना आवेग आघूर्ण होता है, इन शोधकर्ताओं ने सिद्ध किया कि परमाण्वीय, स्पैक्ट्रमों के बारे में उस समय तक इकट्ठे हुए सभी भ्रमों का स्वाभाविक रूप से हल हो जाएगा।

परमाण्वीय किरण-पुंजों के विपाटन पर प्रयोग कुछ समय पश्चात् ही आरम्भ किये गये थे। और जब यह स्पष्ट हो गया कि इस स्थिति में भी नोट किये गये तथ्यों को प्रचक्रण की धारणा की मदद से समझा जा सकता है, तब ही सभी भौतिकतज्ञों को प्रचक्रण में विश्वास पैदा हुआ।

कुछ समय बीतने के बाद यह ज्ञात हुआ कि निजी घूर्णन – आघूर्ण – न केवल इलेक्ट्रॉन का ही होता है, बल्कि सभी प्रारम्भिक कणों का होता है।

हम पहले ही बता चुके हैं कि "प्रचक्रण" नाम से ही दृष्टिगोचरता की ओर आकृष्ट होना स्वाभाविक है। चूंकि आवेग आघूर्ण घूमने वाले ठोस पदार्थ के गुण के रूप में भौतिकी में प्रवेश कर गया है तो संरक्षण नियम को बचाने के लिये प्रारम्भिक कणों को आवेग आघूर्ण का कोई भी थोड़ा-सा मान देना आवश्यक है। यहां कई भौतिकतज्ञों ने कण के अपने कक्ष के चारों ओर घूर्णन के दृष्टिगोचर चित्र का एकदम सहारा लिया। यह भोली-भाली कल्पना आलोचना को सह न सकी: प्रारंभिक कण के अपने अक्ष के चारों ओर घूर्णन के बारे में कहना वैसा ही होगा जैसे कि कोई गणितीय बिन्दु के उसके अपने अक्ष के चारों ओर घूर्णन के बारे में बात करें।

दृष्टिगोचरता के समर्थकों को कुछ अप्रत्यक्ष रूप से इलेक्ट्रॉन का आकार निश्चित करने में सफलता तो मिल ही गई, यानी वे यह सिद्ध करने में सफल हो गए कि यदि यह धारणा इलेक्ट्रॉन पर लागू की जा सकती है तो इलेक्ट्रॉन का आकार एक निश्चित मान से कम ही होना चाहिये। प्रचक्रण का मान ज्ञात है – हम इसे कुछ पंक्तियों के बाद बतलाएंगे। यदि आप को मालूम है कि इलेक्ट्रॉन का कोई आकार है तो आप उसकी "सतह पर स्थित बिन्दुओं" के घूमने की रफ़्तार ज्ञात कर सकते हैं। ज्ञात होता है कि यह रफ़्तार प्रकाश की रफ़्तार से अधिक है। हठ के कारण आपेक्षिकता सिद्धांत को त्यागना पड़ता।

दृष्टिगोचरता पर सबसे गहरी चोट करने वाला प्रमाण इस बात से मिलता है कि न्यूट्रॉन, जिसपर कोई भी वैद्युत आवेश नहीं है, का भी प्रचक्रण है। यह तर्क निर्णायक क्यों है? इस का उत्तर स्वयं दें।

यदि कण को आवेशित गोले के रूप में देखा जाये तो कक्ष के चारों ओर घूर्णन से ऐम्पेयरी धारा ही प्राप्त होती। लेकिन चूंकि उदासीन कण आवेग आघूर्ण तथा चुम्बकीय आघूर्ण रखता है (न्यूट्रॉन के इन गुणों के बारे में हम आपको चौथी पुस्तक में बतलाएंगे), तो इस की ऐम्पेयरी धारा के साथ समानता करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

लेकिन हमें किसी भविष्यवक्ता की भांति यह नहीं कहना चाहिये कि प्रारंभिक कणों के प्रचक्रण तथा चुम्बकीय आवेग को किसी साधारण लेकिन अभी तक अज्ञात नियम के आधार पर समझना असम्भव है। (अद्वितीय इंग्लिश भौतिकतज्ञ रोल डिरेक के सिद्धांत की मदद से यह समस्या आंशिक रूप से हल करने की कोशिश की जा रही है, लेकिन हम इस के बारे में पाठक को अभी कुछ नहीं बतलाएंगे, क्योंकि वह अभी काफ़ी कल्पना मात्र ही है)। लेकिन आज हमें कण के आवेग आघूर्ण तथा चुम्बकीय आघूर्ण को दर्शाने वाली "सूइयों" को प्रारंभिक धारणा के रूप में ही मानना चाहिये (जो किसी भी अधिक सरल धारणा पर न ले जाए)।

करीब पचास वर्ष पहले बहुत-से भौतिकतज्ञ आइन्स्टाइन के निम्न कथन का समर्थन करते थे: "हर प्रकार का भौतिक सिद्धांत ऐसा होना चाहिये कि उसे, सभी परिकलनों के अलावा, सरलतम मॉडलों की मदद से प्रस्तुत किया जा सके।" दुख की बात है कि महान् व्यक्ति की यह धारणा गलत साबित हुई। कई वर्षों से भौतिकतज्ञ ऐसे सिद्धांतों पर कार्य करते चले आ रहे है जिनमें मापी जाने वाली मात्राओं की संख्या काफ़ी है और उन्हें सचित्र स्वरूप देना असम्भव है।

इलेक्ट्रॉन तथा अन्य प्रारंभिक कणों के कोई "ध्रुव" नहीं हैं। अनेक स्थितियों में हम इन कणों के बारे में विश्वासपूर्वक कहते हैं कि ये बिन्दु हैं तथा यह मान भी लेते हैं कि प्रारंभिक कणों का आकार नहीं होता, लेकिन फिर भी हम उन्हें दो सदिश गुण देने पर विवश हो जाते हैं–आवेग आघूर्ण (प्रचक्रण) तथा चुम्बकीय आघूर्ण। ये दोनों सदिश सदैव एक ही रेखा के साथ-साथ रहते हैं। कभी-कभी ये समानांतर होते हैं तथा कभी–असमानांतर।

पर प्रयोग से सिद्ध होता है कि पृष्ठ ११७ पर दिये गये आवेग आघूर्ण तथा चुम्बकीय आघूर्ण के प्रक्षेपणों के सामान्य सूत्र स्वयं आघूर्णों के लिये भी सही हैं। स्पैक्ट्रमी तथा असमान चुम्बकीय क्षेत्र में परमाणुओं के किरण-पुंज के विपाटन के प्रयोग–सभी प्रकार के प्रयोग किसी भी प्रकार के शंस्य के बिना समझे जा सकते हैं, यदि इलेक्ट्रॉन के लिये आवेग आघूर्ण के प्रक्षेपण के सूत्र में m संख्या के स्थान पर दो मानों को रखने की अनुमति दे दी जाए: $\pm 1/2$ जहां तक चुम्बकीय

ग्राघूर्ण के प्रक्षेपण के सूत्र का प्रश्न है तो m संख्या के दो मान हो सकते हैं ± 1।

इलेक्ट्रॉन के प्रचक्रण का संख्यात्मक मान $\frac{1}{2}\frac{h}{2\pi}$ है तथा वह केवल दो दिशाग्रों–क्षेत्र के साथ-साथ या क्षेत्र के विपरीत – में ही स्थित हो सकता है। जहां तक इलेक्ट्रॉन के चुम्बकीय ग्राघूर्ण का प्रश्न है तो वह भी, प्रचक्रण की भांति, क्षेत्र में दो दिशाएं रख सकता है, तथा उसका संख्यात्मक मान एक बोर मैग्नेटॉन के बाराबर है।

ग्रब हम परमाणुग्रों के किरण-पुंजों पर किये गये प्रयोगों के परिणामों पर ग्राते हैं। यहां हम ग्रापको दिखाएंगे कि प्रचक्रण की मदद से परमाणुग्रों के किरण-पुंजों के विपाटन के गुण कितनी सरलता से समझाए जा सकते हैं।

वस्तुतः इसे कैसे समझा जाए कि हीलियम तथा बेरिलियम के परमाण्वीय किरण-पुंजों का विपाटन नहीं होता? इसका उत्तर निम्न प्रकार है। इन परमाणुग्रों के इलेक्ट्रॉनों का कक्षीय ग्राघूर्ण है ही नहीं क्योंकि ये s–"कोटि" के हैं। ग्रौर इनके प्रचक्रणों की दिशाएं भी विपरीत हैं। सामान्यतः देखा जाए तो इसका ग्राधार कहीं भी नज़र नहीं ग्राता लेकिन सहज ज्ञान से देखा जाए तो यह स्वाभाविक ही लगता है। वह नियम, जिसके ग्रनुसार परमाणु में इलेक्ट्रॉनों का युगल इस प्रकार स्थित होता हो ताकि उसके प्रचक्रणों की दिशाएं विपरीत रहे, पाऊली नियम कहलाता है (वोल्फगन्ग पाऊली १९००–१९५८)।

कितनी सारी परिकल्पनाएं इकट्ठी हो गई हैं! ... जी हां, कम भी नहीं हैं। लेकिन ये सब मिलकर क्वान्टमी भौतिकी की एक मज़बूत इमारत बनाते हैं, जिसके फलस्वरूप इतने ग्रधिक परिणाम निकलते हैं कि यह कहने में रत्ती भर भी शक नहीं रहता कि इलेक्ट्रॉन का प्रचक्रण होना चाहिये, कि प्रचक्रण की संख्या का मान 1/2 के बराबर रखा जाना चाहिये ग्रौर इलेक्ट्रॉनों के युगल के प्रचक्रण पर पाऊली नियम लागू करना चाहिये–इन सब के बारे में किसी भी भौतिकतज्ञ को रत्ती भर भी शक या संदेह नहीं रहता है। ये सब परिकल्पनाएं मिलकर सूक्ष्म-जगत् की संरचना करती हैं।

आइये, परमाणवीय किरण-पुंजों पर वापिस आ जाएं। हमने अभी-अभी आपको यह समझाया कि हीलियम तथा बेरिलियम के परमाणुओं के किरण-पुंजों का विपाटन क्यों नहीं होता।

लेकिन हाइड्रोजन तथा लीथियम का कैसा व्यवहार होता है?

हाइड्रोजन में एक इलेक्ट्रॉन है। उसका कक्षीय आघूर्ण शून्य है, चूंकि यह s-इलेक्ट्रॉन है। इलेक्ट्रॉन के प्रचक्रण के प्रक्षेपण के दो मान हो सकते हैं: धन 1/2 तथा ऋण 1/2, यानी प्रचक्रण या तो चुम्बकीय क्षेत्र की दिशा के साथ-साथ या उसके विपरीत स्थित हो सकता है। यही कारण है कि परमाण्वीय किरण-पुंज का विपाटन दो घटकों में होगा। यही स्थिति लिथियम के परमाणु की होगी, चूंकि उसके दो इलेक्ट्रॉन तो अपने प्रचक्रणों का परस्पर प्रतिकरण कर देंगे, तथा तीसरा इलेक्ट्रॉन ठीक उसी प्रकार व्यवहार करेगा, जैसे कि हाइड्रोजन का एकमात्र इलेक्ट्रॉन करता है।

ठीक इसी प्रकार अन्य तत्वों के परमाणु व्यवहार करेंगे जिनके ऊपरी कोश में एक अयुग्मित इलेक्ट्रॉन स्थित है।

अन्य तत्वों के परमाणुओं के अधिक संख्या में घटकों में विपाटन के लिये मुझे बगैर प्रमाण के कई परिकल्पनाएं प्रस्तुत करनी पड़ेगी जिनको क्वान्टमी भौतिकी में सिद्ध किया जाता है। यह बात ध्यान में रखते हुए कि केवल s-इलेक्ट्रॉन ही कक्षीय आघूर्ण नहीं रखता तथा इलेक्ट्रॉन का प्रचक्रण केवल उसी स्थिति में व्यक्त होगा जब वह अपने ऊर्जा स्तर पर अकेला स्थित होता है, भौतिकतज्ञों को हर प्रकार के परमाण्वीय किरण-पुंजों के व्यवहार को समझाने में सफलता मिली। भौतिकी का यह दिलचस्प अध्याय पढ़ कर बड़े-से बड़ा शंकालु भी इस बात पर विश्वास करने लगेगा कि क्वान्टमी भौतिकी में स्वीकृत सभी प्रमाणरहित परिकल्पनाएं प्रकृति के साधारण नियम ही हैं।

मुझे डर है कि अनेक पाठक इन पंक्तियों को पढ़कर असन्तुष्ट रह जाएंगे। बेशक, केवल असमान चुम्बकीय क्षेत्र में परमाण्वीय किरण-पुंजों पर प्रयोग ही प्रचक्रण जैसे "विचित्र" विचार को प्रस्तुत करने के लिये पर्याप्त नहीं हैं। मैं आपके समक्ष प्रचक्रण की विद्यमानता के बारे में तथ्यों तथा प्रमाणों को बहुत ही बड़ी संख्या में प्रस्तुत कर सकता हूं, लेकिन हमारी पुस्तक काफ़ी छोटी-सी है।

उदाहरण के तौर पर, ऊपर बताई गई बातों के साथ कुछ भी समानता न रखने वाली परिघटना – चुम्बकीय अनुनाद – का क्या महत्व है? सेंटीमीटर बैंड वाली रेडियो तरंगों का पदार्थ द्वारा अवशोषण हो जाता है जब उन्हें अपने प्रचक्रणों को मोड़ना पड़ता है। चुम्बकीय अनुनाद पर प्रयोगों के समय पदार्थ को जिस स्थायी चुम्बकीय क्षेत्र में रखते हैं, उसकी तथा इलेक्ट्रॉन के चुम्बकीय आघूर्ण की पारस्पर क्रिया की ऊर्जा अर्थात् दो ऊर्जाओं का अंतर (समानांतर तथा असमानांतर स्थिति) सरलता से ज्ञात की जा सकती है। यह अंतर अवशोषित वैद्युत चुम्बकीय तरंग के क्वान्टम के बराबर होता है। हम प्रयोग द्वारा तरंग की आवृत्ति का मान बहुत ही परिशुद्धता के साथ निश्चित करते हैं और यह देखते हैं कि यह मान क्षेत्र के प्रेरण तथा इलेक्ट्रॉन के चुम्बकीय आघूर्ण के मान के आधार पर ज्ञात किये गये मान के साथ एकदम मिलता है।

यह परिघटना विज्ञान के एक बड़े भाग का आधार बनती है: इलेक्ट्रॉनी अनुनाद का सिद्धांत। बहुत ही विचित्र बात है कि यही घटनाएं, निस्संदेह, दूसरे बैंड में परमाण्वीय नाभिकों के लिए देखने को मिलती हैं। नाभिकीय चुम्बकीय अनुनाद पदार्थ की रासायानिक संरचना के अध्ययन में उपयोग किया जाता है।

इससे पहले कि हम आगे चलें, अच्छा रहेगा यदि हम उन सभी तथ्यों के आधार पर एक निष्कर्ष पर पहुंच जाए, जो उन विन्यासों से सम्बंधित हैं जो या तो चुम्बकीय क्षेत्र बनाते हैं, या चुम्बकीय क्षेत्र की उपस्थिति में विचलित होते हैं।

सबसे पहले यह पुनः बता दें कि ऐम्पेयर की परिकल्पना आंशिक रूप से ही सही सिद्ध हुईः चुम्बकीय क्षेत्रों को केवल गतिमय वैद्युत आवेश ही उत्पन्न नहीं करते हैं। चुम्बकीय क्षेत्र के अन्य स्रोत है: प्रारंभिक कण तथा उनमें भी वे इलेक्ट्रॉन सर्वप्रथम आते हैं जिनका अपना चुम्बकीय आघूर्ण होता है। पृष्ठ १०५ पर दिया गया परस्पर प्रतिक्रिया का वर्गीकरण अपूर्ण है। प्राकृतिक तथा अप्राकृतिक चुम्बक, वैद्युत धाराएं (निर्वात में वैद्युत कणों की धाराएं भी) तथा प्रारंभिक कण – सभी चुम्बकीय क्षेत्रों को बनाते हैं। ये सब विन्यास तथा कण चुम्बकीय क्षेत्र द्वारा प्रभावित भी होते हैं।
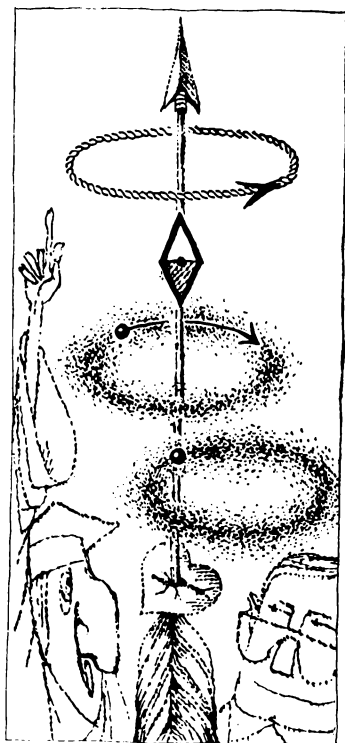
चित्र 3.6

चुम्बकीय क्षेत्र तथा उसके प्रभाव की सबसे महत्वपूर्ण लाक्षणिक मात्रा है चुम्बकीय आघूर्ण का सदिश। धाराओं के लिये यह सदिश धारा की आकृति के स्वरूप द्वारा निश्चित किया जाता है। सूई का आघूर्ण पदार्थ की परमाण्वीय संरचना के साथ काफ़ी जटिल रूप से जुड़ा है लेकिन उसे मापना कठिन नहीं है। नाभिक के क्षेत्र में घूमने वाले इलेक्ट्रॉनों का "कक्षीय" चुम्बकीय आघूर्ण होता है जैसे कि (आप कृपया, "जैसे कि" पर ध्यान दीजिए) नाभिक के चारों ओर इनके घूमने से विद्युत धारा पैदा होती हो। और, अंत में, निजी चुम्बकीय आघूर्ण पहला गुण है जो प्रारंभिक कणों का लाक्षणिक है।

हम यहां चित्र 3.6 प्रस्तुत कर रहे हैं ताकि आप और अच्छी प्रकार इन आधारभूत बातों को समझ लें। यह चित्र "चुम्बकीय आत्मा" या यदि आप चाहें तो चुम्बकीय दिल के बारे में (फ़्रांसीसी भाषा में चुम्बक को "aimant" कहते हैं जिसका अर्थ है "प्यार करना") आज तक प्राप्त हमारे संपूर्ण ज्ञान का परिणाम है। चित्र इस बात को रेखांकित करता है कि स्थूल धारा छड़-चुम्बक, इलेक्ट्रॉन की कक्षीय गति तथा स्वयं इलेक्ट्रॉन – सभी एक ही भौतिक धारणा की विशेषताएं हैं।

प्रयोग यह सिद्ध करता है कि चुम्बकीय क्षेत्र में गतिमय इलेक्ट्रॉनों का किरण-पुंज सीधे मार्ग से विचलित हो जाता है। जैसा कि पृष्ठ १०७ पर बतलाया गया था कि इस बल की दिशा, जिसे लोरेन्त्स का नाम दिया गया, चुम्बकीय बल रेखाओं तथा इलेक्ट्रॉनों की रफ़्तार के सदिश पर लम्ब है। इसका मान $F = evB$ सूत्र द्वारा निश्चित किया जाता है। यह लोरेन्त्स बल का सरलतम समीकरण है जो केवल उस स्थिति में सही है जब इलेक्ट्रॉनों की रफ़्तार और चुम्बकीय क्षेत्र की दिशा समकोण बनाते हैं।

यदि इस तथ्य के साथ हम अपना विश्वास भी जोड़ दें कि धात्विक चालक में स्वतंत्र इलेक्ट्रॉन होते हैं, तो सरल परिकलनों द्वारा हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि चालक की चुम्बकीय क्षेत्र में कुछ गतियों के फलस्वरूप विद्युत धारा उत्पन्न होनी चाहिए।

यह परिघटना, कहा जा सकता है कि समस्त आधुनिक तकनीकी का आधार है, विद्युत चुम्बकीय प्रेरण कहलाती है। अब हम इसका नियम ज्ञात करें।

चित्र 3.7 में चालक की आकृति दी गई है दो धात्विक तारों पर लुढ़कने वाले एक छड़ AC से बनी है जिसकी लम्बाई l है। यह छड़ चुम्बक के ध्रुवों के मध्य इस प्रकार स्थित हो सकती है कि वह आकृति की बंद अवस्था को नहीं बिगाड़ेगी। यदि छड़ बल रेखाओं पर लम्ब बनाती हुई लुढ़केगी तो चालक के इलेक्ट्रॉनों पर बल प्रभाव डालेगा और आकृति में विद्युत धारा का प्रवाह होगा।

चित्र 3.7

हम निम्न निष्कर्ष पर

पहुंचते हैं जिसके महत्व को कभी-भी अत्यधिक आंका नहीं जा सकता : बंद चालक में भी विद्युत धारा उत्पन्न हो सकती है, हालांकि शृंखला में कोई भी सेल या धारा का स्रोत नहीं है।

आइये विद्युत गति बल (electro motive force), को मापें अर्थात् वह कार्य जो आवेश की इकाई को बंद आकृति के साथ-साथ ले जाने के लिये आवश्यक है। यह कार्य बल तथा पथ के गुणनफल के बराबर होता है। यह केवल उसी भाग में होता है जो क्षेत्र में स्थित होता है। पथ की लम्बाई l है तथा आवेश की इकाई पर बल vB के बराबर है।

प्राप्त होनेवाले विद्युत गति बल को प्रेरण का विद्युत गति बल कहते हैं। इसका मान निम्न सूत्र द्वारा ज्ञात किया जाता है :

$$\mathscr{E}_{\text{प्रेरण}} = vBl$$

अच्छा होगा यदि इस सूत्र को इस प्रकार साधारण बना दिया जाये कि किसी भी चालक आकृति की किसी भी गति के लिये सही हो। इसे हासिल करने के लिये हम निम्न प्रकार चलेंगे : चालक छड़ ने τ समय में x लम्बाई तय की, उसकी रफ़्तार v बराबर हुई x/τ के। चालक आकृति का क्षेत्रफल $S = xl$ मान से कम हो गया। प्रेरण के विद्युत गति बल का सूत्र हुआ :

$$\mathscr{E}_{\text{प्रेरण}} = BS/\tau$$

लेकिन सूत्र के अंश का क्या अर्थ हुआ? वह पर्याप्त रूप से स्पष्ट है : BS – यह वह मान है जिससे चुम्बकीय धारा बदल गई (बल रेखाओं की संख्या) जो आकृति से गुजरती है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारा प्रमाण एक बहुत ही सरल स्थिति पर आधारित है। पाठक को केवल मुझ पर विश्वास करना होगा कि इसी प्रकार किसी भी उदाहरण को सिद्ध किया जा सकता है। प्राप्त होने वाला सूत्र सर्वाधिक सामान्य मान रखता है तथा वैद्युत-चुम्बकीय प्रेरण का नियम निम्न प्रकार लिखा जाता है : प्रेरण का विद्युत गति बल हमेशा उसी स्थिति में होता है जब बल रेखाओं की संख्या बदलती है, जो आकृति को कम कर देती है। इस बीच प्रेरण

का विद्युत गति बल संख्यात्मक रूप से समय की इकाई में चुम्बकीय धारा के परिवर्तन के बराबर होता है।

चुम्बकीय क्षेत्र में आकृति के ऐसे भी स्थानांतरण होते हैं जब धारा उत्पन्न नहीं होती। यदि आकृति को समान क्षेत्र में बल रेखाओं के समानांतर चलाया जाए तो भी धारा नहीं पैदा होगी। यदि समान चुम्बकीय क्षेत्र में आकृति को घुमाया जाये तो धारा उत्पन्न हो जाएगी। धारा उस स्थिति में भी उत्पन्न हो जाएगी यदि आकृति को छड़-चुम्बक के ध्रुव के पास लाया जाए या उससे दूर ले जाया जाए।

चित्र 3.8

लेकिन प्रयोगों से पता लगता है कि हमारे इस सामान्य तथ्य के कई और अर्थ हैं। अभी तक उन स्थितियों का ज़िक्र कर रहे थे जब धारा की आकृति तथा चुम्बकीय क्षेत्र के स्रोत को परस्पर स्थानांतरित किया जा रहा था। अन्तिम सूत्र जिसे अभी हमने निर्धारित किया है, गति के बारे में कुछ नहीं बताता। उसमें केवल चुम्बकीय धारा के परिवर्तन से संबंधित बात चल रही है। लेकिन चालक आकृति में से चुम्बकीय धारा के परिवर्तन के लिये स्थानांतरण आवश्यक नहीं है।

वस्तुतः चुम्बकीय क्षेत्र के स्रोत के रूप में स्थायी चुम्बक के स्थान पर आकृति या, और भी अच्छा रहेगा, यदि कुंडली को ले लिया जाए जिसमें किसी भी बाहरी स्रोत से विद्युत धारा छोड़ दी जाए। धारा नियंत्रक या अन्य किसी उपकरण की मदद से इस प्रारंभिक कुंडली में धारा को बदला जा सकता है जो चुम्बकीय क्षेत्र का स्रोत है। तब आकृति को कम करने वाली चुम्बकीय धारा का परिवर्तन होगा हालांकि चुम्बकीय क्षेत्र के स्रोत तथा चालक आकृति की स्थिति अपरिवर्तित रहेगी (चित्र 3.8)।
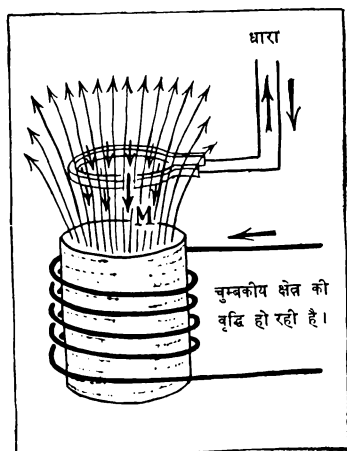
क्या इस स्थिति में हमारा साधारण नियम काम करेगा? इस प्रश्न का उत्तर प्रयोग देता है। और यह उत्तर सकारात्मक है। इस बात पर निर्भर न करते हुए कि बल रेखाओं की संख्या किस प्रकार बदलती है पिछले पृष्ठों पर प्रस्तुत किया गया विद्युत गति बल का सूत्र सही रहता है।

प्रेरण धारा की दिशा

अब हम आपको यह बतलाने जा रहे हैं कि एक सरल सार्वभौम नियम है जो उत्पन्न होने वाले प्रेरण धाराओं की दिशाओं से सम्बंधित है। आइये, पहले कुछ उदाहरणों को देखें, फिर उनके आधार पर कोई निष्कर्ष निकालेंगे।

चित्र 3.7 पर वापिस आते हुए निम्न बात पर ध्यान दें। आकृति का क्षेत्रफल कम करने पर आकृति में से गुज़रने वाली चुम्बकीय धारा कम हो जाती है। चित्र में दिखाई गई धारा की दिशा ऐसी है कि पैदा होने वाली धारा का चुम्बकीय आघूर्ण बल रेखाओं की दिशा की तरफ़ है। इसका, अर्थ यह हुआ कि प्रेरित धारा के निजी क्षेत्र की दिशा इस प्रकार है ताकि वह चुम्बकीय क्षेत्र के कम हो जाने में "बाधा" डाल सके।

विपरीत स्थिति में भी हम इसी निष्कर्ष पर पहुंचेंगे। यदि आकृति का क्षेत्रफल बढ़ता है तो आकृति में से गुज़रने वाली धारा भी बढ़ती है। लेकिन अब आकृति का चुम्बकीय आघूर्ण बल रेखाओं की विपरीत दिशा में होगा। इसका अर्थ स्पष्ट है कि पैदा होने वाली प्रेरित धारा का क्षेत्र उस प्रभाव के मार्ग में बाधा बनता है जिससे वह बना है।
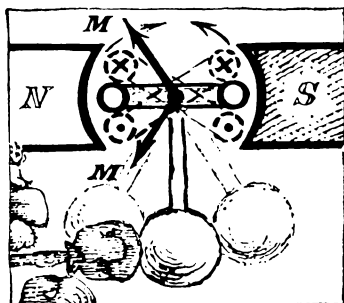
चित्र 3.9

एक और उदाहरण लें। मान लें कि आकृति चुम्बक के ध्रुवों के बीच इस प्रकार स्थित है कि उसमें से गुज़रने वाली धारा शून्य के बराबर है।

आइये आकृति को वामावर्त तथा दक्षिणावर्त दिशा में घुमाएं। दोनों स्थितियों को चित्र 3.9 में दिखाया गया है। मोटी रेखा द्वारा आकृति का प्रारंभिक अवस्था में विक्षेपण दिखाया गया है, तथा बिन्दु रेखा द्वारा घुमाये जाने के बाद यानी कि जब धारा उत्पन्न हो जाती है। बायें हाथ के नियम को प्रयोग करके हम प्रेरित धारा की दिशा निश्चित करते हैं जो दोनों ही स्थितियों में उत्पन्न होती है। हमारे चित्र में उत्तरी ध्रुव बायीं ओर है। इसीलिये दक्षिणावर्त में घुमाने पर प्रेरित धारा का चुम्बकीय आघूर्ण नीचे की ओर है, और वामावर्त्त में घुमाने पर—ऊपर की ओर। घुमाव का कोण जितना अधिक बढ़ता है आकृति का निजी चुम्बकीय क्षेत्र उतना ही अधिक कम हो जाता है। हम देखते हैं कि यहां भी वही नियम लागू है।

आइये अब देखें कि असमान क्षेत्रों में आकृति का क्या व्यवहार होगा? चित्र 3.8 पर वापिस आते हैं। अनुमान करें कि विद्युत-चुम्बक का धारा बल अपरिवर्त्तित है और देखते हैं कि आकृति के स्थानांतरण से क्या होगा। यदि आकृति को उत्तरी ध्रुव के समीप लाया जाये तो चुम्बकीय आघूर्ण बल रेखाओं की विप ीत दिशा की ओर होगा। यदि आकृति को दूर किया जाए तो प्रेरित धारा का निजी क्षेत्र क्षेत्र को और अधिक तीव्र बना देता। बायें हाथ के नियम को पुनः प्रयोग करके इस व्यवहार को सिद्ध किया जा सकता है।

और प्रत्यावर्त्ती धारा के चुम्बकीय क्षेत्रों की स्थिति में क्या होगा? प्रारंभिक कुंडली में धारा बल के अधिक या कम होने के कारण धारा में परिवर्तन होता है। आकृति में (आप चित्र 3.8 को एक बार फिर देखिए) विद्युत गति बल उत्पन्न हो जाता है।

और धारा की दिशा किस प्रकार निश्चित की जाए? आप हाथ के नियमों को प्रयोग नहीं कर सकते क्योंकि गति तो है ही नहीं। यहीं तो फिर हमारा साधारण नियम काम में आएगा। आप देखेंगे कि इस स्थिति में भी आकृति को कम करने वाली बल रेखाओं की संख्या के कम या अधिक होने के कारण उत्पन्न होने वाली प्रेरित धारा की दिशा पर वहीं नियम लागू हो रहा है: प्रेरित धारा ऐसा क्षेत्र बनाएगी, जो प्रतीत होगा कि उस चुम्बकीय क्षेत्र की क्षतिपूर्त्ति कर रहा है जो प्रेरण का कारण है।

विद्युत चुम्बकीय प्रेरण के नियम की खोज का इतिहास

विद्युत चुम्बकीय प्रेरण की खोज उंगलियों पर गिनी जा सकने वाली घटनाओं से सम्बंधित है जिन्होंने मानव के विकास पर निर्णायक प्रभाव डाला है। इसलिये इस खोज के इतिहास पर न रुकना माफ़ न किया जाने वाला अपराध होगा। इसकी खोजचुम्बकीय क्षेत्र में इलेक्ट्रॉनी किरण-पुंज के व्यवहार के अध्ययन से कुछ पहले ही हो गई थी, तथा घटनाओं का इतिहासिक क्रम पिछले अनुच्छेद में लिखी गई बातों के क्रम से बिल्कुल नहीं मिलता है: तर्क तथा सोचने का क्रम ज़रूरी नहीं है कि घटनाओं के इतिहासिक क्रम के समानांतर ही चलें।

उस समय जब फैराडे ने उन प्रयोगों पर कार्य आरम्भ किया, जिनके आधार पर विद्युत चुम्बकीय प्रेरण की खोज हुई, विद्युत तथा चुम्बकीय क्षेत्रों के सिद्धांत की स्थिति निम्न थी: दिष्ट धारा को बनाना तथा विद्युत श्रृंखलाओं में उनके व्यवहार के नियमों का ज्ञान भौतिकतज्ञों के लिये कठिनाई का विषय नहीं था। स्थायी चुम्बक पर धारा का प्रभाव तथा धारा का धारा पर परस्पर प्रभाव सिद्ध किया गया। यह भी स्पष्ट हो गया कि दिष्ट धारा अपने चारों ओर चुम्बकीय क्षेत्र बनाती है, जिसे चुम्बक या अन्य धारा के द्वारा मापा जा सकता है। लेकिन विपरीत परिघटना देखने को मिलती? क्या चुम्बकीय क्षेत्र चालक में धारा उत्पन्न नहीं कर सकती?

सन १८२१ में फैराडे अपनी डायरी में निम्न बातें नोट करता है: "विद्युत में चुम्बकीयता को बदलना"। महान् वैज्ञानिक को यह हासिल करने के लिये दस वर्ष लगे। इतने वर्षों तक असफलता का कारण यह था कि फैराडे चालक को स्थायी क्षेत्र में रख कर धारा पैदा करने की कोशिश कर रहा था। लेकिन सन १८३१ में जुटे रहने के फलस्वरूप सफलता प्राप्त हुई। नीचे प्रस्तुत की जा रही फैराडे द्वारा सन १८३१ में लिखी पंक्तियां, परिघटना की खोज का पहला वर्णन है।

"एक चौड़ी लकड़ी की रील पर २०३ फुट लम्बी ताम्र की तार लपेटी गई और उसके फेरों के बीच उतनी ही लम्बाई का एक अन्य तार, लेकिन पहले तार से सूती कपड़े द्वारा पृथक किया गया, लपेटा
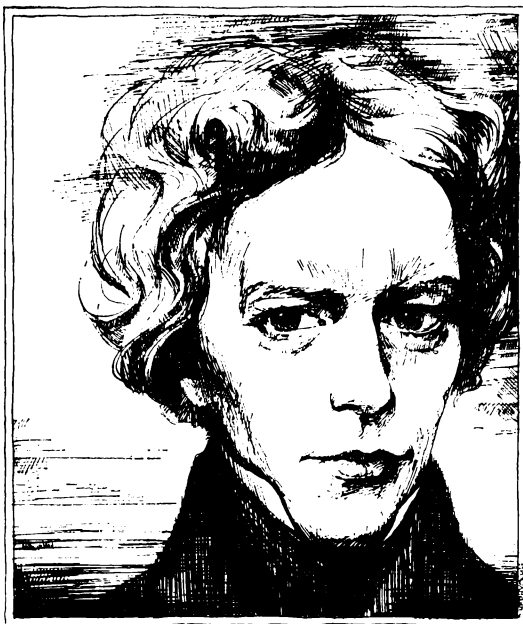
माईक्ल फ़ैराडे (१७६१–१८६७) – महान इंग्लिश भौतिकविद्। (सन् १८३१ में) वैद्युत चुम्बकीय प्रेरण परिघटना की खोज का श्रेय उन्हें है। फ़ैराडे ने यह खोज अचानक ही नहीं की, वह इस पर कार्य कर रहे थे। वैद्युत चुम्बकीय प्रेरण के फ़ैराडे के नियम वैद्युत तकनीकी का आधार बनाते हैं।

वैद्युत-अपघटन के फ़ैराडे के नियमों का मूल्यांकन करने में अतिश्योक्ति हो ही नहीं सकती। इस महान् वैज्ञानिक ने आज के परिचित पारिभाषिक शब्दों, जैसे ऐनोड, कैथोड, ऋणायन-घनायन, आयन, विद्युत-अपघट्य, को प्रचलित किया और इनका अर्थ समझाया।

फ़ैराडे ने सिद्ध किया कि मध्यवर्ती माध्यम वैद्युत पारस्परिक क्रिया पर प्रभाव डालता है।

ध्रुवण समतल के चुम्बकीय घूर्णन की खोज का भी उल्लेख करना चाहिए। यह तथ्य कि सभी पदार्थ या तो अनुचुम्बकीय होते हैं, या प्रतिचुम्वकीय होते हैं – फ़ैराडे ने ही ज्ञात किया।

अभी तक विश्व ने फ़ैराडे से अधिक महान् भौतिकविद्-प्रयोगकर्त्ता नहीं देखा है।

गया। इनमें से एक सर्पिल को गैल्वेनोमीटर जोड़ दिया गया तथा दूसरे सर्पिल को शक्तिशाली सेल के साथ... शृंखला चालू करने पर विचित्र बात देखी गई लेकिन गैल्वेनोमीटर पर काफ़ी हल्का प्रभाव था, और ठीक ऐसा ही धारा बंद करने पर नोट किया गया। लेकिन किसी एक सर्पिल में से निर्विघ्न रूप से धारा को प्रवाहित करने पर न तो गैल्वेनोमीटर पर कोई प्रभाव देखा गया और न ही दूसरे सर्पिल पर किसी प्रकार का कोई प्रभाव देखा गया, हालांकि सेल से जोड़े हुए पूरे सर्पिल का गर्म होना तथा ध्रुवों के बीच बनने वाले स्फुलिंग इस बात का प्रमाण थे कि सेल काफ़ी शक्तिशाली है।"

वैद्युत चुम्बकीय प्रेरण की परिघटना की खोज फैराडे के बीस वर्षों की मेहनत का पहला चरण था, जिसका उद्देश्य था सभी वैद्युत तथा चुम्बकीय परिघटनाओं के बीच अविभाज्य सम्बन्ध को ढूंढ़ना।

लेकिन वैद्युत चुम्बकीय प्रेरण की चर्चा करते समय अन्य अद्वितीय भौतिकतज्ञों के नामों का उल्लेख करना आवश्यक है। स्वप्रेरण परिघटना की खोज का श्रेय इंग्लैंड के वैज्ञानिक जोज़ेफ़ हेनरी (१७९७–१८७८) को जाता है। कुंडली में से गुज़र रही धारा में कोई परिवर्तन होने पर इस धारा द्वारा बनाये गये चुम्बकीय क्षेत्र में भी परिवर्तन हो जाएगा और स्वयं कुंडली के आर पार स्थित क्षेत्र के प्रवाह में भी परिवर्तन हो जाएगा तथा इसकी "अपनी" आकृति में विद्युत गतिक बल (emf) का प्रेरण होगा।

और emf (वि० ग० ब०) प्रेरण की दिशा के नियम की खोज किसने की? इस प्रश्न का सबसे अधिक सम्पूर्ण उत्तर हमें लेन्त्स के लेखों में मिलेगा। लेन्त्स नियम के द्वारा ही प्रेरित धारा की दिशा निश्चित होती है। "किसी धात्विक चालक को धारा या चुम्बक के समीप लाने पर उसमें गैल्वैनी धारा उत्पन्न हो जाती है। इस धारा की दिशा ऐसी होती है कि स्थिर तार उससे गति की अवस्था में आने पर इस प्रकार स्थित होता है कि गति वास्तविक स्थानांतरण के एकदम विपरीत हो। यहां अनुमान किया जा रहा है कि तार या तो वास्तविक गति की दिशा में चल सकती है या फिर उसके एकदम विपरीत दिशा में"।

सन् १८४० के बाद विद्युत-चुम्बकीयता का एक चित्र धीरे-धीरे

तैयार होने लगता है। विद्युत चुम्बकीय तरंगों की खोज इस चित्र में नवीनतम लकीर है और शायद सर्वाधिक द्युतिमान् भी।

भंवर प्रेरित धाराएं

यदि प्रेरित धाराएं तार से बने चालकों में उत्पन्न हो सकती हैं तो उनका बड़े-बड़े ठोस धातु के टुकड़ों में उत्पन्न होना भी काफ़ी स्वाभाविक है। धातु के प्रत्येक टुकड़े में स्वतंत्र इलेक्ट्रॉन होते हैं। यदि धातु स्थायी चुम्बकीय क्षेत्र में गति करता है तो स्वतंत्र इलेक्ट्रॉनों पर लोरेन्त्स बल प्रभाव डालेगा। इलेक्ट्रॉन गोलाकार प्रपथ बनाएंगे अर्थात् वे भंवर धाराएं बनाएंगे। इस परिघटना की खोज सन् १८५५ में फ़्रांसीसी भौतिकतज्ञ लिओं फ़ूको (१८१०–१८६८) ने की थी।

वैद्युत चुम्बकीय प्रेरण के नियम समान रूप से लागू रहते हैं: चुम्बकीय प्रवाह में परिवर्तन चाहे धातु तथा क्षेत्र के स्रोत के सापेक्ष स्थानांतरण के कारण हुआ हो, चाहे क्षेत्र को बनाने वाली विद्युत धारा के प्रत्यावर्ती होने के कारण हुआ हो। इसलिये फ़ूको धाराएं केवल उन्हीं स्थितियों में उत्पन्न नहीं होतीं जब सापेक्ष गति विद्यमान हो (इसका सबसे स्पष्ट उदाहरण सिक्के का उदाहरण है, जब किसी सिक्के को शक्तिशाली चुम्बक के ध्रुवों के बीच में गिराया जाता है; सिक्का सामान्य त्वरण के साथ नहीं गिरता है बल्कि इस प्रकार गिरता है जैसे कि वह किसी गाढ़े तेल में गिर रहा हो। उदाहरण का अर्थ स्पष्ट है: सिक्के में फ़ूको धाराएं उत्पन्न हो जाती हैं जिनकी दिशाएं, लोरेन्त्स के नियम के अनुसार, ऐसी होती हैं कि प्रारम्भिक चुम्बकीय क्षेत्र के साथ परस्पर प्रतिक्रिया के कारण प्रेरण बनाने वाली गति रुक जाती है), बल्कि उन स्थितियों में भी उत्पन्न होती हैं जब चुम्बकीय क्षेत्र समय में बदलता है।

फ़ूको धाराओं के लाभदायक उपयोगों में निम्न उल्लेखनीय हैं: सर्वप्रथम, फ़ूको धाराएं तथाकथित प्रेरण भट्टियों में धातुओं को अत्यधिक गर्म करने या पिघलाने के लिए उपयोग की जाती हैं। इनका अन्य उपयोग मापने के उपकरणों में किया जाता है जहां ये "चुम्बकीय स्थिरता" पैदा करती हैं।

बहुत ही अच्छा अविष्कार (यह इसका तीसरा उपयोग है) विद्युत-ऊर्जा मापने का मीटर है। आप, बेशक यह तो जानते ही हैं कि इसका मुख्य भाग घूमने वाली एक चक्रिका है। आप बिजली के बल्ब या चूल्हे यानी उपकरण जितनी अधिक संख्या में चालू करेंगे उतनी ही अधिक तेजी से यह चक्रिका घूमेगी।

मीटर की रचना का सिद्धांत इस बात पर आधारित है कि इसमें दो धाराएं उत्पन्न की जाती हैं। इनमें से एक तो लोड के समानांतर परिपथ में प्रवाह करती है, तथा दूसरी–लोड के धारा परिपथ में प्रवाह करती है। ये दो धाराएं लोहे के क्रोड़ों पर चढ़ी हुई कुंडलियों में प्रवाह करती हैं तथा इन्हें "वोल्ट कुंडली" एवं "ऐम्पेयर कुंडली" कहते हैं। प्रत्यावर्ती धारा लोहे के क्रोड़ों को चुम्बकित कर देती है। चूंकि धारा प्रत्यावर्ती है तो वैद्युत चुम्बकों के ध्रुव निरंतर बदलते रहते हैं। प्रतीत होता है कि उनके बीच चुम्बकीय क्षेत्र दौड़ रहा है। कुंडलियों को इस प्रकार रखा जाता है ताकि दोनों कुंडलियों द्वारा बना दौड़ता हुआ चुम्बकीय क्षेत्र चक्रिका में भंवर धाराएं उत्पन्न कर दें। इन भंवर धाराओं की दिशा ऐसी होगी कि दौड़ता हुआ चुम्बकीय क्षेत्र अपने पीछे-पीछे चक्रिका को भी खींचेगा।

घूमने की तीव्रता दोनों कुंडलियों में धाराओं की मात्रा पर आधारित होगी। घूमने की रफ़्तार, जैसा कि परिशुद्ध परिकलनों द्वारा सिद्ध किया जा सकता है, धारा बल तथा वोल्टता और कला विस्थापन के गुणनफल के समानुपातिक होगी; अन्य शब्दों में, ऊर्जा व्यय के समानुपातिक होगी। हम यहां उन सरल यांत्रिकीय विधियों के विवरण पर नहीं रुकेंगे जिनकी मदद से घूमने वाली चक्रिका का सम्बन्ध अंकों के साथ जोड़ा जाता है।

लेकिन अधिकांश स्थितियों में फ़ूको धाराओं से छुटकारा पाने की चेष्टा की जाती है। वैद्युत मशीनें बनाने वाले इंजिनियरों के लिये यह एक परेशानी का विषय होता है। अन्य किसी भी धारा की भांति भंवर धारा भी विन्यास की ऊर्जा का अवशोषण करती है। और ऊर्जा का यह नुकसान बहुत ही अधिक भी हो सकता है इसलिये उनको रोकने के लिये यथासम्भव चेष्टा हो सकती है। फ़ूको धाराओं से छुटकारा पाने का सरलतम उपाय है ठोस धातु के स्थान पर वैद्युत

मशीनों में प्लेटों का प्रयोग करना। इस स्थिति में भंवर धाराएं "फैल" नहीं सकेंगी, उनका बल काफ़ी क्षीण पड़ जाएगा तथा तदनुसार ऊष्मीय नुकसान भी कम हो जाएगा।

निस्संदेह, पाठक का ध्यान विद्युत ट्रांसफॉर्मरों के गर्म होने की क्रिया पर गया होगा। ट्रान्सफॉर्मर के गर्म होने का कम से कम आधा कारण भंवर धाराएं हैं।

प्रेरित कर्षण (Induced drag)

वैद्युत चुम्बकीय प्रेरण की परिघटना को प्रयोग करके चुम्बकीय क्षेत्र को मापने की बहुत ही संपूर्ण विधियां बनाई जा सकती हैं। इसके लिये अभी तक हमने चुम्बकीय सूई और प्रायोगिक चुम्बकीय आकृति प्रस्तुत की थी जिसमें से निश्चित् बल की स्थायी विद्युत धारा प्रवाह करती है। इकाई के बराबर चुम्बकीय आघूर्ण वाली प्रायोगिक आकृति या सूई पर लागू बल आघूर्ण की मात्रा से चुम्बकीय प्रेरण निश्चित किया जाता था।

अब हम अपना कार्य अन्य प्रकार करेंगे। एक नन्हीं-सी कुंडली को मापने वाले यंत्र के साथ जोड़ दिया जाता है। कुंडली को इस प्रकार रखें कि वह बल रेखाओं पर लम्ब बनाए और फिर एकदम उसे 90° के कोण पर मोड़ दें। मोड़ने में लगे समय में कुंडली में से प्रेरित धारा का प्रवाह होगा और एक पर्याप्त रूप से विद्युत की निश्चित मात्रा Q का भी प्रवाह होगा। विद्युत की यह मात्रा क्षेत्र की मात्रा के साथ उस बिन्दु पर, जहां हमने प्रायोगिक कुंडली रखी थी, किस प्रकार सम्बंधित होगी?

यह ज्ञात करना काफ़ी सरल है। ओम के नियम के अनुसार धारा बल I प्रेरण के emf को प्रतिरोध से भाग देने पर प्राप्त भागफल के बराबर होता है। यानी,

$$I = \frac{1}{R}\,\mathscr{E}^{\text{प्रेरण}}$$

यदि प्रेरण के नियम के लिये $\mathscr{E}^{\text{प्रेरण}} = BS/\tau$ को प्रयोग किया

जाए और यह भी ध्यान में रखा जाये कि $Q = I\tau$, तो चुम्बकीय प्रेरण

$$B = \frac{\mathscr{E}_{\text{प्रेरण}}\tau}{S} = \frac{I\tau R}{S} = \frac{QR}{S}$$

के बराबर होगा।

निस्संदेह, हम यहां एक बार फिर बता दें कि यह सूत्र केवल उसी स्थिति में सही होगा जब अन्तिम अवस्था में बल रेखाएं कुंडली के आर पार नहीं होतीं तथा प्रारम्भिक अवस्था में वे कुंडली के क्षेत्रफल को समकोण पर पार करती हैं। लेकिन, वस्तुतः कुंडली की कौन-सी अवस्था अन्तिम है तथा कौन-सी अवस्था प्रारम्भिक – यह एकदम निरपेक्ष है। प्रत्यावर्तन से केवल धारा की दिशा ही बदलेगी, लेकिन आकृति में प्रवाह करने वाली विद्युत की मात्रा में कोई परिवर्तन नहीं होगा।

मापने की इस विधि की संवेदनशीलता n गुना बढ़ जाती है यदि हम नन्हीं-सी कुंडली के स्थान पर बड़ी कुंडली को प्रयोग करें। विद्युत की मात्रा कुंडलियों की संख्या n के आनुपातिक होगी। बुद्धिमान शोधकर्ता एक मि० मी० के आकार वाली कुंडलियों को प्रयोग करते हैं ताकि प्रेरित कर्षण विधि द्वारा क्षेत्र का अधिक भली भांति अध्ययन किया जा सके।

लेकिन, सम्भवतः, लोह पदार्थों की चुम्बकशीलता मापते समय प्रेरित कर्षण का अधिकतम मान होता है। अब हम लोह के इस महत्व-पूर्ण गुण की चर्चा करेंगे।

लोह की चुम्बकीय प्रवृति

हमने गत अध्याय में बतलाया था कि परमाणुओं में चुम्बकीय गुण विद्यमान होते हैं। अकेले इलेक्ट्रॉनों में चुम्बकीय आघूर्ण होता है तथा कक्षीय चुम्बकीय आघूर्ण नाभिक के चारों ओर इलेक्ट्रॉनों के घूमने से बनते हैं। परमाणुओं के नाभिकों में चुम्बकीय आघूर्ण होते हैं। इसलिये किसी पदार्थ के चुम्बकीय क्षेत्र में प्रवेश करने पर क्षेत्र के स्वरूप पर प्रभाव पड़ेगा, और इसके विपरीत, चुम्बकीय क्षेत्र की उपस्थिति के कारण ठोस, तरल तथा गैसीय पदार्थों के व्यवहार पर प्रभाव पड़ेगा।

लोह, उसके कुछ ऐलाय तथा लोह जाति के ही कुछ अन्य पदार्थों में चुम्बकीय गुण बहुत ही अधिक स्पष्ट होते हैं। ऐसे पदार्थों की इस छोटी-सी श्रेणी को लोह चुम्बक कहते हैं। उदाहरणतया, हम निम्न प्रयोगों को कर सकते हैं: विभिन्न पदार्थों से बने हुए दियासलाई के आकार वाले छोटे-छोटे टुकड़ों को एक धागे के साथ लटका कर उनके करीब चुम्बक को लाया जाए। हम चाहे किन्हीं भी अन्य पदार्थों—लकड़ी, कांच, प्लास्टिक, कॉपर, ऐलुमिनियम, आदि के टुकड़ों को क्यों न लें—हम उनके समीप चुंबक को ले जाकर उनमें विद्यमान चुम्बकीय गुणों को स्पष्ट नहीं कर सकते। किसी भी पदार्थ में चुम्बकीय गुणों की विद्यमानता को सिद्ध करने के लिये बहुत ही सूक्ष्म तथा परिशुद्ध प्रयोगों को करने की आवश्यकता है। इनके बारे में हम आपको नीचे बतलाएंगे।

लेकिन लोह से बनी वस्तुओं का व्यवहार एकदम दूसरा होगा। वे सबसे क्षीण स्कूल में प्रयोग किये जाने वाले चुम्बक के प्रभाव में भी आज्ञापूर्वक उसके पीछे-पीछे चलेंगे।

मैं यहां एक कहानी सुना रहा हूं, जो सभी अर्थों में शिक्षाप्रद है तथा जिसमें मुख्य भूमिका मैं ने ही निभाई है, ताकि पाठक इस बात का सही अनुमान लगा सके कि चुम्बकीय क्षेत्र के प्रति लोहे के पदार्थ कितने संवेदनशील होते हैं।

कुछ वर्ष पूर्व मुझे चेकोस्लोवाकिया के एक "जादूगर" के प्रयोगों के साथ अवगत कराने के लिये बुलाया गया। यह जादूगर विश्वभर में प्रसिद्ध हो गया था तथा सनसनीखेज लेख लिखने वाले अमरीकी पत्रकारों ने उसे "चेक मेरलिन" का नाम दे दिया। इस जादूगर के कार्यक्रम में दसियों प्रयोग थे जिनका युक्तिमूलक उत्तर उपलब्ध नहीं था—ऐसा माना जाता था। स्वयं चेक मेरलिन इन प्रयोगों के परिणामों का आधार अपनी सम्मोहन शक्ति बतलाता था।

उसके सेहरे वाले कार्यक्रमों में से एक था लकड़ी की दियासलाई को चुम्बकित करना। सर्वप्रथम वह यह दिखाता था कि धागे द्वारा लटकी हुई लकड़ी की दियासलाई चुम्बक से विचलित नहीं होती है। फिर वह दियासलाई को "सम्मोहित" करता था और कुछ जादू भरे इशारे करता था। इस कार्यक्रम का एक आवश्यक भाग यह था कि

वह दियासलाई को प्रत्यक्ष रूप से धातु की एक "मूर्ति" से छुआ करता था, जिसे वह अपनी मानसिक शक्ति का ग्राही मानता था।

कुछ सप्ताह मेहनत करने के बाद मैं ने कहा कि चेक जादूगर के सभी प्रयोगों के, बिना किसी अपवाद के, युक्तिमूलक उत्तर प्रस्तुत हैं। लेकिन वह लकड़ी की दियासलाई को किस प्रकार चुम्बकित करने में सफल हो जाता था? जादू भरे इशारे करने के बाद उसी धागे द्वारा दियासलाई लटकाए जाने पर वह क्यों आज्ञापूर्वक चुम्बक का पीछा करती थी?

निम्न बातें ज्ञात हुईं। दियासलाई को धातु की "मूर्ति" से छुआ देने पर लोह के कण नगण्य मात्रा में दियासलाई पर आ जाते थे। मैं ने सिद्ध किया लोहे की मात्रा का तीन करोड़वां हिस्सा भी दियासलाई में प्रत्यक्ष चुम्बकीय गुण पैदा कर देगा। यह एक और "तिलचटा पर प्रयोग" का किस्सा है।

इस उदाहरण द्वारा काफ़ी स्पष्टता से सिद्ध होता है कि सर्वप्रथम तो किसी भी "जादू" में, जो प्रकृति के नियमों के विपरीत हो, विश्वास नहीं करना चाहिए तथा, दूसरे, लोह के चुम्बकीय गुण एकदम विशेष हैं और यह हमारे लिये सबसे अधिक रुचि का विषय है।

लोह के चुम्बकीय गुणों को निश्चित करने के लिये किया जाने वाला शास्त्रीय प्रयोग निम्न प्रकार है। एक-दूसरे के ऊपर चढ़ी हुई दो कुंडलियों का एक वैद्युत परिपथ बनाया जाता है। पहली कुंडली को बैटरी के परिपथ से जोड़ दिया जाता है तथा दूसरी कुंडली को विद्युत मापने वाले यंत्र के परिपथ से जोड़ दिया जाता है। यदि पहले परिपथ को बंद कर दिया जाये तो दूसरी कुंडली में से गुज़र रहे चुम्बकीय प्रवाह का मान शून्य से बदल कर किसी निश्चित Φ_0 मान पर आ रुकेगा। प्रेरित कर्षण की विधि द्वारा चुम्बकीय प्रवाह को काफ़ी परिशुद्धता से मापा जा सकता है।

ऊपर बताये गये उपकरण की सहायता से ही पदार्थों के चुम्बकीय गुणों का अध्ययन किया जाता है। उस पदार्थ को एक छड़ के रूप में ढाला जाता है तथा इस छड़ को कुंडली के अन्दर रख दिया जाता है। फिर छड़ के साथ तथा छड़ के बिना प्राप्त हुए मापों की तुलना की जाती है। यदि छड़ लोहे या किसी लोह-चुम्बकीय पदार्थ से बनी है

तो यंत्र द्वारा निश्चित की गई विद्युत की मात्रा हज़ारों गुना बढ़ जाएगी।

किसी पदार्थ के चुम्बकीय गुणों के मूल्य के रूप में छड़ के साथ तथा छड़ के बिना यंत्र द्वारा मापे गये चुम्बकीय प्रवाहों के अनुपात को लिया जा सकता है। इस अनुपात $\mu = \Phi/\Phi_0$ को किसी पदार्थ की चुम्बकीय प्रवृत्ति कहते हैं।

अतः, लोह पदार्थ बल रेखाओं के प्रवाह को बहुत तीव्रता से बढ़ा देते हैं। इसका केवल एक ही कारण हो सकता है: स्वयं लोह पदार्थ पहली कुंडली की विद्युत धारा के चुम्बकीय क्षेत्र के साथ अपना चुम्बकीय क्षेत्र भी मिला देता है।

$\Phi - \Phi_0$ के अंतर को सामान्य रूप से J अक्षर द्वारा लिखते हैं। अतएव, $J = (\mu - 1)\Phi_0$ वह अतिरिक्त चुम्बकीय प्रवाह हुआ जो स्वयं पदार्थ द्वारा बनता है।

चुम्बकीय प्रवृत्ति को मापने की क्रिया समाप्त होने पर छड़ को कुंडली से बाहर निकालने के बाद भी लोहे की छड़ में चुम्बकीयता बनी रहती है। उसका मान J से तो कम होगा, लेकिन फिर भी काफ़ी अधिक होगा।

लोहे की छड़ पर बची हुई चुम्बकीयता को हटाया जा सकता है। इसके लिये छड़ को पुनः हमारे उपकरण में रखना होगा लेकिन इस प्रकार कि धातु तथा पहली कुंडली की विद्युत धारा के क्षेत्रों की दिशाएं परस्पर विपरीत हों। हमेशा आपको ऐसी प्राथमिक धारा प्राप्त करने में सफलता मिल जाएगी ताकि विपरीत दिशा के प्रेरित कर्षण की सहायता से लोहे के चुम्बकीय गुण नष्ट किये जा सके तथा उसे उसकी प्रारम्भिक अवस्था में लाया जा सके। ऐतिहासिक कारणों से, जिनका हम यहां वर्णन नहीं करेंगे विचुम्बकन क्षेत्र के मान को निग्रह बल या निग्राहिता (coercine force or coercivity) कहते हैं।

लोह-चुम्बकीय पदार्थों का यह विचित्र गुण कि धारा की अनुपस्थिति में भी उनमें चुम्बकीयता विद्यमान रहती है तथा इस शेष चुम्बकीयता को तदनुरूपी दिशा वाली विद्युत धारा द्वारा नष्ट भी किया जा सकता है, शैथिल्य (hysteresis) कहलाता है।

तकनीकी विशेषताओं के आधार पर विभिन्न गुणों वाले लोह

चुम्बकीय पदार्थों की आवश्यकता होती है। परमेलॉय के चुम्बकीय ऐलॉय में μ का मान 100000 के लगभग होता है तथा मृदु लोह में μ का अधिकतम मान इसका चार गुना कम होता है।

ता ों वाली कुंडली के अन्दर किसी लोह पदार्थ को रख कर बल रेखाओं के प्रवाह को काफ़ी बड़ी संख्या गुना अधिक कर सकने की सम्भावना से विद्युत-चुम्बक बनाये जाते हैं। स्पष्ट है कि विद्युत चुम्बक का बल यानी बहुत अधिक वज़न वाले लोह पदार्थों को आकर्षित या प्रतिकर्षित करने की उनकी विशेषता विद्युत चुम्बक की कुंडली में गुज़रने वाली धारा की मात्रा के साथ बढ़ती है। यह क्रिया असीमित नहीं है–यहां संतृप्ति परिघटना विद्यमान है। लेकिन जब हम विशाल चुम्बकों का ज़िक्र करते हैं तो संतृप्ति तक पहुंचना इतना आसान नहीं है।

गत वर्षों में विशेष शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्रों को प्राप्त करने के लिये अतिचालक कुंडलियों का प्रयोग किया जा रहा है। अतिनिम्न तापमान पर कार्य करने वाले इंजिनियर के सामने बहुत ही बड़ी तक तकनीकी कठिनाइयां आ जाती हैं। लेकिन इस प्रकार हमें पूर्ण विश्वास हो जाता है कि लोह-चुंबकों को हमने अच्छी प्रकार निचोड़ कर सब कुछ प्राप्त कर लिया जो कुछ भी वे दे सकते थे, क्योंकि μ का मान तापमान के बढ़ने से कम होता जाता है।

एक निश्चित तापमान पर पहुंचने के बाद, उदाहरणतया, लोह के लिये 767° C तथा, निकैल के लिये 360° C लोह-चुम्बकीय गुण लुप्त हो जाते हैं तथा, चुम्बकीयता एक के बराबर हो जाती है जो कि बाकी सभी पदार्थों की होती है।

डोमेन (Domain)

लोह-चुम्बकों की मुख्य विशेषता है उनकी डोमेन संरचना (domain structure)। डोमेन–वह प्रान्त है जो सीमा तक चुम्बकित हो चुका है। डोमेन के अन्दर सभी परमाणु इस प्रकार स्थित हैं कि उनके चुम्बकीय आघूर्ण परस्पर समानांतर हों।

चुम्बकीय डोमेनों का व्यवहार एकदम वैसा ही होता है जैसा कि लोह-वैद्युतों में वैद्युत डोमेनों का होता है। चुम्बकीय डोमेनों के रैखिक

आकार अधिक छोटे नहीं होते हैं, वे 0.01 मि० मी० के लगभग होते हैं। अतः, थोड़ी होशियारी के साथ काम करते हुए हम उन्हें साधारण सूक्ष्मदर्शी के द्वारा देख सकते हैं।

चुम्बकीय डोमेनों को दृष्टिगोचर बनाने के लिये लोह चुम्बकीय एकाकी क्रिस्टल की परिमार्जित सतह पर कोलॉइडी निलम्बन (colloidal suspension) की एक बूंद डाली जाती है—जो एक प्रकार के मैग्नेटाइट जैसा लोह-चुम्बकीय पदार्थ होता है जिसे काफ़ी सावधानी के साथ कूट दिया जाता है। कोलॉइडी कण डोमेनों की सीमा के पास संकेन्द्रित हो जाते हैं क्योंकि सीमा के साथ-साथ चुम्बकीय क्षेत्र विशेषकर शक्तिशाली होते हैं (ठीक इसी प्रकार साधारण चुम्बक अपने ध्रुवों के पास स्थित चुम्बकीय कणों को इकट्ठा करते हैं)।

लोह-वैद्युत की भांति, लोह-चुम्बकीय पदार्थों में डोमेन न केवल बाहरी चुम्बकीय क्षेत्र की उपस्थिति में बल्कि जब मॉडल विचुम्बकित हो, तब भी देखे जा सकते हैं।

विचुम्बकित एकाकी क्रिस्टल की डोमेन में स्थिति कुछ ऐसी होती है कि क्रिस्टल का कुल चुम्बकीय आघूर्ण शून्य के बराबर होता है। लेकिन इससे यह निष्कर्ष नहीं निकलता है कि डोमेन अव्यवस्थित रूप में स्थित होती हैं। एक बार फिर पृष्ठ ६५ पर बताई गई बातों के पूर्णतया अनुकूल क्रिस्टलीय संरचना की प्रकृति उन दिशाओं को निश्चित करती हैं जिनमें चुम्बकीय आघूर्णों के लिये स्थान ग्रहण करना सबसे आसान हो जाए। लोह के क्रिस्टलों का प्रारम्भिक कोश वर्गाकार होता है तथा सबसे आसान विचुम्बकन की दिशाएं वर्ग के अक्ष होते हैं। अन्य लोह-चुम्बकीय धातुओं में आघूर्ण वर्ग के विकर्ण के साथ-साथ स्थित होते हैं। जैसा भी क्यों न हो, विचुम्बकित क्रिस्टल में डोमेन अपना स्थान पूर्णतया सुव्यवस्थित रूप में ग्रहण करते हैं। और इतना ही नहीं एक दिशा में स्थित चुम्बकीय आघूर्णों वाले डोमेनों की संख्या विपरीत दिशा में स्थित चुम्बकीय आघूर्णों वाले डोमेनों की संख्या के बराबर होती है। प्रति संरचना के उदाहरण हम पहले ही चित्र 2.3 में दे चुके हैं।

ध्रुवण की भांति, विचुम्बकन भी उन डोमेनों के "खा जाने" में होता हैं, जिनके आघूर्ण क्षेत्र पर अधिक कोण बनाते हैं।

सुव्यवस्थित तथा अव्यवस्थित रूप में परमाणुओं का स्थान ग्रहण करने की चेष्टा का युद्ध पदार्थ की किसी भी अवस्था की आवश्यक विशेषता है।

जैसा कि "सरल भौतिकी" की दूसरी पुस्तक में स्पष्ट हो गया था, कि सुव्यवस्था बनाने की चेष्टा न्यूनतम ऊर्जा व्यय करने की चेष्टा होती है। यदि ऊष्मीय गति कम हो तो अपने आप आगे आने वाले कण परमाण्वीय स्थापत्यकला का आश्चर्य – क्रिस्टल बनाते हैं। क्रिस्टल – परमाणु-जगत् में आदर्श सुव्यवस्था का प्रतीक है। अव्यवस्था की ओर चेष्टा एन्ट्रॉपी के बढ़ने के नियम के कारण होती है।

तापमान में वृद्धि होने के कारण एन्ट्रॉपी प्रवृत्तियां ऊपर उठ जाती हैं तथा पदार्थ को बनाये रखने वाले स्वरूप पर अव्यवस्था हावी हो जाती है।

लोह-चुम्बकीय पदार्थों की स्थिति निम्न प्रकार है। तापमान के बढ़ने पर चुम्बकीय आघूर्ण अपने आप को झकझोरने लगते हैं। आरम्भ में तो यह कम्पन एक प्रकार की लय में होता है तथा सुव्यवस्था को नष्ट नहीं करता, लेकिन उसके बाद एक के बाद दूसरा परमाणु उलटना शुरू कर देता है और "गलत" स्थान ग्रहण कर लेता है। ऐसे "संरचना से बाहर आने वाले" परमाणुओं की संख्या बढ़ने लगती है और एक निश्चित ताप पर (क्यूरी तापांक पर) चुम्बकीय सुव्यवस्था का संपूर्ण "द्रवण" हो जाता है।

पदार्थों की नगण्य संख्या में ही लोह-चुम्बकीय गुण क्यों विद्यमान हैं? इस प्रश्न का उत्तर इस पुस्तक में देना मेरे लिये कठिन है। पर परमाणुओं की संरचना के वे कौन-से अंग हैं जिनके कारणवश् ये पदार्थ एक विशिष्ट श्रेणी में आ जाते हैं? यदि पाठक इन प्रश्नों का उत्तर इस छोटी-सी सरल पुस्तक में देखना चाहता है तो वह लेखक से आवश्यकता से अधिक अपेक्षा कर रहा है।

आइये, अब हम अन्य पदार्थों के व्यवहार का वर्णन करें।

प्रतिचुम्बकीय तथा अनुचुम्बकीय पदार्थ

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि लोह-चुम्बकों की छोटी-सी श्रेणी को अपवाद के रूप में छोड़ कर शेष सभी पदार्थों में चुम्बकीयता

विद्यमान होती है जो इकाई के काफ़ी लगभग होती है। वे पदार्थ जिनमें μ का मान इकाई से थोड़ा-सा अधिक होता है, अनुचुम्बकीय कहलाते हैं, और वे पदार्थ, जिनमें μ का नाम इकाई से थोड़ा-सा कम हो, प्रतिचुम्बकीय कहलाते हैं। आइये, दोनों प्रकार के पदार्थों व उनकी चुम्बकीयता के मानों को देखें :

	μ		μ
ऐलुमिनियम	1,000023	रजत	0,999981
टंग्स्टेन	1,000175	ताम्र	0,999912
प्लैटिनम	1,000253	बिस्मथ	0,999824

आप देख ही रहे हैं कि हालांकि इकाई से इनका अंतर नगण्य मात्र ही है फिर भी काफ़ी परिशुद्ध माप लिये जा सकते हैं। इसके लिये हम प्रेरित कर्षण की विधि का प्रयोग कर सकते हैं जिससे हमने पदार्थों के गुणों के चुम्बकीय मापों का वर्णन आरम्भ किया था। लेकिन अधिक परिशुद्ध परिणाम चुम्बकीय तुला की मदद से प्राप्त होते हैं।

वैश्लेषिक सूक्ष्म तुला (जो, आपको ज्ञात ही होगा, बल को एक ग्राम के एक करोड़वें अंश तक की परिशुद्धता से माप सकती है) के एक पलड़े के बीचों-बीच एक छेद कर दिया जाता है। इस छेद में एक धागा डाल कर उसके साथ मॉडल को बांध कर लटका दिया जाता है जो चुम्बक के ध्रुवों के बीच में स्थित हो जाता है। चुम्बक के सिरे इस प्रकार बने होने चाहिये कि क्षेत्र असमान हो। इस स्थिति में पदार्थ या तो शक्तिशाली क्षेत्र के प्रांत की ओर आकर्षित होगा या उससे प्रतिकर्षित होगा। वह आकर्षित केवल उसी स्थिति में होता है जब मॉडल का चुम्बकीय आघूर्ण क्षेत्र के साथ-साथ स्थित होने की चेष्टा करेगा, तथा विपरीत स्थिति में वह प्रतिकर्षित होगा। बल का सूत्र पृष्ठ ११३ पर दिया गया है।

चुम्बकीय क्षेत्र की अनुपस्थिति में बाटों से मॉडल का संतुलन हो जाता है। जैसे ही मॉडल पर क्षेत्र का प्रभाव पड़ता है, उसका संतुलन

बिगड़ जाता है। अनुचुम्बकीय पदार्थों की स्थिति में बाटों को और बढ़ाना पड़ेगा, लेकिन प्रतिचुम्बकीय पदार्थों की स्थिति में बाटों को कम करना होगा। यह काफ़ी स्पष्ट ही है कि अच्छी तुला की सहायता से हम इस कठिन समस्या का समाधान कर सकते हैं, क्योंकि 1 cm³ पदार्थ पर लागू होने वाले बल की मात्रा लगभग 1 mg होगी (सरल स्थिति में क्षेत्र की असमानता एक cm पर टेसला के सौवें अंश के बराबर होती है)।

अनुचुम्बकीय तथा प्रतिचुम्बकीय दोनों ही विशेषताएं काफ़ी सरलता से स्पष्ट हो गई हैं।

प्रतिचुम्बकियता उस अवस्था का प्रत्यक्ष परिणाम है जब चुम्बकीय क्षेत्र में प्रत्येक इलेक्ट्रॉन एक गोलाकार आकृति बनाता है। ये गोलाकार धाराएं अपने निजी चुम्बकीय आघूर्ण बनाती हैं, जो घूर्णन बनाने वाले क्षेत्र की दिशा के विपरीत होते हैं।

प्रतिचुम्बकीयता सभी पदार्थों के लिये सामान्य विशेषता है।

अनुचुम्बकीय तथा विशेषकर लोह-चुम्बकीयता पदार्थों की प्रतिचुम्बकीय विशेषता को "नष्ट" कर देते हैं।

अनुचुम्बकीय पदार्थ वे होते हैं जिनके परमाणुओं या आयनों के अपने चुम्बकीय आघूर्ण होते हैं। आघूर्ण का कारण इलेक्ट्रॉनों की कक्षीय गति हो सकती है, या एकाकी इलेक्ट्रॉन का प्रचक्रण हो सकता है या फिर दोनों ही इकट्ठे मिलकर उसका कारण बन सकते हैं।

चुम्बकीय क्षेत्र की अनुपस्थिति में प्रतिचुम्बकीय पदार्थों के परमाणुओं के चुम्बकीय आघूर्ण नहीं होते हैं। अनुचुम्बकीय पदार्थों में चुम्बकीय आघूर्ण होते तो अवश्य हैं लेकिन ऊष्मीय गति के कारण वे एकदम अव्यवस्था में स्थित होते हैं—ठीक क्यूरी तापांक से ऊपर लोह-चुम्बकीय पदार्थों की भांति। जैसे ही क्षेत्र का प्रभाव आरम्भ होता है वैसे ही सुव्यवस्था करने वाले बलों का ऊष्मीय गति द्वारा बनाई गई अव्यवस्था के साथ युद्ध शुरू हो जाता है। जैसे-जैसे तापमान नीचे आता है, वैसे-वैसे परमाणुओं की अधिक से अधिक संख्या इस प्रकार स्थित होने लगती है ताकि उनके चुम्बकीय आघूर्ण क्षेत्र की दिशा पर न्यून कोण बनाए। इसी कारणवश एकदम स्पष्ट हो जाता है कि तापमान के नीचे गिरने के साथ-साथ अनुचुम्बकीय पदार्थों की चुम्बकीयता बढ़ने लगती है।

पृथ्वी का चुम्बकीय क्षेत्र

आज का मानव इस बात का आदि हो गया कि कोई भी उपकरण किसी भौतिकीय सिद्धांत का परिणाम होता है। जब उपकरण बन जाता है तो उसे इंजिनियर प्रयोग करता है, भौतिकतज्ञों के लिये करने को कुछ भी नहीं बचता। उस परिघटना की प्रकृति जिसपर उपकरण आधारित है उपकरण के बनने से पहले ही समझ आ गई थी।

लेकिन कम्पास की स्थिति एकदम अलग थी। कम्पास शायद सबसे पहले चीन में ११ शताब्दी में बनी थी और कई शताब्दियों तक वह नौसंचालन के मुख्य उपकरण के रूप में प्रयोग की जाती रही, लेकिन किसी को भी इसके नियम की वास्तविकता ज्ञात नहीं थी। सूई का एक सिरा हमेशा उत्तर दिशा की ओर क्यों रहता था? बहुत से लोगों के विचार में इसका कारण भौमेतर शक्तियां थीं, उदाहरणतया, सूई के एक सिरे का ध्रुव-तारे द्वारा आकर्षित होना।

सन् १६०० में विलियम गिल्बर्ट का प्रतिभापूर्ण लेख "चुम्बक तथा पृथ्वी का विशाल चुम्बक" प्रकाशित हुआ। सर्वथा वैज्ञानिक विधि की मदद से वह चुम्बकीय परिघटनाओं का अध्ययन अधिक परिशुद्धता से कर सका। चुम्बकीय अयस्क से एक गोला बनाकर तथा उसके विभिन्न स्थानों के ऊपर चुम्बकीय सूई को लटका कर गिल्बर्ट ने सूई के व्यवहार का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया और यह नोट किया कि यह व्यवहार पृथ्वी के विभिन्न भागों में चुम्बकीय सूई के व्यवहार के एकदम अनुरूप है। इससे यह निष्कर्ष निकला: कम्पास का व्यवहार भली-भांति समझा जा सकता है यदि यह मान लिया जाये कि पृथ्वी एक स्थायी चुम्बक है जिसका अक्ष पृथ्वी के अक्ष के साथ-साथ स्थित है।

यहां से भूचुम्बकत्व का अध्ययन एक नये स्तर पर आरम्भ हो जाता है। अधिक ध्यानपूर्वक अध्ययन करने से ज्ञात हुआ कि चुम्बकीय सूई उत्तर से दक्षिण की ओर दिशा को पूरी तरह से सही प्रकार नहीं दिखाती है। किसी निश्चित बिन्दु में से गुज़रने वाले याम्योत्तर से सूई की दिशा का विचलन चुम्बकीय दिक्पात (magnetic declination) कहलाता है। चुम्बकीय ध्रुव पृथ्वी के घूर्णन के अक्ष से 11.5° कोण
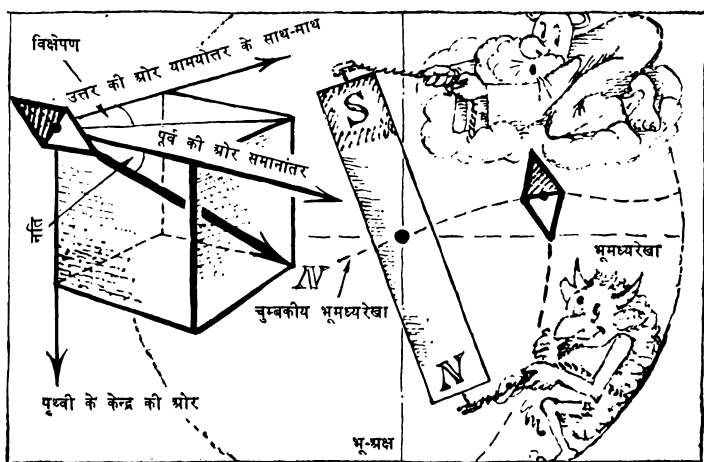
चित्र 3.10

पर हटे हुये हैं (चित्र 3.10)। सूई क्षैतिज समतल पर परिशुद्धता से स्थित नहीं होती है, बल्कि एक कोण बनाते हुये क्षैतिज की ओर मुड़ जाती है जिसे चुम्बकीय नति (magnetic dip) का कोण कहते हैं। अलग-अलग बिन्दुओं पर चुम्बकीय नति के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि चुम्बकीय "द्विध्रुव" पृथ्वी में काफ़ी गहराई पर है। वह असमान क्षेत्र बनाता है जिसका मान चुम्बकीय ध्रुवों पर $0,6 \cdot 10^{-4}$ T होता है तथा भूमध्य-रेखा पर $0,3 \cdot 10^{-4}$ T होता है।

पृथ्वी के अन्दर स्थित यह कैसा "चुम्बक" है? चुम्बकीय "द्विध्रुव" भू-क्रोड में स्थित है जो पिघले हुये लोहे से बना है। लोह द्रव अवस्था में भी विद्युत का सुचालक बना रहता है। पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र को समझने के लिये "चुम्बकीय डायनेमो" का अपने किस्म का मॉडल प्रयोग किया जा सकता है। हम यहां इस मॉडल का वर्णन नहीं करेंगे। पाठक को इतना जानना ही पर्याप्त होगा कि "पृथ्वी का चुम्बक" उन धाराओं से बनता है, जो पिघले हुए लोहे के अन्दर से पैदा होती हैं।

पृथ्वी का चुम्बकीय क्षेत्र परिवर्तित होता रहता है। चुम्बकीय ध्रुवों की अपने स्थान से हटने की गति 5—6 कि० मी० प्रति वर्ष है। पृथ्वी के आकार की तुलना में यह नगण्य है। इस परिघटना को सौ वर्षों के दौरान देखा जा सकता है, इसीलिये इसे चुम्बकीय क्षेत्र का शताब्दी का परिवर्तन कहते हैं।

यह सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है कि हमारे ग्रह के किसी भी बिन्दु पर भू-चुम्बकत्व के तत्त्वों के संपूर्ण ज्ञान का कितना महत्व है। चुम्बकीय कम्पास आज भी नौचालकों द्वारा प्रयोग की जाती है। और यदि यही बात है तो उनके पास चुम्बकीय दिक्पात तथा नति के मानचित्र भी होने चाहिये। जैसा कि चित्र से स्पष्ट है कि ध्रुवों के समीप चुम्बकीय सूई का उत्तरी सिरा उत्तर दिशा की ओर देखना बन्द कर देता है। इतना ही नहीं, भूमध्य-रेखा के पास भी चुम्बकीय क्षेत्र के मानचित्र की बगैर मदद के काम नहीं चलता है। चुम्बकीय निरक्ष (magnetic equator) उस जगह स्थित नहीं है जहां शून्य चौड़ाई की रेखा है।

स्थल पर चुम्बकीय क्षेत्र का ज्ञान भी उतना ही महत्व रखता है क्योंकि भूवैज्ञानिक अध्ययन के लिये आवश्यक है। हम यहां इन प्रश्नों पर नहीं रुकेंगे। भूवैज्ञानिक भौतिकी – विज्ञान का काफ़ी महत्व-पूर्ण व विशाल अंग है जहां इस का विशेष रूप से अध्ययन किया गया है।

यहां हम कुछ शब्द पुराचुम्बकीय शोधकार्यों के बारे में कहेंगे जिनकी मदद से यह ज्ञात किया जा सकता है कि आदि काल में पृथ्वी का चुम्बकीय क्षेत्र कैसा था। मुख्य रूप से इन शोधकार्यों का आधार पहाड़ी चट्टानों पर पायी जाने वाली शेष चुम्बकीयता आदि का अध्ययन होता है।

प्रागैतिहासिक काल की विधियों का सार क्या है? लो, इसका उदाहरण प्रस्तुत है। ईंट और मृत्तिका से बने बर्तन में थोड़ी-सी चुम्बकीयता शेष रहती है, जो जलाये जाने पर मृत्तिका में पैदा होती है। चुम्बकीय आघूर्ण की दिशा पदार्थ बनाये जाने तथा ठंडा किये जाने के समय चुम्बकीय क्षेत्र की दिशा के अनुरूप होती है। कभी-कभी तो

काफ़ी विश्वासपूर्वक बर्तन बनाये जाने के समय उसकी स्थिति को भी ज्ञात किया जा सकता है।

ऐसे ही शोधकार्यों का एक अन्य उदाहरण है: अयस्क के चुम्बकीय आघूर्ण की भौगोलिक दिशा ज्ञात करने के बाद रेडियोएक्टिव समस्थानिकों की संख्या द्वारा उसकी आयु निश्चित कर ली जाती है।

महाद्वीपों के विस्थापन का सबसे पक्का प्रमाण पुराचुम्बकीय अध्ययन है: ज्ञात हुआ कि कई लाखों-करोड़ों वर्षों पूर्व विभिन्न महाद्वीपों पर बनने वाली लोहे की खानों के चुंबकत्वों को चुम्बकीय क्षेत्र को बल रेखाओं के साथ-साथ निर्दिष्ट किया जा सकता है, यदि इन महाद्वीपों को मिलाकर एक अतिमहाद्वीप बना दिया जाये जिसे गोंडवाना महाद्वीप कहते हैं। कुछ समय बाद गोंडवाना महाद्वीप टूट कर अफ़्रीका, आस्ट्रेलिया, ऐन्टार्कटिका और दक्षिणी अमेरिका में बंट गया।

अभी तक हम पृथ्वी के अन्दर पैदा होने वाली चुम्बकीयता की बात कर रहे थे, जो वास्तव में उसका मुख्य स्रोत है। लेकिन चुम्बकीय क्षेत्र में होने वाले कुछ परिवर्तनों का कारण बाहर से आने वाले आवेशित कण हैं। ये मुख्यतया सूर्य द्वारा उत्कर्षित प्रोटॉन और इलेक्ट्रॉन हैं। आवेशित कण क्षेत्र द्वारा ध्रुवों की ओर घूमते हैं तथा लोरेन्त्स बल के प्रभाव में गोलाई में घूमते हैं। इसके फलस्वरूप दो परिघटनाएं बनती हैं। प्रथमतः गतिमय आवेशित कण अतिरिक्त चुम्बकीय क्षेत्र—चुम्बकीय प्रक्षोभ बनाते हैं। द्वितीयतः, वे वायुमंडलीय गैसों के अणुओं का आयनन कर देते हैं जिसके कारण ध्रुवीय ज्योति बनती है। तीव्र चुम्बकीय प्रक्षोभ समयानुसार होते हैं (11.5 वर्षों में एक बार)। यह अवधि सूर्य पर होने वाली घटनाओं की तीव्रता की अवधि के साथ मिलती है।

अंतरिक्ष उपकरणों की मदद से लिये गये प्रत्यक्ष मापों ने सिद्ध कर दिया है कि पृथ्वी के समीपतम पिंड—चन्द्रमा, शुक्र तथा मंगल ग्रह—का पृथ्वी की भांति अपना चुम्बकीय क्षेत्र नहीं है। सौर मंडल के अन्य ग्रहों में केवल बृहस्पति और शायद शनि के अपने क्षेत्र हैं। बृहस्पति पर 10 गाउस का क्षेत्र तथा कई विशिष्ट परिघटनाएं देखने में आई हैं (चुम्बकीय प्रक्षोभ, सिंक्रोट्रॉन रेडियो विकिरण आदि)।

तारों के चुम्बकीय क्षेत्र

चुम्बकीयता केवल ग्रहों तथा ठंडे तारों में ही नहीं, बल्कि तापदीप्त आकाशीय पिंडों में भी विद्यमान है।

चूंकि सूर्य हमारे सबसे समीप है इसलिये हमें अन्य तारों के चुम्बकीय क्षेत्र की अपेक्षा उसके चुम्बकीय क्षेत्र के बारे में सबसे अधिक ज्ञान प्राप्त है। सूर्य ग्रहण के समय सूर्य के चुम्बकीय क्षेत्र को आप स्वयं अपनी आंखों से देख सकते हैं। सूर्य के पदार्थ के चुम्बकीय आघूर्ण वाले कण बल रेखाओं के साथ-साथ स्थित हो जाते हैं, और बल रेखाओं का चित्र बनाते हैं। चुम्बकीय ध्रुव काफ़ी स्पष्ट दिखाई देते हैं और चुम्बकीय क्षेत्र का मान निश्चित किया जा सकता है जो लाखों किलोमीटर लम्बे-चौड़े भागों में पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र की तुलना में हज़ारों गुना अधिक होता है। इन भागों को सूर्य कलंक कहते हैं। चूंकि कलंक सूर्य के अन्य भागों की अपेक्षा काला होता है तो स्पष्ट है कि यहां तापमान कम होता है यानी सूर्य के "सामान्य" तापमान से 2000 डिग्री कम।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि कम तापमान तथा चुम्बकीय क्षेत्र अधिक मान परस्पर सम्बंधित हैं। लेकिन इन दो तथ्यों को जोड़ने वाला कोई युक्तिसंगत सिद्धांत हमारे पास नहीं है।

और, अन्य तारों की क्या अवस्था है? पिछले वर्षों के दौरान खगोल भौतिकी ने इतनी अधिक सफलता प्राप्त कर ली हैं कि तारों पर चुम्बकीय क्षेत्रों की विद्यमानता को सिद्ध करना सम्भव लगता है। इसके साथ-साथ "तारों के चुम्बकीय कलंकों" का तापमान 10000 डिग्री के लगाभग होता है तथा कुछ महीनों में वे अपना स्थान बदल सकते हैं या एकदम गायब हो सकते हैं। इस परिवर्तन को काफ़ी सरलता से समझा जा सकता है यदि यह मान लिया जाये कि तारों पर कलंक अपना स्थान नहीं बदलते हैं, बल्कि तारा स्वयं घूमता है।

चुम्बकीय क्षेत्रों की विद्यमानता को कुछ स्पेक्ट्रमी रेखाओं की असंगत तीव्रता के आधार पर सिद्ध किया जाता है। प्रतीत होता है कि चुम्बकीय तारों में चुम्बकीय निरक्ष पर लोहे की अधिक मात्रा होती है।

अंतरिक्ष में चुम्बकीय क्षेत्रों के मान अधिक नहीं होते हैं (गाउस

के दस लाखवें अंश के बराबर)। इसका कारण बताना अनावश्यक है क्योंकि अंतरिक्ष में निर्वात का ही राज है। जब ब्रह्मांड में प्रकीर्ण परमाणुओं से तारे बनते हैं तो तारे के पदार्थ के संघनन के साथ-साथ चुम्बकीय क्षेत्र का भी "संघनन" हो जाता है। तो फिर सभी तारों पर चुम्बकीय क्षेत्र क्यों नहीं होता?

पृथ्वी की आयु एक अरब वर्ष है। यहां से निष्कर्ष निकलता है कि पृथ्वी का चुम्बकीय क्षेत्र हमेशा से उसके अन्दर बनने वाली वैद्युत धाराओं द्वारा समर्थन प्राप्त करता रहा है। कुछ तारे, जिनपर चुम्बकीय क्षेत्र नहीं है, शायद इतने अधिक ठंडे हो चुके हैं कि उनके अन्दर अब वैद्युत धाराएं होती ही नहीं। लेकिन इस कथन को शायद ही सार्वत्रिक कहा जा सके।

अध्याय ४

विद्युत-प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण

ज्यावक्रीय वैद्युत-गतिक बल (Sinusoidal emf)

संचायक सेल तथा बैटरी दिष्ट धारा के स्रोत हैं। लेकिन विद्युत प्रदाय से हमें प्रत्यावर्ती धारा मिलती है। "दिष्ट" तथा "प्रत्यावर्ती" शब्द वोल्टता, वैद्युत-गतिक बल तथा धारा बल के मानों से सम्बंधित हैं। यदि धारा प्रवाह की क्रिया के समय ये मान अपरिवर्तित रहते हैं तो धारा दिष्ट कहलाती है, तथा परिवर्तित होने पर वह प्रत्यावर्ती कहलाती है।

धारा बनाने वाले उपकरण के आधार पर विद्युत धारा का समय में परिवर्तन विभिन्न प्रकार का हो सकता है। विद्युत धारा के परिवर्तन का वक्र इलेक्ट्रॉन-नलिका की मदद से तैयार किया जा सकता है। दो परस्पर लम्ब बनाने वाले समतल संघनित्रों के क्षेत्रों द्वारा इलेक्ट्रॉन किरण का विचलन हो जाता है। संघनित्र की प्लेटों पर विभिन्न वोल्टता देकर स्क्रीन पर किरण द्वारा छोड़े गये अवलोकित बिन्दु को संपूर्ण स्क्रीन पर घुमाया जा सकता है।

प्रत्यावर्ती धारा का चित्र निम्न विधि द्वारा प्राप्त किया जाता है। प्लेटों के एक जोड़े पर आरादंती वोल्टता दी जाती है जिसका वक्र चित्र 4.1 में दिखाया गया है। यदि इलेक्ट्रॉन किरण केवल इसी के प्रभाव में रहती है तो बिन्दु संपूर्ण स्क्रीन पर एकसमान रूप से गति करता है और
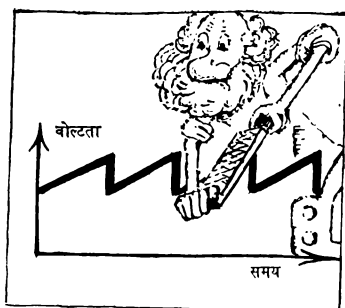
चित्र 4.1
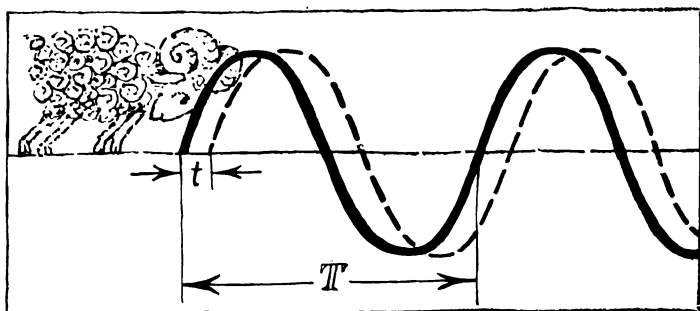
चित्र 4.2

फिर कूद कर अपने प्रारम्भिक स्थान पर वापस आ जाता है। बिन्दु का स्थान हमें समय के क्षण के बारे में जानकारी देता है। यदि प्लेटों के दूसरे जोड़े पर विचाराधीन प्रत्यावर्ती वोल्टता है तो वह एकदम उसी प्रकार "फैलेगी" जैसे कि प्रथम पुस्तक में वर्णित साधारण उपकरण की मदद से यांत्रिकीय दोलन "फैलता "है।

"दोलन" शब्द प्रयोग करके मैं ने कोई त्रुटि नहीं की है। प्रत्यावर्ती धारा को व्यक्त करने वाले अधिकांश मान ज्यावक्र के उसी हरात्मक नियम के अनुसार घटता-बढ़ता है जिसके अनुसार संतुलन से लोलक का विचलन होता है। इस बात का विश्वास करने के लिये दोलनमापी को शहर की प्रत्यावर्ती धारा से जोड़ना ही पर्याप्त होगा।

उद्‌वृत्त पर धारा या वोल्टता लिखी जा सकती है। धारा के विनिर्देश वही हैं जो यांत्रिकीय दोलन के हैं। समय का अंतराल जिसके बाद परिवर्तन के चित्र की पुनरावृत्ति होती है, आपको ज्ञात ही होगा, T अवधि कहलाती है; धारा की आवृत्ति ν – अवधि का व्युतक्रम मान है, – तथा सामान्यत: शहर की धारा के लिये 50 साइकल प्रति सेकण्ड होता है।

जब एक ज्यावक्र का अध्ययन किया जाता है तो यह बात महत्व नहीं रखती कि समय को निश्चित करना कहां से आरम्भ किया जाये। यदि दो ज्यावक्र एक दूसरे के ऊपर इस प्रकार अध्यारोपित हों जैसा चित्र 4.2 में दिखाया गया है, तो यह बताना आवश्यक है कि अवधि

के कौन-से अंश में वे कला (phase) पर स्थानांतरित हो गये हैं। $\varphi = 2\pi \frac{t}{T}$ कोण को कला कहते हैं। अतएव, यदि वक्र परस्पर एक चौथाई अवधि से स्थानांतरित हो गये हैं तो हम कहते हैं कि वे कला पर 90 डिग्री से स्थानांतरित हो गये हैं, यदि अवधि के आठवें हिस्से से–तो हम कहते हैं कि कला पर 45 डिग्री से, इत्यादि।

जब कला पर स्थानांतरित अनेक ज्यावक्रों की बात होती है तो तकनीशियन धारा या वोल्टता के सदिशों की बात कर रहे होते हैं। सदिश की लम्बाई ज्यावक्र के आयाम के बराबर होता है, तथा सदिशों के बीच का कोण–कला के स्थानांतरण के बराबर। अनेक तकनीकी उपकरणों से हमें सरल ज्यावक्रीय धारा प्राप्त नहीं होती है बल्कि ऐसी धारा मिलती है, जिसका वक्र अनेक स्थानांतरित ज्यावक्रों का कुल योग होता है।

आइये, यह दिखाए कि सरल ज्यावक्रीय धारा उस स्थिति में पैदा होती है जब चालक कुंडली समान चुम्बकीय क्षेत्र में एक ही रफ़्तार के साथ घूमती है।

बल रेखाओं के प्रति कुंडली की कोई अनिश्चित दिशा होने पर आकृति में से गुज़रने वाली धारा

$$\Phi = \Phi_{\text{अधिकतम}} \sin \varphi$$

होगी।

φ – कुंडली के समतल तथा क्षेत्र को दिशा द्वारा बनाया गया कोण। यह कोण $\varphi = 2\pi t/T$ के अनुसार समय के साथ-साथ परिवर्तित होता है।

वैद्युत-चुम्बकीय प्रेरण के नियम की मदद से हम प्रेरण का वैद्युत-गतिक बल ज्ञात कर सकते हैं। आइये, समय के बहुत ही छोटे अंतराल τ द्वारा पृथक दो क्षणों के लिए चुम्बकीय प्रवाहों के समीकरण लिखें:

$$\Phi = \Phi_M \sin \frac{2\pi}{T} t, \quad \Phi = \Phi_M \sin \frac{2\pi}{T} (t + \tau)$$

इन का अन्तर बराबर होगा:

$$2\Phi_M \cos \frac{2\pi}{T}\left(t + \frac{\tau}{2}\right) \sin\left(\frac{2\pi}{T} \cdot \frac{\tau}{2}\right)$$

चूंकि τ का मान तुच्छ ही है, इसलिये निम्न के बीच लगभग समानता का चिन्ह लगा सकते हैं :

$$\sin\left(\frac{2\pi}{T}\cdot\frac{\tau}{2}\right)\approx\frac{2\pi}{T}\frac{\tau}{2},\ \cos\frac{2\pi}{T}\left(t+\frac{\tau}{2}\right)\approx\cos\frac{2\pi}{T}t$$

प्रेरण का वैद्युत-गतिक बल इस अंतर के बराबर है जो समय से सम्बंधिक है। अर्थात्

$$\mathscr{E}_{\text{प्रेरण}}=\frac{2\pi}{T}\Phi_M\cos\frac{2\pi}{T}t=\frac{2\pi}{T}\Phi_M\sin\left(\frac{2\pi}{T}t-\frac{\pi}{2}\right)$$

हमने सिद्ध किया कि प्रेरण का वैद्युत-गतिक बल ज्यावक्र द्वारा व्यक्त होता है जो चुम्बकीय प्रवाह के ज्यावक्र से 90 डिग्री द्वारा स्थानांतरित होता है। जहां तक प्रेरण के वैद्युत-गतिक बल के अधिकतम मान का, यानी उसके आयाम का, प्रश्न है तो वह चुम्बकीय प्रवाह के आयाम और कुंडली के घूमने की आवृत्ति के गुणनफल के अनुपातिक होता है।

धारा बल के नियम को प्राप्त करने के लिये प्रेरण के वैद्युत-गतिक बल को परिपथ के प्रतिरोध से विभाजित करना होगा। लेकिन हम बहुत बड़ी गलती करेंगे यदि प्रत्यावर्ती धारा के प्रतिरोध को, जो समीकरण के हर में स्थित है, ओम के प्रतिरोध के बराबर लिख देंगे
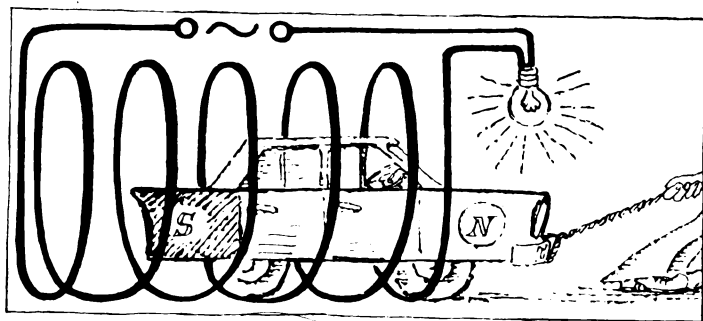
चित्र 4.3

$$I_{\text{प्रत्यावर्ती}} = \mathscr{E}_{\text{प्रेरण}} / R_{\text{प्रत्यावर्ती}}$$

यानी वह मात्रा जिसे हम अभी तक प्रयोग करते आये हैं। ज्ञात होता है कि $R_{\text{प्रत्यावर्ती}}$ केवल ओम के प्रतिरोध पर ही निर्भर नहीं करता, बल्कि परिपथ के दो अन्य प्राचलों–उसका प्रेरकत्व और परिपथ में लागू की गई धारिता–पर भी निर्भर करता है।

यह तथ्य की दिष्ट धारा से प्रत्यावर्ती धारा पर आने से ओम का नियम और अधिक जटिल हो जाता है, निम्न सरल प्रयोग से स्पष्ट है। चित्र 4.3 में वैद्युत बल्ब तथा कुंडली में से गुज़रने वाली धारा का परिपथ दिखाया गया है। इस कुंडली के अन्दर लोहे की छड़ को रखा जा सकता है। सबसे पहले बल्ब को दिष्ट धारा के स्रोत के साथ जोड़ते हैं। अब लोहे की छड़ को कुंडली के अन्दर तथा बाहर निकालने पर हम देखते हैं कि कोई प्रभाव नही होता। परिपथ का प्रतिरोध अपरिवर्तित रहता है यानी धारा बल नहीं बदलता। अब परिपथ को प्रत्यावर्ती धारा के साथ जोड़ कर प्रयोग को दोहराते हैं। प्रभाव एकदम प्रत्यक्ष है, क्यों सच है ना? जब कुंडली के अन्दर छड़ स्थित होती है तो बल्ब काफ़ी तेज़ी से जलता है, लेकिन जब छड़ बाहर होती है तो बल्ब काफ़ी मन्द रोशनी देता है।

अतः, अपरिवर्तित बाहरी वोल्टता पर, अपरिवर्तित ओम के प्रतिरोध पर (जो तारों के पदार्थ, लम्बाई तथा अनुप्रस्थ काट पर आधारित होता है), धारा बल का परिवर्तन कुंडली में लोहे की छड़ के स्थान पर निर्भर करता है।

इसका क्या अर्थ हुआ?

हमें स्मरण होना चाहिये कि लोहे की छड़ कुंडली में से गुज़रने वाली चुम्बकीय धारा को एकदम से (हज़ारों गुना) बढ़ा देता है। वैद्युत-चुम्बकीय बल के प्रत्यावर्ती होने पर कुंडली में चुम्बकीय प्रवाह का हर समय परिवर्तन होता रहता है। लेकिन वह लोहे की छड़ की अनुपस्थिति में शून्य से किसी निश्चित प्रतिबन्धित इकाई तक परिवर्तित होता था, तो छड़ की उपस्थिति में वह शून्य से कई हज़ार इकाइयों तक परिवर्तित होगा।

चुम्बकीय प्रवाह के परिवर्तन के कारण बल रेखाएं "अपनी"

कुंडली के चक्करों को पार कर जाएंगी। कुंडली में स्वप्रेरण धारा पैदा हो जाऐगी। लेन्त्स के नियम के अनुसार इस धारा की दिशा इस प्रकार होगी कि वह प्रभाव, जो इसका कारण है, नष्ट हो जाएगा: वैद्युत-गतिक बल के मार्ग में एक रुकावट आती है जो धारा के दिष्ट होने के समय नहीं थी। अन्य शब्दों में, प्रत्यावर्ती धारा में अतिरिक्त प्रति-रोध होता है जिसके होने की अनिवार्यता इस कारण से है कि चुम्बकीय क्षेत्र अपने परिपथ के तारों को पार करके एक विशेष वैद्युत-गतिक बल बनाता है जिसे उस स्वप्रेरण का वैद्युत-गतिक बल कहते हैं जो धारा के औसत बल को क्षीण बना देती है। यह अतिरिक्त प्रतिरोध प्रेरणिक (inductive) कहलाता है।

प्रयोग से यह स्पष्ट होता है कि (और यह पाठक को, निस्सं-देह, स्वाभाविक लगेगा) कुंडली में घुसने वाली (या, और सामान्य रूप से कहा जाये तो, धारा की संपूर्ण आकृति में घुसने वाली) धारा के बल के आनुपतिक होती है: $\Phi = LI$। जहां तक आनुपातिक गुणांक L का प्रश्न है, जो प्रेरकत्व कहलाता है, तो वह प्रवाहित करने वाली आकृति को ज्यामिती तथा छड़ों पर आधारित होता है। जैसा कि सूत्र से स्पष्ट ही है कि प्रेरकत्व का सांख्यिक मान एक ऐम्पेयर धारा बल पर चुम्बकीय प्रवाह के बराबर होता है। L को मापने की इकाई हैनरी कहलाती है (1 है० = 1 ओम • सेकण्ड)।

सैद्धांतिक तथा प्रायोगिक रूप से सिद्ध किया जा सकता है कि प्रेरणिक प्रतिरोध – R_L निम्न सूत्र द्वारा व्यक्त होता है:

$$R_L = 2\pi \upsilon L$$

यदि ओम का प्रतिरोध (जिससे हम अवगत हैं) तथा धारिता प्रति-रोध (जिससे हम नीचे अवगत होने जा रहे हैं) कम है तो परिपथ में धारा-बल

$$I = \mathscr{E}/R_L$$

के बराबर होगा।

यह निश्चित करने के लिये कि "कम" क्या होता है तथा "अधिक" क्या होता है, आइये, शहर की बिजली-धारा की आवृत्ति तथा

प्रेरकत्व 0.1 है० के लिये प्रेरणिक प्रतिरोध का मान निकालें। यह 30 श्रोम के लगभग होगा।

श्रौर श्रब यह देखें कि एक है० प्रेरकत्व वाली कुंडली कैसी होती है। कुंडलियों तथा चोक कुंडलियों (लोह के छड़ वाली कुंडलियों) का प्रेरकत्व ज्ञात करने के लिये निम्न सूत्र प्रयोग किया जाता है जो हम यहां बगैर निष्कर्ष के दे रहे हैं:

$$L = \mu_0 \mu \frac{n^2}{l} S, \ \mu_0 = 4\pi \cdot 10^{-7} \text{जू०}/(A^2 \cdot m)$$

यहां n – चक्करों की संख्या, l – कुंडली की लम्बाई, S – श्रनुप्रस्थ काट। श्रतएव, 0.002 है० से, उदाहरणतया, निम्न प्राचलों वाली कुंडली प्राप्त होगी: $l = 15$ cm, $n = 1500$, $S = 1$ cm^2। यदि 1000μ वाली लोहे की छड़ डाल दी जाए तो प्रेरकत्व 2 है० के बराबर होगा।

किसी भी उत्पत्ति का वैद्युतगतिक बल, श्रौर इसका श्रर्थ हुश्रा कि स्वप्रेरण का वैद्युत-गतिक बल भी, कार्य करता है। जैसा कि हमें ज्ञात है, यह कार्य $\mathscr{E}I$ के बराबर होता है। यदि धारा प्रत्यावर्ती है तो $\mathscr{E}$ तथा I दोनों ही प्रति क्षण श्रपने मान बदलेंगे। मान लो t क्षण पर इनके मान $\mathscr{E}_1$ तथा I_1 थे, तथा $t+\tau$ क्षण पर $\mathscr{E}_2$ तथा I_2 हो गए। L प्रेरकत्व वाली कुंडली के चक्करों को पार करने वाला चुम्बकीय प्रवाह LI के बराबर होगा। t क्षण पर वह LI_1 के बराबर था, तथा $t+\tau$ क्षण पर – LI_2 के बराबर हुश्रा। धारा के मान को I_1 से I_2 पर लाने में किया गया कार्य किसके बराबर था? वैद्युत-गतिक बल परिवर्तन के समय से सम्बंधित चुम्बकीय प्रवाह के परिवर्तन के बराबर होगा:

$$\mathscr{E} = L(I_2 - I_1)/\tau$$

$\mathscr{E}I\tau$ कार्य को ज्ञात करने के लिये इस समीकरण को समय तथा धारा बल से गुणा करना चाहिये। लेकिन कौन-से बल से? निस्संदेह, उसके श्रौसत मान से यानी $(I_1 + I_2)/2$ द्वारा। श्राइये, परिणाम पर पहुंचें। स्वप्रेरण का वैद्युत-गतिक बल

$$\frac{L}{2}(I_2+I_1)(I_2-I_1) = \frac{L}{2} I_2^2 - \frac{L}{2} I_1^2$$

के बराबर होगा।

इस गणितीय परिणाम को निम्न प्रकार व्यक्त कर सकते हैं। वैद्युत-गतिक बल $LI^2/2$ के दो क्षणों पर मानों के अन्तर के बराबर है। इसका अर्थ हुआ कि प्रेरणित प्रतिरोध पर ऊर्जा का विकिरण नहीं होता, वह ऊष्मा में परिवर्तित नहीं होती, जैसा कि ओम के प्रतिरोध के परिपथों में होता है, बल्कि "भंडार" में चली जाती है। इसलिये $LI^2/2$ मात्रा को धारा की चुम्बकीय ऊर्जा कहना एकदम ठीक होगा।

आइये, देखें कि संघनित्र जोड़ने पर प्रत्यावर्ती धारा के प्रति आकृति के प्रतिरोध का क्या प्रभाव होगा।

यदि दिष्ट धारा के परिपथ में संघनित्र जोड़ दिया जाए तो धारा का प्रवाह नहीं होगा। क्योंकि संघनित्र को जोड़ना परिपथ को तोड़ने के समान ही है। लेकिन वही संघनित्र प्रत्यावर्ती धारा में जोड़ने पर धारा को शून्य में नहीं बदलता।

स्पष्ट है कि हम इस विभेद का कारण समझना चाहते हैं। उत्तर सरल ही है। परिपथ को प्रत्यावर्ती धारा के स्रोत के साथ जोड़ने से वैद्युत आवेश संघनित्र की प्लेटों पर इकट्ठा होना शुरू हो जाता है। एक प्लेट पर धनात्मक आवेश आता है तो दूसरी प्लेट पर – ऋणात्मक। मान लें कि प्रेरणित तथा ओम के प्रतिरोध काफ़ी कम हैं। चार्ज होना तब तक जारी रहेगा जब तक कि संघनित्र की प्लेटों पर वोल्टता अधिकतम नहीं हो जाती तथा स्रोत के वैद्युत-गतिक बल के बराबर नहीं हो जाती। इस क्षण पर धारा बल के बराबर नहीं हो जाती। इस क्षण पर धारा बल शून्य के बराबर होता है। अब स्रोत की वोल्टता कम होनी शुरू होती है तथा संघनित्र "विसर्जित" हो जाता है।

किसी उपकरण की मदद से संघनित्र सहित परिपथ में धारा बल को माप कर हमें विश्वास हो जाएगा कि दोनों मात्राओं के आधार पर धारा बल भिन्न होंगे। सर्वप्रथम, यह सिद्ध होता है कि (प्रायोगिक तथा सैद्धांतिक – दोनों ही रूप से) आवृत्ति के कम होने के साथ-साथ धारा भी कम हो जाती है। अर्थात् धारिता प्रतिरोध आवृत्ति का व्युत्क्रमानुपाती है। परिणाम स्वाभाविक ही है, क्योंकि आवृत्ति जितनी कम होगी, प्रत्यावर्ती धारा उतनी ही अधिक, यदि ऐसे कहा जा सकता है तो, दिष्ट धारा के समीप आ जाती है।

संघनित्र के ज्यामितीय प्राचलों को मापकर यानी प्लेटों के बीच की दूरी तथा प्लेटों का क्षेत्रफल मापकर, हमें विश्वास हो जाएगा कि धारिता प्रतिरोध संघनित्र की धारिता के भी व्युत्क्रमानुपाती होती है।

धारिता-प्रतिरोध का नियम इस प्रकार है:

$$R_c = \frac{1}{2\pi\nu C}$$

30 माइक्रोफैराडे धारिता वाला संघनित्र शहर की बिजली के लिये 100 ओम के लगभग प्रतिरोध बनाएगा।

मैं अब उन सब बातों का वर्णन नहीं करूंगा कि ओम, प्रेरणित तथा धारिता के प्रतिरोधों से बनी धारा के जटिल परिपथों का प्रतिरोध किस प्रकार निश्चित किया जाता है। केवल यह चेतावनी देना चाहूंगा कि परिपथ का सामान्य प्रतिरोध पृथक्-पृथक् प्रतिरोधों के योग के बराबर नहीं होता।

ओम के प्रतिरोध, संघनित्र तथा प्रेरणित कुंडली वाले परिपथ के किसी भाग पर विद्युत-धारा बल तथा वोल्टता को सामान्य विधि द्वारा दोलन-लेखी (इलेक्ट्रॉन-नलिका) की मदद से मापा जा सकता है। धारा तथा वोल्टता दोनों को हम स्क्रीन पर ज्यावक्र के रूप में देख सकते हैं। हमें यह देख कर आश्चर्य नहीं होना चाहिये कि ये ज्यावक्र परस्पर एक निश्चित कला कोण φ से स्थानांतरित हैं। (यह ऐसा ही होना चाहिये—पाठक को आसानी से समझ आ जाएगा यदि उसे स्मरण है कि संघनित्र वाले परिपथ में धारा शून्य के बराबर होती है, जब संघनित्र पर वोल्टता अधिकतम होती है)।

कला φ के स्थानांतरण का मान बहुत ही महत्वपूर्ण है। चूंकि धारा की शक्ति धारा बल तथा वोल्टता के गुणनफल के बराबर होती है। यदि धारा और वोल्टता के ज्यावक्र समान होते हैं, तो यह मान अधिकतम होगा। और यदि उनका स्थानांतरण इस प्रकार है जैसा कि एक धारिता या एक प्रेरणित प्रतिरोध वाले परिपथ में होता है, तो यह मान शून्य के बराबर होगा। यह काफ़ी सरलता से सिद्ध किया जा सकता है। इसके लिये एक दूसरे से 90° के कोण पर हटे हुये
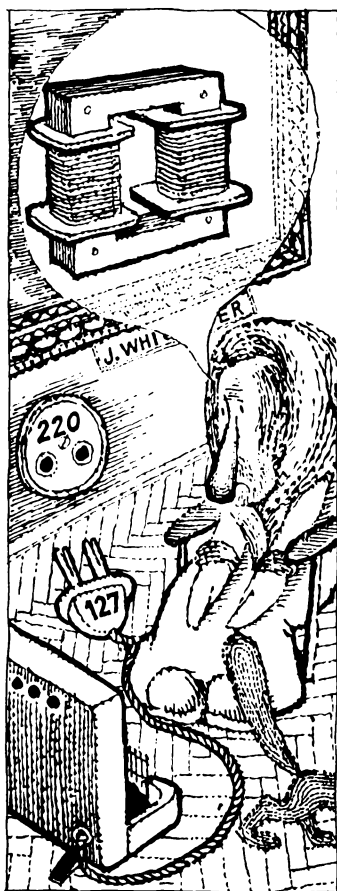
चित्र 4.4

दो ज्यावक्रों को बना कर उनकी कोटियों को गुणा करके एक अवधि के लिये इन गुणनफलों का योग कर दीजिए। हम काफ़ी परिशुद्धता से सिद्ध कर सकते हैं कि सामान्यत: एक अवधि के लिये औसतन प्रत्यावर्ती धारा की शक्ति

$$W = IU \cos \varphi$$

के बराबर होगी।

$\cos \varphi$ को बढ़ाने का कार्य विद्युत-इंजिनियर का है।

ट्रान्सफ़ार्मर (Transformer)

आपने एक रेफ़्रीजिरेटर खरीदा। दुकानदार ने आपको बतलाया था कि यह केवल 220 वोल्ट की बिजली पर ही कार्य करता है। और आपके घर में बिजली 127 वोल्ट की है। अब आप मुसीबत में फंस गए। क्या किया जाए? आपको अब अतिरिक्त खर्चा करना होगा ट्रान्सफ़ार्मर खरीदने पर।

ट्रान्सफ़ार्मर – बहुत ही सरल उपकरण है जिसकी मदद से वोल्टता कम या अधिक की जा सकती है। यह एक लोहे की छड़ से बना होता है जिनके ऊपर दो कुंडलियां लगी होती हैं। कुंडलियों में चक्करों की संख्या भी भिन्न होती है।

आइये, एक कुंडली को घर की बिजली से जोड़ दें। वोल्टमीटर की मदद से हमें यह विश्वास हो जाएगा कि दूसरी कुंडली के सिरों

पर भी वोल्टता आ गई है, लेकिन यह घर की वोल्टता से पृथक् है। यदि पहली कुंडली में चक्करों की संख्या w_1 है, और दूसरी कुंडली में w_2, तो इन पर वोल्टताओं का अनुपात निम्न होगा

$$\frac{U_1}{U_2}=\frac{w_1}{w_2}$$

इस प्रकार, यदि पहली वोल्टता कम चक्करों वाली कुंडली पर लागू की जाती है तो ट्रान्सफ़ार्मर वोल्टता बढ़ा देगा, तथा अधिक चक्करों वाली कुंडली पर वोल्टता लागू करने पर वह वोल्टता को कम कर देगा।

ऐसा किस प्रकार होता है? बात दरअसल यह है कि समस्त वैद्युत प्रवाह लोहे की छड़ में से गुज़रता है। इसका अर्थ यह हुआ कि दोनों कुंडलियां बल रेखाओं की समान संख्याओं द्वारा बेधित हैं। ट्रान्सफ़ार्मर केवल उसी स्थिति में कार्य करेगा जब पहली वोल्टता प्रत्यावर्ती हो। पहली कुंडली में धारा के ज्यावक्रीय परिवर्तन के फल-स्वरूप दूसरी कुंडली में प्रेरण का ज्यावक्रीय वैद्युत-गतिक बल उत्पन्न होगा। दोनों कुंडलियों के चक्कर समान स्थितियों में होते हैं। पहली कुंडली के एक चक्कर का वैद्युत-गतिक बल पहली कुंडली के चक्करों की संख्या से विभाजित विद्युत सप्लाई के वैद्युत-गतिक बल के बराबर होता है U_1/w_1। और दूसरी कुंडली का वैद्युत-गतिक बल U_1/w_1 तथा w_2 चक्करों की संख्या के गुणनफल के बराबर है।

नियमानुसार प्रत्येक ट्रान्सफ़ार्मर वोल्टता को कम करने या बढ़ाने के काम में आ सकता है—केवल यह इस बात पर निर्भर करता है कि पहली वोल्टता कौन-सी कुंडली पर दी गई है।

दिन-प्रतिदिन के कार्यों में हमें ट्रान्सफ़ार्मर की आवश्यकता पड़ती है (चित्र 4.4)। उन ट्रान्सफ़ार्मरों के अलावा, जिन्हें हम प्रतिदिन प्रयोग करने पर विवश हैं क्योंकि बाज़ार में बिकने वाली कई चीज़ें एक वोल्टता के लिये होती है तो शहर की बिजली दूसरी वोल्टता की, मोटर गाड़ी की ज्वलन-कुंडली (ignition coil) से भी कार्य पड़ता है। ज्वलन-कुंडली—यह एक उच्चायी ट्रान्सफ़ार्मर (step-up transformer) है। इंधन को जलाने वाले स्फुलिंग को बनाने

के लिये बहुत ही उच्च वोल्टता की ग्रावश्यकता है, जिसे हम मोटर-गाड़ी की बैटरी से प्राप्त करते हैं। इसके लिये पहले ही से बैटरी की दिष्ट धारा को सविरामी ग्रवरोधक (chopper) की मदद से प्रत्यावर्ती धारा में बदल देते हैं।

ग्रापको ग्रासानी से स्पष्ट हो जाएगा कि वोल्टता को बढ़ाने से ट्रान्सफ़ार्मर के गरम होने पर खर्च होनेवाली यथावत् ऊर्जा से धारा बल कम हो जाता है तथा विपरीततः।

वेल्डित्रों के लिये ग्रपचायी ट्रान्सफ़ार्मरों की ग्रावश्यकता होती है। वेल्डन के लिये बहुत ही शक्तिशाली धारा की ग्रावश्यकता होती है, ग्रौर वेल्डित्र के ट्रान्सफ़ार्मर में केवल एक ही निर्गम चक्कर होता है।

ग्रापने शायद ध्यान दिया होगा कि ट्रान्सफ़ार्मर की छड़ स्टील की पतली-पतली प्लेटों से बनाई जाती है। यह इसलिये किया जाता है कि वोल्टता के रूपांतरण में ऊर्जा की क्षति न हो। हम ऊपर बता ही चुके हैं कि ठोस पदार्थ की ग्रपेक्षा पदार्थ के प्लेटों के रूप में बने होने के कारण भंवर-धाराएं ग्रधिक महत्वपूर्ण रोल ग्रदा नहीं करतीं।

घर में ग्राप छोटे-छोटे ट्रान्सफ़ार्मरों के साथ भी कार्य करते होंगे। जहां तक बड़े-बड़े ट्रान्सफ़ार्मरों का प्रश्न है तो वे बहुत ही विशाल संरचनाएं होती हैं। ऐसी स्थितियों में लोहे की छड़ को कुंडली सहित ठंडा करने वाले तेल से भरे हुये टैंकों में गाड़ दिया जाता है।

विद्युत धारा बनाने वाली मशीनें

यांत्रिकीय गति को विद्युत धारा में परिवर्तित करने वाली मशीनों का निर्माण केवल लगभग 150 वर्ष पहले ही हुग्रा था।

धारा का सबसे पहला जनित्र फैराडे की मशीन थी जिसमें तार का चक्कर स्थायी चुम्बकों के क्षेत्र में घूमता था। लेकिन काफ़ी शीघ्र ही किसी ग्रन्य व्यक्ति के मस्तिष्क में विचार ग्राया कि तारों के एक चक्कर के स्थान पर क्यों न कुंडली को प्रयोग किया जाए ताकि सभी चक्करों पर बनने वाले वैद्युत-गतिक बलों को इकट्ठा किया जा सके। केवल सन् १८५१ में ही स्थायी चुम्बकों को वैद्युत चुम्बकों द्वारा बदला जा सका यानी लोहे की छड़ों के ऊपर चढ़ी हुई कुंडलियों द्वारा। एक

नया पारिभाषिक शब्द बना "मशीन का उत्तेजन", क्योंकि मशीन को चालू करने के लिये वैद्युत-चुम्बक को "जीवित" करना पड़ता था। मशीन को उत्तेजित करने के लिये सबसे पहले बैटरी के स्थायी स्रोत से वैद्युत चुम्बक की कुंडली में धारा देनी पड़ती थी।
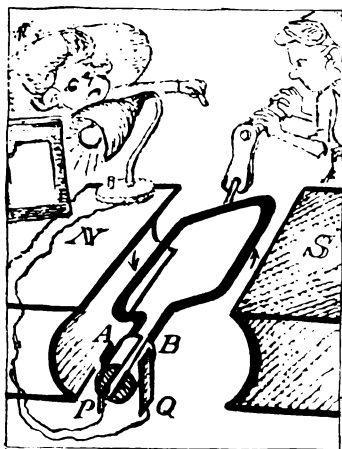
चित्र 4.5

अगला क़दम था मशीन के स्वतः उत्तेजन के नियम की खोज, जिसके अनुसार वैद्युत चुम्बकों को उत्तेजित करने के लिये धारा के अतिरिक्त स्रोत की आवश्यकता नहीं होती थी। वैद्युत चुम्बकों को उत्तेजित करने वाली कुंडली को किसी भी प्रकार मशीन की मुख्य कुंडली के साथ जोड़ना ही पर्याप्त था। पिछली शताब्दी के ९ वें दशक के अन्त में विद्युत मशीन ने वे मुख्य लक्षण प्राप्त कर लिये थे जो आज तक देखने में आते हैं। दिष्ट धारा के जनित्र का सरलतम मॉडल चित्र 4.5 में दिखाया गया है। यदि स्थायी चुम्बकों के क्षेत्र में आकृति को घुमाया जाये तो उसमें से ज्यावक्रीय वैद्युत-गतिक बल प्रवाहित होगा।

यदि आप प्रत्यावर्ती धारा से दिष्ट धारा प्राप्त करना चाहते हैं तो मशीन में एक विशेष उपकरण लगाना होगा जिसे संग्राहक (collector) कहते हैं। संग्राहक दो अर्धवृत्तों A तथा B से बना होता है जो एक दूसरे से पृथक् किये होते हैं तथा एक ही सिलिंडर पर चढ़े हुये होते हैं (चित्र 4.5)। सिलिंडर तथा आकृति इकट्ठे ही घूमते हैं। अर्ध-वृत्तों पर दो संपर्क P तथा Q (बुरुश) लगे होते हैं, जिनकी मदद से धारा बाहर के परिपथ में जाती है। आकृति के प्रत्येक अर्ध-फेरे के बाद उसके सिरे एक बुरुश से दूसरे बुरुश पर आ जाते हैं। इसलिये स्वयं आकृति के अन्दर धारा की दिशा के परिवर्तन पर निर्भर न करते हुये, बाहरी परिपथ में धारा अपनी दिशा

नहीं बदलती। क्योंकि वास्तविक मशीन का घूमने वाला हिस्सा अनेक आकृतियों यानी एक-दूसरे से निश्चित कोण द्वारा पृथक् हिस्सों से बना होता है, तथा संग्राहक उतनी ही प्लेटों से बना हुआ होता है, तो मशीन के बुरुशों पर वास्तव में स्थायी वैद्युत-गतिक बल ही प्राप्त होता है।

आजकल तो दिष्ट धारा के ऐसे जनित्र बनाये जाते हैं जिनकी शक्ति किलोवाट के कुछ अंशों से लेकर कई हज़ार किलोवाट तक होती है। विशाल जनित्रों का प्रयोग विद्युत-अपघटन के लिये रासायनिक उद्योग में तथा अलौह धातुकर्म में (ऐलुमिनियम तथा ज़िंक के उत्पादन के लिये) किया जाता है। वे बहुत बड़ी धाराएं तथा अपेक्षाकृत कम वोल्टता (120 — 200V, 1000 — 20000A) के लिये बनाये जाते हैं। दिष्ट धारा वाली मशीनें आर्क वेल्डकरण में भी प्रयोग की जाती हैं।

लेकिन दिष्ट धारा के जनित्र विद्युत ऊर्जा के मुख्य स्रोत नहीं हैं। सोवियत संघ में विद्युत-ऊर्जा पैदा करने तथा सप्लाई करने के लिये 50 है० वाली प्रत्यावर्ती धारा स्वीकृत की गई है। प्रत्यावर्ती धारा का जनित्र कुछ इस प्रकार बनाया जाता है कि उससे एक ही समय में समान आवृत्ति वाले तीन वैद्युत-गतिक बल प्राप्त हो सकें जो एक दूसरे से कला द्वारा $2\pi/3$ कोण पर पृथक् हों।

ऐसे त्रिकल जनित्र का आरेख चित्र 4.6 में दिखाया गया है। चित्र में प्रत्येक कुंडली की जगह उसका केवल एक ही चक्कर दिखाया गया है। हमारे चित्र में एक चक्कर की तारों को $C_1 — C_4$ द्वारा व्यक्त किया गया है, दूसरे को $C_2 — C_5$ तथा तीसरे को $C_3 — C_6$ से दिखाया गया है। यदि धारा C_1 से प्रवेश करती है तो C_4 से बाहर आती है, इत्यादि। (स्पष्ट है कि रोटर तथा स्टेटर की विभिन्न स्थितियों
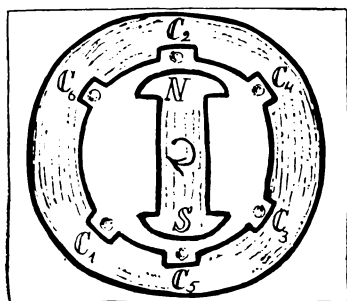
चित्र 4.6
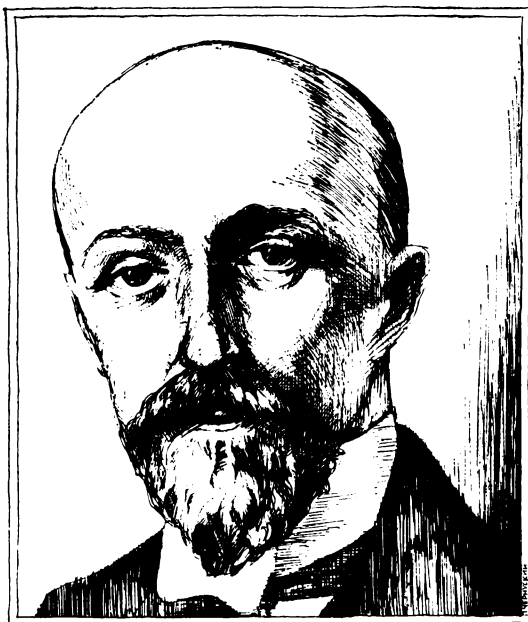
मिखाईल ग्रोसीपोविच दोलीवो-दोब्रोवोल्स्की (१८६२–१६१६) – महान् रूसी वैज्ञानिक तथा इंजिनियर ने त्रिप्रावस्था धारा विन्यास को बनाया, जो संपूर्ण ग्राधुनिक वैद्युत तकनीकी का ग्राधार है। प्रत्यावर्ती धारा के त्रिप्रावस्था परिपथों के ग्रपवाद रहित सभी ग्रवयवों का ग्रध्ययन किया। सन् १८८८ में उन्होंने प्रत्यावर्ती धारा का घूर्णी चुम्बकीय क्षेत्र वाला प्रथम त्रिप्रावस्था जनित्र बनाया।

के ग्रनुरूप क्षणों में कोई भी सिरा धारा का प्रवेश मार्ग या निर्गम बन सकता है)। स्टेटर की कुंडली के स्थायी चक्कारों में वैद्युत-गतिक बल घूमने वाले वैद्युत चुम्बक – रोटर – के चुम्बकीय क्षेत्र द्वारा काटे जाने के फलस्वरूप बनता है। रोटर के एकसान रफ़्तार के साथ घूमने के फलस्वरूप स्टेटर की कला की कुंडलियों में समाया-नुसार परिवर्तित होने वाले वैद्युत-गतिक बल पैदा होते हैं जिनकी ग्रावृत्ति तो समान होती है लेकिन वे एक दूसरे से कला द्वारा 120°

के कोण पर पृथक् होते हैं जिसका कारण है–उनका ग्राकाश में स्थानांतरण।

कुंडली के तीन चक्करों को एक दूसरे के साथ विभिन्न प्रकार तारे या त्रिकोण द्वारा जोड़ा जा सकता है। इन ग्रारेखों को पिछली शताब्दी के १० वें दशक के ग्रारम्भ में मिखाईल दोलीवो-दोब्रोवोल्स्की (१८६२–१६१६) ने तैयार किया तथा प्रयुक्त भी किया। तारे द्वारा जोड़ने से जनित्र की सभी कुंडलियों के सिरों C_4, C_5, C_6 को एक बिन्दु पर जोड़ दिया जाता है जिसे शून्य या उदासीन बिन्दु कहते हैं। ऊर्जा के ग्राही के साथ जनित्र को चार तारों द्वारा जोड़ा जाता है: तीन "रैखिल" जो कुंडलियों के ग्रारम्भिक स्थान C_1, C_2, C_3 से ग्राती हैं तथा शून्य या उदासीन तार जो जनित्र के शून्य बिन्दु से ग्राती है। इस विन्यास को चार तारों वाला विन्यास कहते हैं।
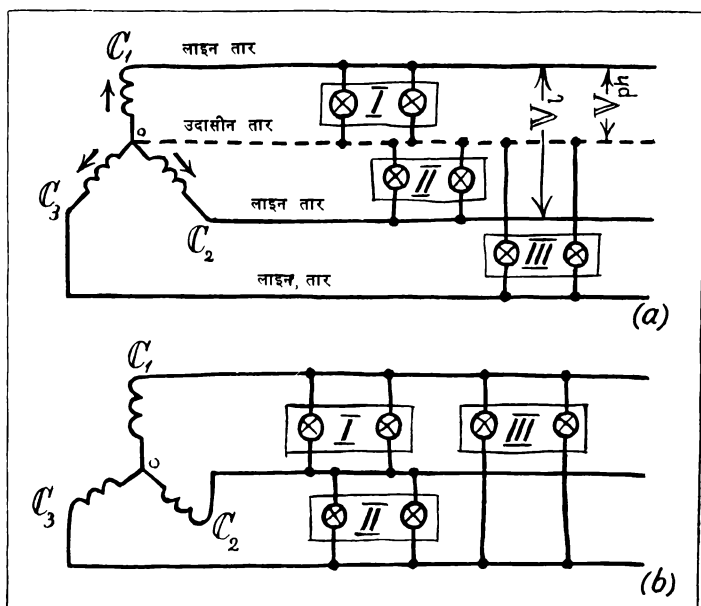
चित्र 4.7

शून्य बिन्दु तथा कला के ग्रारम्भ के बीच वोल्टता को कला वोल्टता कहते हैं। कुंडलियों के ग्रारम्भिक बिन्दुग्रों के बीच वोल्टता रैखिल कहलाती है। ये वोल्टताएं

$$U_{\text{रैखिल}} = \sqrt{3}\, U_{\text{कला}}$$

ग्रनुपात द्वारा सम्बंधित हैं।

यदि सभी तीनों कलाग्रों के उद्भार (I, II, III) समान हैं तो शून्य तार में धारा भी शून्य होगी। इस स्थिति में शून्य तार को समाप्त किया जा सकता है तथा तीन तारों वाले विन्यास द्वारा कार्य किया जा सकता है। तारे के द्वारा जोड़ने के ग्रारेख चित्र 4.7 में दिखाये गये हैं।

त्रिकोण द्वारा जोड़ने पर भी हमें त्रिरेखिल तार प्राप्त होता है। यहां प्रत्येक कुंडली का एक सिरा दूसरी कुंडली के ग्रारम्भिक सिरे के साथ इस प्रकार जोड़ा गया है कि वे तीनों ग्रापस में मिलकर एक बंद त्रिकोण बनाएं। रेखिल तार त्रिकोण के शिखरों के साथ जोड़ दिये जाते हैं। यहां रेखिल वोल्टता कला वोल्टता के बराबर है तथा धाराएं

$$I_{\text{रैखिल}} = \sqrt{3}\, I_{\text{कला}}$$

ग्रनुपात द्वारा सम्बंधित हैं।

त्रिकल परिपथ के निम्न फ़ायदे हैं: एककलीय परिपथ की तुलना में ऊर्जा देने में ग्रधिक किफ़ायती है, एक ही उपकरण से दो प्रकार की वोल्टता मिल सकती है: कला तथा रेखिल।

प्रत्यावर्ती धारा का ऊपर बताया गया जनित्र तुल्यकालिक वैद्युत मशीनों की कोटि का है। यह नाम उन मशीनों को दिया जाता है जिनमें रोटर की ध्रुवण ग्रावृत्ति स्टेटर के चुम्बकीय क्षेत्र की ध्रुवण ग्रावृत्ति के साथ मिलती है।

तुल्यकालिक जनित्र ऊर्जा का मुख्य स्रोत हैं तथा संरचनात्मक दृष्टिकोण से इसके ग्रनेक रूप हैं जो रोटर को घुमाने के लिये प्रयुक्त की गई विधि पर निर्भर करते हैं।

पाठक यह प्रश्न पूछ सकता है: यदि "तुल्यकालिक मशीनें"

होती हैं तो अतुल्यकालिक मशीनें भी अवश्य ही होनी चाहिये। बात भी ठीक है। ऐसी मशीनें इंजन के रूप में प्रयोग होती हैं तथा हम इनका वर्णन अगले अध्याय में करेंगे। उसी अध्याय में हम यह भी विस्तार में बताएंगे कि प्रत्यावर्ती धारा की त्रिकल मशीन का चुम्बकीय क्षेत्र क्यों घूमता है।

वैद्युत इंजन

पैदा की जाने वाली वैद्युत ऊर्जा का आधे से अधिक भाग वैद्युत इंजनों की मदद से यांत्रिकीय ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है जो उद्योगों, कृषि, यातायात तथा गृह-कार्यों की अनेक ज़रूरतें पूरी करती है। सन् १८८६ में होनहार इंजिनियर दोलिवो-दोब्रोवोल्स्की द्वारा बनाया गया सरल, टिकाऊ, सस्ता तथा सादा अतुल्यकालिक इंजन सबसे अधिक प्रचलित हुआ जिसका मुख्य स्वरूप अभी तक वैसा ही है। अतुल्यकालिक ईंजन विभिन्न कल-पुर्जे, पम्प-संपीडन, फोर्जन तथा निपीड, उत्थापन तथा यातायात सम्बन्धी यंत्रों को चलाने के काम आता है।

अतुल्यकालिक इंजन का आदिप्ररूप जोमेनीक आरागो (१७८६–१८५३) द्वारा बनाया गया इंजन का मॉडल था। सन १८२४ में आरागो ने पेरिस विज्ञान अकादमी में एक परिघटना को प्रयोग द्वारा प्रदर्शित किया, जिसका नाम रखा: "घूर्णन का चुम्बकत्व"। उसने सिद्ध किया कि यदि घूमने वाले स्थायी चुम्बक के क्षेत्र में ताम्र की डिस्क रख दी जाये तो वह भी घूमने लगती है। दोलिवो-दोब्रोवोल्स्की ने इस विचार को धाराओं के त्रिकल विन्यास की विशेषताओं के साथ मिलाकर बहुत ही योग्यतापूर्वक कार्य किया। धाराओं का त्रिकल विन्यास चुम्बकीय क्षेत्र का बिना किसी अतिरिक्त उपकरण के घुमना सम्भव बना देता है।

आइये, चित्र 4.8 में दिये गये आरेख को देखें। आरेख को सरलतम बनाने के उद्देश्य से तीन चक्कर दिखाये गये हैं (वास्तव में, स्पष्ट ही है, मशीन में अनेक चक्करों वाली कुंडलियां प्रयुक्त की जाती हैं)। क्रॉस तथा काला बिन्दु प्रत्येक चक्कर में किसी एक निश्चित
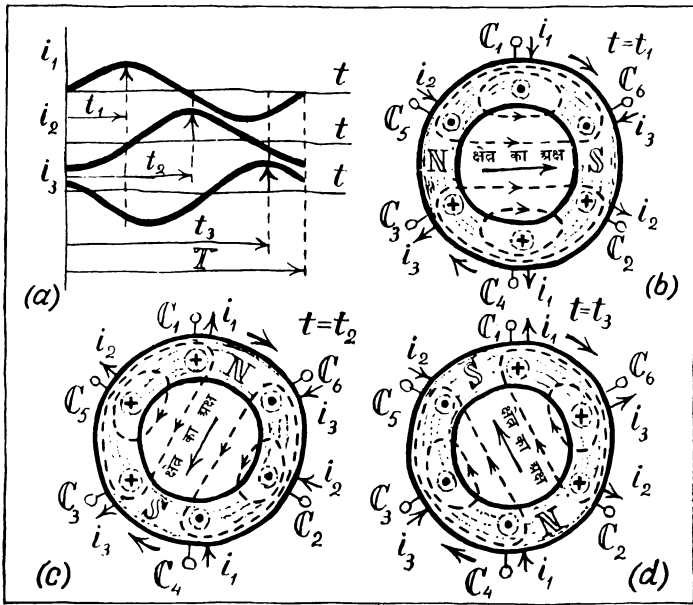
चित्र 4.8

क्षण में धारा का प्रवेश और निर्गम सूचित करते हैं। ये तीनों चक्कर परस्पर 120° का कोण बनाते हैं। चित्र 4.8 a में तीन धाराओं के कला सम्बन्धों i_1, i_2, i_3 को दिखाया गया है जो चक्करों में प्रवाह करती हैं। लेकिन हमारे लिये इन तीनों कुंडलियों का परिणामी चुम्बकीय क्षेत्र महत्व रखता है। चित्र 4.8 b में t_1 क्षण (C_2, C_3 तथा C_4 – प्रवेश) के लिये परिणामी क्षेत्र की बल रेखाएं दिखाई गई हैं तथा चित्र 4.8 c और d में भी इन्हें t_2 तथा t_3 क्षणों के लिये दिखाया गया है। अतएव, हम देखते हैं कि विचाराधीन क्षेत्र घूमता है (क्रॉसों की स्थिति पर ध्यान दीजिए), घूमने के पूर्ण अर्थ में घूमता है। विन्यास के केन्द्र में क्षेत्र का अक्ष उस चक्कर कला के अक्ष के साथ-साथ स्थित होता है जिस पर समय के उस क्षण में अधिकतम धारा होती है।
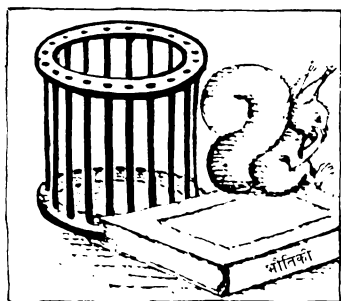
चित्र 4.9

अभी-अभी देखे गये चित्र से आपको स्पष्ट हो गया होगा कि त्रिकल अतुल्यकालिक इंजन के स्टेटर में प्रत्यावर्ती धारा की त्रिकल कुंडली की क्या स्थिति होती है। चुम्बकीय क्षेत्र द्वारा घूमने वाली रोटर (चित्र 4.9) पिंजरी (squirrel cage) होती है यानी न तो कुंडली का सिरा नज़र आता है, न उसका अंत। वह पिंजरी इसलिये कहलाती है क्योंकि वह अनेक छड़ों से बनी होती है जो छल्लों द्वारा जोड़ दिये जाते हैं। अब आप इसकी तुलना दिष्ट धारा की मशीन के साथ कीजिये। कितनी सरल है। आइये, स्टेटर पर प्रत्यावर्ती त्रिकल धारा लगाए। मशीन में घूमने वाला चुम्बकीय क्षेत्र पैदा हो जाता है। इस क्षेत्र की चुम्बकीय बल रेखाएं रोटर की छड़ों को पार कर जाती हैं तथा उनमें धारा प्रेरित करती हैं। छड़, जिसमें धारा का प्रवाह हो रहा है, तथा चुम्बकीय क्षेत्र की परस्पर क्रिया के फलस्वरूप रोटर क्षेत्र की रफ़्तार के लगभग रफ़्तार से घूमने लगती है, लेकिन वह क्षेत्र की रफ़्तार तक कभी भी नहीं पहुंचती। होना भी ऐसे ही चाहिये, अन्यथा विपरीत अवस्था में रोटर की छड़ों द्वारा स्टेटर के घूमने वाले क्षेत्र की बल रेखाओं का काटना नहीं होगा तथा न ही पिंजरी घूमेगी। इसीलिये इस प्रकार की मशीनों को अतुल्यकालिक कहते हैं। रोटर का पीछे रह जाना सर्पण (slip) कहलाता है।

अतुल्यकालिक इंजनों की शक्ति का परिसर काफ़ी बड़ा होता है— एक वाट के अंशों से सैकड़ों किलोवाट तक। और अधिक शक्तिशाली अतुल्यकालिक इंजन भी होते हैं— 6000 वोल्ट और 6000 किलोवाट तक।

अतुल्यकालिक सूक्ष्म-मशीनें स्वचालित मशीनों में प्रयमोमोटर (servo-motor) के रूप में प्रयुक्त की जाती हैं जिनकी मदद से इस पर आने वाला वैद्युत संकेत यांत्रिकीय शैफ़्ट चालन में परिवर्तित

होता है। इसी प्रकार इन्हें टैकोमीटर जनित्र के रूप में भी प्रयुक्त किया जाता है जिनकी मदद से घूर्णन को वैद्युत संकेत में बदला जाता है।

वैद्युत इंजनों के रूप में तुल्यकालिक मशीनों तथा दिष्ट धारा मशीनों को भी प्रयुक्त किया जा सकता है, जिनका अध्ययन हम पहले कर चुके हैं। यह वैद्युत मशीनों के प्रत्यक्ष उत्क्रमणीयता नियम पर आधारित है, जिसके अनुसार कोई भी वैद्युत मशीन जनित्र या इंजन के रूप में कार्य कर सकती है।

उदाहरणतया, द्नीपर नदी पर स्थित कीव जल-इंजीनियरिंग निकाय (hydro-engineering system) में जल-संग्रह केन्द्र है जिसमें उत्क्रमणीय मशीनें हैं जो पंप तथा टरबाइन दोनों का काम कर सकती हैं। विद्युत-विन्यास में वैद्युत ऊर्जा अतिरिक्त होने पर पंप-टरबाइनें जल-संग्रह-टंकी में जल भर देती हैं। इस समय तुल्यकालिक मशीन इंजन के रूप में कार्य करती है। वैद्युत ऊर्जा का अधिकतम प्रयोग होने पर मशीनें इकट्ठा किये गये जल को "बाहर निकाल" देती हैं।

स्टील फ़ैक्टरियों, खानों, रेफ़्रीजिरेटरों में पंपों, संपीडित्रों, पंखों तथा अन्य यन्त्रों को स्थायी रफ़्तार पर चलाने के लिये तुल्यकालिक इंजनों को प्रयोग किया जाता है। स्वचालित यन्त्रों में तुल्यकालिक सूक्ष्म इंजनों का, जिनकी शक्ति वाट के कुछ अंश से सैकड़ों वाटों तक होती है, बड़े विस्तार पर प्रयोग किया जाता है। चूंकि इन इंजनों के घूमने की आवृत्ति एकदम परिशुद्धता से अशन धारा (feeding current) की आवृत्ति से मिलती है तो इनका उपयोग वहां किया जाता है जहां घूमने की रफ़्तार को स्थायी बनाना आवश्यक है— वैद्युत घड़ी-यंत्रों में, स्वतः अंकी तथा सिने उपकरणों के टेप वाहक यंत्रों में, रेडियो में, प्रोग्रामकों में तथा तुल्यकालिक संचार विन्यासों में जिनमें यंत्रों के घूमने की रफ़्तार अशन धारा की वोल्टता द्वारा निर्धारित होती है।

दिष्ट धारा के इंजन की मुख्य संरचना तथा दिष्ट धारा के जनित्र की मुख्य संरचना में किसी भी प्रकार का कोई भेद नहीं होता है। यंत्र में ध्रुवों का स्थायी विन्यास होता है जिनकी उत्तेजन कुंडली किसी

भी विधि द्वारा (श्रेणी या समानांतर में) आर्मेचर के साथ जुड़ी होती है। स्वतंत्र धारा स्रोत भी यंत्र को उत्तेजित कर सकता है। आर्मेचर के खांचों में लपेटी हुई कुंडली होती है जो दिष्ट धारा के स्रोत के साथ जोड़ी जाती है। जनित्र की भांति, इंजन में भी संग्राहक होता है जिसका कार्य घूर्णन आघूर्ण को "सीधा करना" है यानी वह मशीन को काफ़ी देर तक एक ही दिशा में घूमने पर विवश करता है।

श्रेणी उत्तेजन वाला दिष्ट धारा का इंजन विशेष रूप से वैद्युत अभिकर्षण, क्रेन तथा लिफ़्ट के कार्य में प्रयुक्त किया जाता है। ऐसी स्थितियों में अधिक भार होने पर घूर्णन की आवृत्ति का एकदम कम हो जाना तथा अभिकर्षण का काफ़ी बढ़ जाना आवश्यक हो जाता है। श्रेणी उत्तेजन वाले दिष्ट धारा के इंजन में ये सभी गुण विद्यमान होते हैं।

स्वायत्त वैद्युत अभिकर्षण पर रूस में सबसे पहले प्रयोग फ़्योदर पीरोत्स्की (१८४५–१८९८) ने किये थे। सन् १८७६ में ही उसने वैद्युत ऊर्जा को प्रेषित करने के लिये सामान्य रेलवे लाइन को तैयार कर लिया था तथा अगस्त १८८० में उसने पीटर्सबर्ग के राज़देस्वेनस्की पार्क में घोड़ा-गाड़ी रेल मार्ग पर प्रथम वैद्युत ट्राम को चलाया। प्रथम ट्राम के विद्युत-इंजन के रूप में घोड़ा-गाड़ी का दो डेक वाला डिब्बा लिया गया जिसके आगे के भाग में वैद्युत इंजन रखा गया।

रूस में प्रथम ट्राम कीव में सन १८९२ में जनता के लिये खोली गई। उसके वैद्युत इंजन का अशन ऊपर से तार द्वारा दिया जाता था। और निर्माण समिति ने ट्राम को स्वीकृति केवल तभी दी जब यह विश्वास हो गया कि कीव की बहुत ही ऊबड़-खाबड़ सड़कों के लिये, जहां घोड़ा-गाड़ी तथा वाष्प-इंजन भी मुश्किल से चलते हैं, घोड़ा-गाड़ी की तुलना में ट्राम तकनीकी रूप से अधिक उपयोगी है।

रूस में "वैद्युत नौसंचालन" पर सबसे पहले प्रयोग करने वाला था बोरिस याकोबी (१८०१–१८७४) जिसने सन् १८३८ में नेवा नदी में विद्युत-नौका चलाई जिसमें चौदह आदमी बैठे थे। उसे चलाने वाले वैद्युत-इंजन की शक्ति 550 वाट थी। इस इंजन को चलाने के लिये याकोबी ने 320 गैल्वेनी सेल प्रयुक्त किये थे। अभिकर्षण के लिये वैद्युत इंजन का प्रयोग इतिहास में पहली बार हुआ था।

गत वर्षों में एक नया शब्द "टर्बोविद्युत् जहाज़" (turboelectric ship) प्रयुक्त किया जाने लगा है। इस शब्द का अर्थ बहुत ही सरल है: ऐसे जहाज़ पर वाष्प से दिष्ट धारा के बड़े-बड़े शक्तिशाली जनित्र चालू होते हैं और वैद्युत मोटरों के शैफ़्टों पर नोदक लगा दिये जाते हैं। क्या यह सब करना अनावश्यक नहीं है? नोदकों को टरबाइन के शैफ़्टों पर ही क्यों न लगा दिया जाये?

बात दरअसल यह है कि वाष्प टरबाइन केवल निश्चित घूर्णन पर ही अधिकतम शक्ति प्राप्त करती है। शक्तिशाली टरबाइन एक मिनट में 3000 घूर्णन करती है। घूर्णन की रफ़्तार के कम होने से शक्ति भी कम हो जाती है। यदि टरबाइन के शैफ़्ट पर ही नोदक लगे हों तो ऐसे बल उपकरण वाले जहाज़ में रफ़्तार के कोई विशेष गुण नहीं होंगे। दिष्ट धारा के वैद्युत इंजन में अभिकर्षण के आदर्श गुण विद्यमान होते हैं: प्रतिरोध बल जितना अधिक होगा, उतना ही अधिक अभिकर्षण वह बढ़ाएगा, और इतना ही नहीं, ऐसी मोटर अपने स्थान से हिलने के साथ ही कम घूर्णन होने के बावजूद बहुत अधिक शक्ति दे सकती है।

इस प्रकार, दिष्ट धारा के जनित्र तथा इंजन, जो टर्बोविद्युत जहाज़ की टरबाइन तथा नोदक के बीच स्थित होते हैं, परिवर्ती चाल वाले स्वचालित उच्च श्रेणी के गिअर बॉक्स का रोल अदा करते हैं। सम्भव है कि आपको यह बहुत ही विशाल लगे, लेकिन आधुनिक शक्तिशाली टर्बोविद्युत जहाज़ों में कोई भी अन्य विन्यास इतना ही विशाल होगा परन्तु कम उपयोगी होगा।

टर्बोविद्युत जहाज़ के बल उपकरण को और अधिक श्रेष्ठ निम्न प्रकार बनाया जा सकता है: वाष्प के विशालकाय क्वथित्रों के स्थान पर परमाणु-रिऐक्टरों को प्रयोग करना काफ़ी लाभदायक सिद्ध होगा। इस प्रकार आप ईंधन की भी काफ़ी बचत कर सकते हैं जो आपको यात्रा में साथ ले जाना पड़ता है। प्रथम सोवियत परमाणु-बर्फ़ भंजक जहाज़ "लेनिन" सारी दुनिया में प्रसिद्ध है। इस टर्बोविद्युत जहाज़ के नाभिकीय बल उपकरण के कारण यह जहाज़ एक वर्ष तक स्वयं यात्रा कर सकता है।

दिष्ट धारा के इंजन बड़ी लाइनों के रेलवे विद्युत इंजनों, परिनागर

रेलवे इंजनों, ट्रामों तथा ट्रॉली बसों में प्रयुक्त किये जाते हैं। उनके अशन के लिये ऊर्जा स्थायी बिजलीघर से ली जाती है। सोवियत संघ में विद्युत कर्षण के लिये दिष्ट धारा तथा 50 हर्ट्स वाली औद्योगिक आवृत्ति की एककलीय प्रत्यावर्ती धारा प्रयोग की जाती है। ट्राम, ट्रॉली बसों तथा भूमिगत रेलवे के उपबिजलीघरों में सिलिकन दिष्टकारियों का प्रयोग बहुत प्रचलित हो गया है। बड़ी रेलवे की स्थिति में धारा का दिष्टकरण उपबिजलीघरों में भी हो सकता है तथा रेलवे इंजनों पर भी हो सकता है।

अध्याय ५

वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्र

मैक्सवेल के नियम

गत शताब्दी की छठी दशक तक विद्युत तथा चुम्बकत्व के बारे में बहुत सामग्री इकत्रित कर ली गई थी। लेकिन यह सामग्री काफ़ी बिखरी हुई थी तथा कभी-कभी अंतर्विरोधों से परिपूर्ण थी और किसी भी प्रकार से एक रचनात्मक आरेख नहीं बनाती थी।

परन्तु ज्ञात बहुत कुछ हो गया था। प्रथमतः, भौतिकज्ञों को यह मालूम था कि विराम की अवस्था में स्थित वैद्युत आवेश वैद्युत क्षेत्र बनाते हैं, द्वितीयतः वैद्युत धाराएं चुम्बकीय क्षेत्र पैदा करती हैं, तथा, तीसरे फ़ैराडे द्वारा किये गये प्रयोगों के परिणामों को प्रकाशित किया गया तथा उन्हें सर्वत्र मान्यता प्राप्त हुई जिनसे यह सिद्ध हुआ था कि प्रत्यावर्ती चुम्बकीय क्षेत्र विद्युत-धारा उत्पन्न करता है।

निस्संदेह, उस समय अनेक वैज्ञानिकों तथा सबसे पहले स्वयं फ़ैराडे के विचारों के अनुसार यह विश्वास दृढ़ बनता जा रहा था कि वैद्युत धाराओं और आवेशों के चारों ओर के आकाश में कुछ घटनाएं घटती रहती हैं। शोधकर्त्ताओं के इस ग्रुप का अनुमान था कि वैद्युत तथा चुम्बकीय बल एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु पर स्थानांतरित होते हैं। सम्मिलित गिअरों के विन्यास की भांति आरेख बनाने की चेष्टाएं बहुत प्रचलित हुईं, जिनकी मदद से वैद्युत ऊर्जा को प्रदान करने की विधि को स्पष्टता से देखा जा सकता था। लेकिन कुछ वैज्ञानिकों ने "सुदूर नियंत्रण" सिद्धांत का प्रचार किया; उनका अनुमान था कि ऐसी कोई भौतिक क्रिया होती ही नहीं जो वैद्युत तथा चुम्बकीय बलों को प्रदान करती हो। उनके विचार में क्षेत्र तथा बल रेखाओं की परिघटनाओं को ज्यामितीय आकारों के रूप में देखना चाहिए, जिनका किसी भी प्रकार की यथार्थता नहीं है।
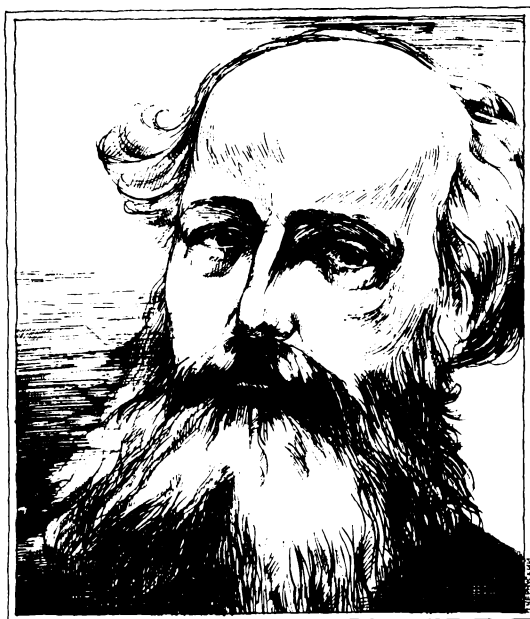
जेम्स क्लार्क मैक्सवेल (१८३१–१८७९)–प्रसिद्ध इंग्लिश वैज्ञानिक, सैद्धांतिक वैद्युत गतिविज्ञान का संस्थापक। मैक्सवेल के समीकरण वैद्युत चुम्बकीय तरंगों तथा अपने उद्‌गम से स्वतंत्र वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्र का व्यवहार व्यक्त करते, हैं। मैक्सवेल प्रकाश के वैद्युत चुम्बकीय सिद्धान्त का संस्थापक है। उनके समीकरणों से प्रकाश के विस्तारण की गति का मान स्वतः प्राप्त हुआ। मैक्सवेल सिद्धान्त से वैद्युत पारगम्यता तथा अपवर्तन गुणांक के बीच सम्बन्ध, तरंग में वैद्युत तथा चुम्बकीय सदिशों की लम्बकोणीयता और प्रकाश दाब की विद्यमानता ज्ञात होती है।

गैसों के गतिज सिद्धान्त को बनाने में भी मैक्सवेल का बहुत अधिक योग है। गैस के अणु का चाल द्वारा विस्तारण करने का श्रेय भी उन्हें दिया जाता है।

जैसा कि विज्ञान के इतिहास में प्रायः होता आया है, सच्चाई इनके कहीं मध्य में थी: वैद्युत चुम्बकीय परिघटनाओं को पदार्थ के विशेष रूप "इथर" के साथ सम्बंधित करने की चेष्टाएं तो निराधार सिद्ध हुईं ही, इसके साथ ही वे शोधकर्ता भी गलत साबित हुये जिनका अनुमान था कि वैद्युत चुम्बकीय प्रतिक्रियाओं का एक आवेश या धारा से दूसरे आवेश या धारा पर स्थानांतरण एक क्षण में होता है।

२६ वर्ष की आयु में इंग्लिश वैज्ञानिक जेम्स क्लर्क मैक्सवेल (१८३१–१८७९) ने एक लेख प्रकाशित किया जिसका शीर्षक था: "फैराडे की बल रेखाएं"। वास्तविक रूप से इस लेख में उसने स्वयं ज्ञात किये गये नियमों को भी समावेश कर लिया था। लेकिन अभी उसे कुछ और समय की आश्यकता थी, ताकि वह यांत्रिकीय धारणाओं को एक ओर रख कर विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र के नियमों को ऐसे रूप में प्रस्तुत कर सके कि उन्हें समझने के लिये सरल आलेखी चित्र की सहायता न लेनी पड़े।

इस संदर्भ में स्वयं मैक्सवेल ने निम्न शब्द कहे थे: भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण रखने वाले लोगों की भलाई के लिये वैज्ञानिक सत्य का विभिन्न रूपों में होना आवश्यक है तथा उसे वैज्ञानिक कहा जाना चाहिये चाहे वह स्पष्टतापूर्ण एवं सजीव रंगों वाले भौतिकीय चित्र द्वारा व्यक्त किया गया हो, चाहे सरल एवं रंगहीन प्रतीकों द्वारा व्यक्त किया गया हो।

मैक्सवेल के नियमों का स्थान प्रकृति के आधारभूत साधारण नियमों में है। इन नियमों का निर्धारण तर्कसंगत युक्तियों तथा गणितीय गणनाओं के आधार पर नहीं हुआ है। प्रकृति के नियम हमारे ज्ञान के सामान्यीकरण का परिणाम हैं। प्रकृति के नियमों की खोज की जाती है, उन्हें निर्धारित किया जाता है... प्रकृति के नियमों की खोज करते समय प्रतिभाशाली व्यक्तियों द्वारा प्रस्तुत कल्पनाओं तथा रचनात्मक उजागरता का मार्ग विज्ञान के इतिहासज्ञों तथा मनोवज्ञानिकों के लिये अध्ययन का दिलचस्प विषय है। लेकिन यह बड़ा विषय एक विशेष पुस्तक के लिये है। मैक्सवेल के नियमों तक पहुंचाने वाली क्रमानुगत कल्पनाओं के किसी आरेख के अध्ययन के सिवा पाठक व हमारे पास अन्य कुछ नहीं है।

जब मैक्सवेल ने विद्युत तथा चुम्बकीय क्षेत्रों पर लागू होने वाले नियमों को संक्षिप्त रूप से प्रतीकों द्वारा व्यक्त करने का ध्येय अपने समक्ष रखा तो उस समय उसे क्या ज्ञात था?

सर्वप्रथम, उसे यह ज्ञात था कि विद्युत आवेश के समीप आकाश में किसी भी बिन्दु को विद्युत बल (तीव्रता) के सदिश के द्वारा व्यक्त किया जा सकता है तथा विद्युत धारा के समीप किसी भी बिन्दु को—चुम्बकीय बल के सदिश द्वारा।

लेकिन क्या स्थिर आवेश विद्युत क्षेत्र के एकमात्र स्रोत हैं? क्या विद्युत धाराएं चुम्बकीय क्षेत्र के एकमात्र स्रोत हैं?

मैक्सवेल इन दोनों प्रश्नों का नकारात्मक उत्तर देता है तथा विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र के नियमों की खोज में निम्न प्रकार की कल्पनाओं की मदद लेता है।

फ़ैराडे ने सिद्ध किया था कि चुम्बकीय बल रेखाओं के प्रत्यावर्ती प्रवाह द्वारा बेधित तार से बनी आकृति में विद्युत धारा उत्पन्न होती है। लेकिन धारा उस समय उत्पन्न होती है जब विद्युत आवेशों पर विद्युत बल प्रभाव डालता है। यदि ऐसा है तो फ़ैराडे के नियम को निम्न शब्दों द्वारा व्यक्त किया जा सकता है: विद्युत क्षेत्र उस तार की आकृति में पैदा होता है जिसमें से प्रत्यावर्ती चुम्बकीय प्रवाह गुज़र रहा हो।

लेकिन क्या यह बात महत्व रखती है कि तार की आकृति चुम्बकीय प्रवाह को पकड़ लेती है? क्या चुम्बकीय क्षेत्र के लिये यह एक ही बात नहीं है कि वह कहां पैदा होता है: धात्विक तार में या रिक्त आकाश में? मान लीजिए कि एक ही बात है। तब निम्न स्वीकृति सही होगी: परिवर्तित होने वाली चुम्बकीय बल रेखाओं के प्रवाह के समीप संवृत विद्युत बल रेखा उत्पन्न हो जाएगी।

अब विद्युत क्षेत्र से सम्बंधित मैक्सवेल के दो नियम पूर्णतया निर्धारित कर लिये गए हैं। हम निश्चयपूर्वक कहते हैं कि विद्युत क्षेत्र दो प्रकार उत्पन्न होता है: विद्युत आवेशों से (इस स्थिति में बल रेखाएं धनात्मक आवेशों में आरम्भ होती हैं तथा ऋणात्मक आवेशों में समाप्त होती हैं) तथा प्रत्यावर्ती चुम्बकीय क्षेत्र से (इस स्थिति में विद्युत बल रेखा संवृत होती है तथा परिवर्तित होने वाले चुम्बकीय प्रवाह को पकड़ लेती है)।

अब हम चुम्बकीय क्षेत्र से सम्बंधित नियमों की खोज पर आते हैं। चुम्बकीय क्षेत्र धाराओं द्वारा उत्पन्न होता है—यह मैक्सवेल को ज्ञात है। दिष्ट धारा दिष्ट चुम्बकीय क्षेत्र का स्रोत होता है तथा प्रत्यावर्ती धारा प्रत्यावर्ती चुम्बकीय क्षेत्र बनाती है। लेकिन तार में प्रत्यावर्ती धारा प्रत्यावर्ती विद्युत क्षेत्र द्वारा बनाती है। परन्तु यदि तार हो ही नहीं और प्रत्यावर्ती विद्युत क्षेत्र रिक्तता में हो तो क्या होगा ? क्या यह सोचना तर्क संगत नहीं होगा कि विद्युत बल रेखाओं के प्रत्यावर्ती प्रवाह के समीप संवृत चुम्बकीय बल रेखा उत्पन्न होती है? यह चित्र अपनी सममिति के कारण काफ़ी दिलचस्प बन गया हैं: प्रत्यावर्ती चुम्बकीय प्रवाह विद्युत क्षेत्र बनाता है, तथा प्रत्यावर्ती विद्युत प्रवाह चुम्बकीय क्षेत्र बनाता है।

अतः, विद्युत क्षेत्र से सम्बंधित दो नियमों के साथ दो और नियम जोड़ दिये जाते हैं जो चुम्बकीय क्षेत्र के व्यवहार पर नियंत्रण रखते हैं। तीसरा नियम हुआ: चुम्बकीय क्षेत्र का कोई स्रोत नहीं होता (चुम्बकीय आवेश नहीं होते), चौथा नियम हुआ: चुम्बकीय क्षेत्र को विद्युत धाराओं तथा प्रत्यावर्ती विद्युत क्षेत्र द्वारा बनता है।

मैक्सवेल के चारों नियमों को बहुत ही अधिक स्पष्टता से गणितीय समीकरणों के रूप में लिखा जा सकता है। मुझे खेद है कि मैं पाठक को इस अभिलेख का अर्थ नहीं समझा सकता। इसे समझने के लिये गणित का गूढ़ ज्ञान होना अनिवार्य है (चित्र 5.1)।

चित्र 5.1

मैक्सवेल के नियम इस बात की ओर इशारा करते हैं कि प्रत्यावर्ती चुम्बकीय क्षेत्र विद्युत
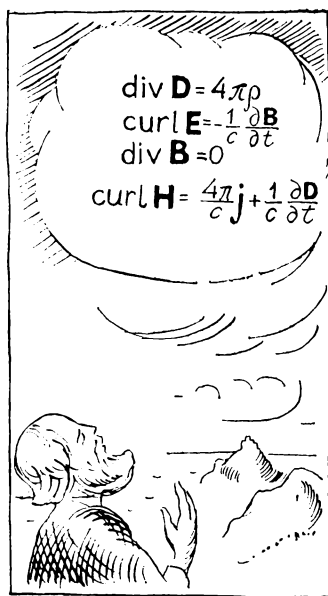
क्षेत्र के बिना नहीं हो सकता तथा प्रत्यावर्ती विद्युत क्षेत्र चुम्बकीय क्षेत्र के बिना नहीं हो सकता। इसी कारणवश् दो विशेषणों को बिंदु द्वारा पृथक नहीं किया जाता। विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र एक अविभाज्य वास्तविकता है।

विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र के स्रोतों–आवेशों से थोड़ा अलग हो जाये तो हमारा सामना विद्युत चुम्बकीय पदार्थ के साथ, तथाकथित उसके शुद्ध रूप में, होता है। बल रेखाओं के पुंजों का अध्ययन यहां आवश्यक नहीं है। मैक्सवेल के नियमों को इस रूप में लिखा जा सकता है कि वे आकाश में किसी भी बिन्दु पर लागू हो सकते हैं। उस स्थिति में वे विशेष रूप से सरल प्रतीत होते हैं। उस बिन्दु पर, जहां विद्युत सदिश समय में बदलता है, चुम्बकीय क्षेत्र का सदिश विद्यमान होता है तथा उसी प्रकार समय में बदलता भी है।

पाठक प्रश्न कर सकता है कि क्या यह सब कोरी कल्पना नहीं है? क्योंकि चुम्बकीय तथा विद्युत क्षेत्रों के बहुत ही शीघ्रतापूर्वक परिवर्तित होने वाले सदिशों की मात्रा को बिन्दु पर मापा जाना असम्भव कार्य है।

बिल्कुल ठीक! लेकिन प्रकृति के नियमों की महानता उनमें से प्राप्त होने वाले निष्कर्षों के आधार पर निश्चित की जाती है। इन निष्कर्षों का मूल्यांकन करना असम्भव है। यह कहने में अतिश्योक्ति नहीं होगी कि समस्त विद्युत तकनीकी तथा रेडियो तकनीकी मैक्सवेल के नियमों पर आधारित है।

लेकिन मैक्सवेल नियमों से निकलने वाले एक बहुत ही महत्वपूर्ण निष्कर्ष के बारे में बताना अति-आवश्यक है। जटिल परिकलनों का सहारा लिये बिना ही सिद्ध किया जा सकता है कि विद्युत-चुम्बकीय विसर्जन की विद्यमानता अवश्यमेव है।

मान लो कि आकाश के किसी एक निश्चित भाग में आवेश तथा धाराएं विद्यमान हैं। इस विन्यास में अनेक प्रकार के ऊर्जा रूपांतरण घटित हो सकते हैं। यांत्रिकीय तथा रासायनिक स्रोत विद्युत धाराओं को उत्पन्न करते हैं तथा विद्युत धाराएं अपने क्रम में यंत्रों को चलाती हैं तथा ऊष्मा जिसे तार विसर्जित करते हैं। आइये, अब लाभ तथा हानि का हिसाब लगायें। वे बराबर नहीं बैठते हैं। परिकलनों से स्पष्ट

होता है कि हमारे विन्यास में से ऊर्जा का कुछ अंश आकाश में चला गया है।

क्या हमारा सिद्धांत इस "विसर्जित" ऊर्जा के बारे में कुछ बतला सकता है? प्रतीत होता है कि हां, बतला सकता है। स्रोत के समीप के समीकरण को यदि हल किया जाये तो काफ़ी जटिलता पेश आएगी, लेकिन "विसर्जन" करने वाले विन्यास के आकार से कहीं अधिक दूरी पर समीकरण को हल किया जाए तो यह कार्य काफ़ी आसान हो जाता है तथा मुख्य बात यह है कि इसे प्रयोग द्वारा सिद्ध किया जा सकता है।

काफ़ी अधिक फासलों पर विद्युत चुम्बकीय विसर्जन को – यह उस ऊर्जा-अपूर्णता का नाम है जो गतिमय आवेशों के विन्यास में बनती है, – आकाश में किसी भी बिन्दु पर विस्तारण की दिशा द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। इस दिशा में विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा 300 000 कि० मी०/सेकंड की चाल से स्थानांतरित होती है। यह परिमाण सिद्धांत के आधार पर निश्चित किया गया है।

सिद्धांत से निकलने वाला अन्य निष्कर्ष है: विद्युत तथा चुम्बकीय सदिश तरंग के विस्तारण की दिशा पर एवं एक दूसरे पर लम्ब बनाते हैं। और, तीसरे, विद्युत चुम्बकीय विसर्जन की तीव्रता (क्षेत्रफल की प्रति इकाई पर आने वाली ऊर्जा) वर्ग दूरी के व्युत्क्रमानुपातिक होती है।

चूंकि यह ज्ञात हो गया था कि प्रकाश का विस्तारण 300 000 कि० मी०/सेकंड की रफ़्तार से होता है यानी वह रफ़्तार जो विद्युत चुम्बकीय विसर्जन के लिये निश्चित की गई थी तथा प्रकाश के ध्रुवण के बारे में पर्याप्त विस्तृत ज्ञान था जिसके कारणवश् हम यह मानने पर विवश थे कि प्रकाश ऊर्जा में कुछ "क्रास" गुण विद्यमान हैं, तो मैक्सवेल इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि प्रकाश एक प्रकार का विद्युत चुम्बकीय विसर्जन है।

मैक्सवेल की मृत्यु के लगभग दस वर्ष पश्चात् नवें दशक के अंतिम वर्षों में, जर्मनी के अद्वितीय भौतिकतज्ञ हेनरिक हर्टस् (१८५७–१८९४) में प्रयोगों द्वारा मैक्सवेल सिद्धांत के सभी निष्कर्षों को सही सिद्ध किया। इन प्रयोगों के बाद मैक्सवेल के नियम हमेशा-हमेशा के लिये सिद्ध हो गये तथा हाथ की उंगलियों पर गिने जा सकने वाले उन आधार-

शिलाओं में आते हैं जिनपर आधुनिक प्रकृतिविज्ञान की इमारत खड़ी है।

विसर्जन के यांत्रिकीय मॉडल

यांत्रिकीय मॉडल गणितीय मॉडलों के एकदम विरुद्ध हैं। यांत्रिकीय मॉडलों को मनकों, स्प्रिंगों, तारों, रबड़ की तारों इत्यादि की मदद से बनाया जा सकता है। यांत्रिकीय मॉडल की मदद से परिघटना को "दृष्टिगोचर" बनाया जा सकता है। यांत्रिकीय मॉडल को बनाकर तथा उसे प्रदर्शित करके हम परिघटना को समझाने में यह बताते हुए मदद कर सकते हैं कि किसी एक मात्रा ने इतने स्थानांतरण पर इस प्रकार व्यवहार किया। प्रत्येक गणितीय मॉडल की यांत्रिकीय मॉडल के साथ तुलना नहीं की जा सकती।

इससे पूर्व कि हम विद्युत चुम्बकीय विसर्जन के बारे में बतलायें जो एक तथ्य है जिसे अनगिनत प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया जा चुका है तथा जो मैक्सवेल के समीकरणों से दृढ़ तर्क के आधार पर निर्धारित है, हमें विसर्जन के सम्भव यांत्रिकीय मॉडलों के बारे में चर्चा करनी चाहिये।

ऐसे मॉडलों की संख्या केवल दो हैं: कणिका तथा तरंग।

एक ऐसा खिलौना बनाया जा सकता है जो सभी दिशाओं में छोते-छोटे कणों के, यानी खसखस के दानों के आकार वाले कणों के प्रवाहों को "विसर्जित" करेगा। यह ही कणिका मॉडल कहलाता है।

किसी निश्चित रफ़्तार से चलते हुए किसी निश्चित द्रव्यमान वाले कण को यांत्रिकी के नियमों के अनुसार व्यवहार करना चाहिये। कणों का संघट्टन हो सकता है, जिसके फलस्वरूप वे अपनी दिशा बदल सकते हैं लेकिन यह वे एक आवश्यक शर्त पर ही कर सकते हैं कि संघट्टन पूर्णतया ऊर्जा संरक्षण तथा आवेग संरक्षण नियमों के अनुसार हो। ऐसा भी हो सकता है कि कण किन्हीं पदार्थों के पार न जा सकें। इस स्थिति में वे निम्न नियम के अनुसार परावर्तित होंगे: आपतन कोण (angle of incidence) परावर्तन कोण (angle of reflection) के बराबर होता है। माध्यम (medium) द्वारा कणों का अवशोषण हो सकता है। यदि किसी एक माध्यम में

दूसरे माध्यम की तुलना में कणों को गति करने में आसानी होती है तो अपवर्तन परिघटना को समझाना कठिन नहीं है। अपारदर्शी स्क्रीन पर छिद्र में से गुज़रते समय बिन्दु स्रोत (point source) में से आने वाले कणों का प्रवाह शंकु के अन्दर ही गतिरत रहना चाहिये। यह सही है कि मामूली-से विकिकरण की सम्भावना है क्योंकि कणों की मामूली संख्या छिद्र के किनारों द्वारा परावर्तित हो जाएगी। लेकिन ये "परावर्तन" अव्यवस्थित रूप में होंगे तथा किसी प्रकार का नियमबद्ध चित्र नहीं बनाएंगे जो ज्यामितीय प्रच्छाया (umbra) से बाहर हो।

तरंग मॉडल को साधारणतया जल से भरे हुए टब की मदद से प्रदर्शित किया जाता है। किसी भी बिन्दु पर जल में तरंग पैदा करना कोई कठिन कार्य नहीं है। इस बिन्दु से जल में पत्थर फेंके जाने की भांति दायरे बनने लगेंगे। तरंगनुमा जल की सतह को आंख से देखा जा सकता है। ऊर्जा सभी दिशाओं में विस्तारित होगी तथा किसी एक दूरी पर स्थित चिप भी कम्पायमान हो जाएगा एवं इसकी आवृति उस बिंदु की आवृत्ति के बराबर होगी जिस पर हमने ऊर्जा लागू की है।

ध्वनि कम्पनों को दृष्टिगोचर बनाना काफ़ी कठिन कार्य है। लेकिन पूर्णतया विश्वासजनक प्रयोग किये जा सकते हैं जिनकी मदद से यह सिद्ध किया जा सकता है कि ध्वनि का विस्तारण माध्यम के यांत्रिकीय स्थानांतरण का एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु पर होना है।

अनेक परिघटनाओं को समान रूप से भली भांति तरंग तथा कणिका मॉडलों की सहायता से समझाया जा सकता है। लेकिन दोनों मॉडल समान रूप से उपयोगी होंगे यदि केवल एक अतिरिक्त शर्त पर तरंग कणों के प्रवाह की भांति ही व्यवहार करती है, यदि उसके मार्ग में आने वाली बाधाएं तथा छिद्रों का आकार तरंग की लम्बाई से कम हो।

हम बिना किसी प्रकार की कठिनाई से तरंग मॉडल के मुख्य सूत्र $c = \nu\lambda$ के आधार पर ज्ञात कर सकते हैं कि मानव की ध्वनि की औसत आवृति 1000 हर्टस् के लिये 30 से० मी० लम्बी तरंग होती है। ऐसी तरंग कोण पर मुड़ जाएगी यदि उसे 1 मी० आकार वाले छिद्र में से गुज़रना पड़ेगा। लेकिन यदि छिद्र का आकार

1 से० मी० के बराबर हो तो इस स्थिति में ध्वनि तरंग के बारे में कहा जा सकता है जो छिद्र में से केवल तब ही गुज़रेगी जब स्रोत तथा ध्वनि ग्राही को मिलाने वाली सरल रेखा किसी बाधा से नहीं टकराती है।

मान लो कि काफ़ी ऊंचाई पर स्थित खुली खिड़की वाले कमरे में कोई रेडियो सुन रहा है। खिड़की के नीचे बाहर की ओर बैठा हुआ व्यक्ति इसे स्पष्टता से सुन सकता है। यदि खिड़कियां अच्छी प्रकार बंद हैं तथा दीवारें भी मोटी हैं तो ध्वनि केवल दरवाज़े के ताले के छिद्र में से ही बाहर जा सकेगी। अब सर्वाधिक संवेदनशील ग्राही संकेत को केवल उसी स्थिति में ग्रहण करेगा यदि ध्वनि का स्रोत, ताले का छिद्र तथा ग्राही एक ही सरल रेखा पर स्थित हों। इस स्थिति में ध्वनि ऊर्जा कणों के प्रवाह के रूप में विस्तारित होती है।

प्रयोगों एवं वार्त्ता द्वारा जल के टब से यह सिद्ध किया जा सकता है कि टब के किनारों से परावर्तन का नियम जिनकी अनियमिता तरंग दैर्ध्य से कम हो, तरंग मॉडल के लिये भी सही है।

पाठक यह भली प्रकार जानता है कि समतल चिकनी सतह ध्वनि या किसी अन्य तरंग को किस प्रकार परावर्तित करती है। दिलचस्प समस्याएं उन स्थितियों में पैदा होती हैं जब परावर्तन करने वाली सतह का मुड़ा हुआ स्वरूप होता है।

प्रस्तुत है ऐसी ही एक समस्या। बिन्दु स्रोत से निकलने वाली तरंग को किसी बिंदु पर पुनः इकट्ठा करने के लिये किस प्रकार की सतह होनी चाहिये? परावर्तन करने वाली सतह का स्वरूप ऐसा होना चाहिये ताकि उस पर एक बिन्दु से विभिन्न कोणों पर गिरने वाली किरणें पुनः एक ही बिन्दु पर परावर्तित हों। यह किस प्रकार की सतह होगी?

पाठक को उस अद्वितीय वक्र के गुणों को याद दिला दें जिसे दीर्घवृत्त कहते हैं। दीर्घवृत्त के एक फ़ोकस (नाभि) से वक्र पर किसी भी बिन्दु तक की तथा दूसरे फ़ोकस से इसी बिंदु तक दोनों की दूरी दीर्घवृत्त के सभी बिंदुओं के लिये समान होती । मान लें कि दीर्घवृत्त मुख्य व्यास के चारों ओर घूमता है। घूमने वाला वक्र ऐसी सतह बनाएगा जिसे दीर्घवृत्तज (ellipsoidal) कहते हैं (दीर्घवृत्तज स्वरूप अंडे जैसा होता है)। दीर्घवृत्त में निम्नलिखित गुण विद्यमान
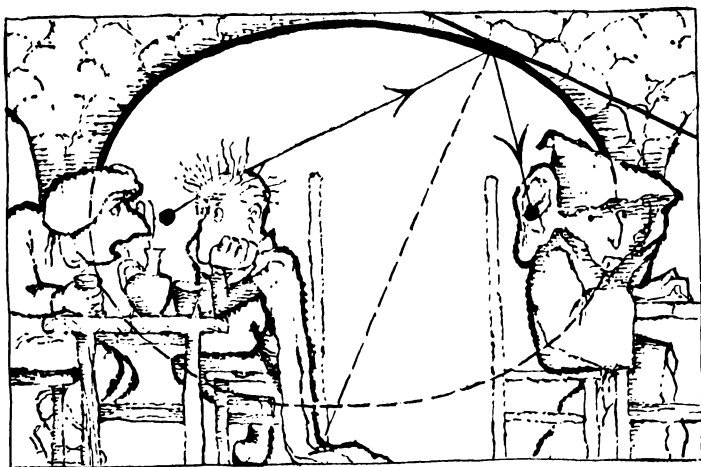
चित्र 5.2

हैं। यदि किसी एक बिंदु पर ग्राधारित कोण बनाया जाए जिसकी भुजाएं दीर्घवृत्त के फ़ोकस को पार करती हों तो इस कोण का ग्रर्धक (bisector) दीर्घवृत्त पर लम्ब बनाएगी। इसका ग्रर्थ हुग्रा कि यदि तरंग या कणों का प्रवाह दीर्घवृत्त के एक फ़ोकस में से निकलेगा तो उसकी सतह से परावर्तित होकर वह दूसरे फ़ोकस पर लौट ग्राएगा।

ध्वनि तरंगों के लिये छतें समतल होती हैं। ग्रौर यदि छत चापाकर हो तो कमरे में ध्वनि के परावर्तन की विशेष स्थिति देखी जा सकती है: चूंकि चाप का स्वरूप दीर्घवृत्तज सतह से मिलता-जुलता है, तो उसके एक फ़ोकस में से निकलने वाली ध्वनि दूसरे फ़ोकस पर ग्रा जाएगी। चापाकार छतों की इस विशेषता से लोग प्राचीन काल में भी परिचित थे। मध्य काल में कैथोलिक चर्च की तहकीकात के समय इनका प्रयोग वार्तालाप सुनने के लिये किया गया। दो व्यक्ति धीमे स्वर में एक दूसरे को ग्रपने विचार बतलाते हुए इस बात पर सन्देह नहीं कर रहे थे कि कमरे के ग्रन्य कोणों पर बैठा हुग्रा सुस्ता रहा मठवासी उनकी बातें सुन रहा है (चित्र 5.2)।

कणिका तथा तरंग दोनों ही मॉडल इस परिघटना को समझाने

में समान रूप से समर्थ हैं। लेकिन बिलियार्ड गेन्दों की टक्करों जैसी परिघटनाओं को तरंगी माडल नहीं समझा सकता।

दूसरी ओर अनेक महत्वपूर्ण तथ्य हैं जिन्हें कणिका मॉडल किसी भी प्रकार नहीं समझा सकता।

सर्वप्रथम आता है व्यतिकरण (interference tone), अर्थात् योग, जो योग घटकों से कम हो सकता है तथा शून्य के बराबर भी हो सकता है। यदि दो तरंगें एक ही बिन्दु पर आकर युग्मित हो जाती हैं तो यहां प्रमुख रोल कोणांकों का अंतर अदा करता है। यदि एक तरंग का शिखर दूसरी तरंग के शिखर पर आ जाए तो तरंगें युग्मित हो जाती हैं। लेकिन यदि एक तरंग का शिखर दूसरी तरंग की घाटी पर आ जाए तथा तरंगों के कोणांक समान हों तो युग्मन... शून्य के बराबर हो जाएगा: एक ही बिन्दु पर आने वाली तरंगें एक दूसरे का अवशोषण करती हैं। एक तरंग क्षेत्र के दूसरे तरंग क्षेत्र पर अध्यारोपण के फलस्वरूप एक स्थान पर उनका अंकगणितीय योग होता है तथा दूसरे स्थान पर व्यवकलन होता है। यही है व्यति-करण परिघटना। यह प्रथम परिघटना है जिसे कणों के प्रवाह की भाषा द्वारा समझाना पूर्णतया असम्भव है। यदि विसर्जन दानों के प्रवाह की भांति व्यवहार करता है तो अध्यारोपित क्षेत्र हमेशा तथा हर स्थान पर एक दूसरे को प्रबल बनाएंगे।

दूसरी महत्वपूर्ण परिघटना है–विवर्तन यानी बाधाओं का विवर्तन। कणों के प्रवाह का व्यवहार ईस प्रकार हो ही नहीं सकता तथा तरंग का व्यवहार केवल इसी प्रकार होना चाहिए। स्कूल में विवर्तन परिघटना का प्रदर्शन जल से भरे हुए टब में तरंग उत्तेजित करके करते हैं। तरंग के मार्ग में छिद्र वाली बाधा खड़ी की जाती है तथा तरंग को कोण पर मुड़ते हुए नग्न आंख से देखा जा सकता है। इस परिघटना का कारण एकदम स्पष्ट है। छिद्र की सतह पर जल के कण कम्पायमान हो गये थे। छिद्र की सतह पर प्रत्येक बिंदु उसी प्रकार तरंग पैदा करता है जिस प्रकार विकिरण का स्रोत। इस दूसरी बार होने वाली तरंग को "कोण पर मुड़ने" में कोई रुकावट पेश नहीं आती।

व्यतिकरण तथा विवर्तन परिघटनाओं को बिना कठिनाई के प्रदर्शित

किया जा सकता है यदि ऊपर बताई गई शर्त का पालन किया जाये यानी तरंग दैर्घ्य बाधाओं या छिद्रों के आकार से ज़्यादा या हर प्रकार से उसी आकार का होना चाहिये। हम शर्त को अधिक स्पष्ट करेंगे तथा व्यतिकरण तथा विवर्तन के बारे में विस्तृत रूप से अगली पुस्तक में बतलाएंगे।

और अब हम विकिरण के स्रोत के गतिमय होने पर देखी जाने वाली तरंग आवृत्ति के परिवर्तन पर रुकेंगे। यह तथ्य कि यह परिघटना तरंग मॉडल का अनिवार्य परिणाम है क्रिस्टियन डोपलेर (१८०३–१८५३) ने सैद्धांतिक भौतिकी के उदय के समय ही सिद्ध कर दिया था।

आइये, डोपलेर सूत्र को हल करें, जो हमें आगे चल कर काम देगा। मान लें कि कोई कार चल रहे बैंड-बाजे के ग्रुप के समीप आ रही है। समय की इकाई में ड्राइवर के कानों तक पहुंचने वाली वायु के प्रगाढ़न की मात्रा उस स्थिति की तुलना में अधिक होगी जब कार अपने स्थान पर खड़ी थी और यह अनुपात होगा: $(c+u)/u$ यहां c – तरंग के विस्तारण की रफ़्तार, u – स्रोत तथा ग्राही की सापेक्ष रफ़्तार। अतएव,

$$\upsilon' = \upsilon\left(1+\frac{u}{c}\right)$$

इसका अर्थ यह हुआ कि अवगम्य आवृति ν' कार तथा बैंड-बाजे के एक दूसरे के समीप आने पर बढ़ेगी (ध्वनि की अधिक स्वरक होगी $u>0$) तथा घटेगी यदि वे परस्पर दूर हो जायें (ध्वनि की स्वरक कम होगी $u<0$)। आगे बढ़ते हुए हम कह सकते हैं कि प्रकाश तरंग के लिये यह निष्कर्ष निम्न प्रकार होगा। स्रोत के दूर हट जाने पर "लाल विस्थापन" देखने में आता है। पाठक इस निष्कर्ष का महत्व तब समझेगा जब हम सुदूर तारों के स्पेक्ट्रमों को देखने की चर्चा करेंगे।

प्राचीन काल से इस शताब्दी के तीसरे दशक तक विद्वान लोग यह विवाद करते थे कि ऊर्जा का किसी भी प्रकार का आगे देना तरंग प्रकृति रखता है या उसकी कणिका प्रकृति होती है। प्रयोग ने सिद्ध किया कि हर प्रकार के विकिरण के दो पहलू होते हैं। और

केवल इन दोनों पहलुओं का युग्मन सही प्रकार यथार्थता को दिखाता है। सिद्धांत ने इस तथ्य को प्रकृति के मुख्य नियमों की श्रेणी में रख दिया। तरंग यांत्रिकी, क्वान्टमी यांत्रिकी, क्वान्टमी भौतिकी—ये क्षेत्रों तथा कणों के व्यवहार के आधुनिक सिद्धांतों के तुल्य नाम हैं।

वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्र के दो पहलू

विद्युत चुम्बकीय विकिरण किसी परिघटना में तरंग की भांति व्यवहार करता है तथा अन्य परिघटनाओं में—कणों के प्रवाह की भांति।

इस अर्थ में मैक्सवेल के नियमों में एक "त्रुटि" है। वे विद्युत चुम्बकीय विकिरण का केवल तरंग पहलू ही दिखाते हैं।

पूर्णतया प्रयोग के आधार पर मैक्सवेल समीकरण के हल से यह निष्कर्ष निकलता है कि विद्युत चुम्बकीय विकिरण को विभिन्न दैर्घ्यों तथा तीव्रता की तरंगों का योग माना जा सकता है। यदि विकिरण विन्यास एकदम नियत आवृति की विद्युत धारा है, तो विकिरण "एक "एकवर्णी" ("monochromatic") तरंग द्वारा होगी।

विद्युत चुम्बकीय तरंग चित्र 5.3 में दिखाई गई है। वद्युत चुम्बकीय ऊर्जा के विस्तारण से आकाश में होने वाले परिवर्तनों को समझने के लिए हमारे चित्र को भुज अक्ष की दिशा में, एकदम परिपूर्ण रूप में, खींचना आवश्यक होगा।
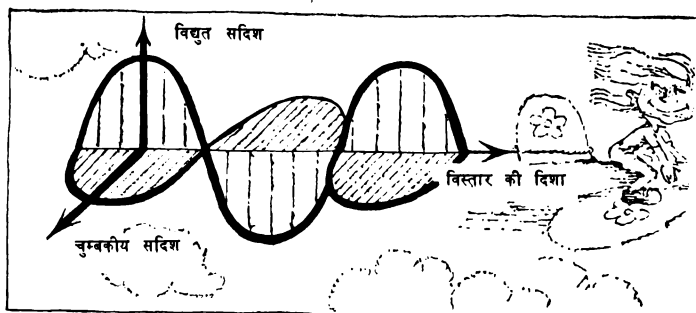
चित्र 5.3

यह चित्र मैक्सवेल के समीकरणों के हल का परिणाम है। इसी कारणवश् ही हम विद्युत चुम्बकीय तरंगों के बारे में कुछ कह सकते हैं। लेकिन इस पारिभाषिक शब्द को प्रयोग करते समय तथा विद्युत चुम्बकीय तरंग को जल में फेंके गए पत्थर के कारण जल में बनने वाली तरंगों की अनुरूपता की ओर जाते हुए अत्यधिक सावधानी से कार्य करने की आवश्यकता है। दृष्टिगोचर चित्र आसानी से भ्रम पैदा कर सकते हैं। जल की तरंग विद्युत चुम्बकीय तरंग का केवल मॉडल है। इसका अर्थ हुआ कि केवल कुछ स्थितियों में विद्युत-चुम्बकीय तरंगें तथा जल में तरंगें समान रूप से व्यवहार करती हैं।

लेकिन चित्र 5.3 जिस में विद्युत चुम्बकीय तरंग जल की दो बूंदों की तरह समुद्री तरंग के समान है जो समुद्र में फेंके गए चिप को कभी ऊपर उठाती है तथा कभी नीचे गिराती है? .. हां! लेकिन ऐसा कुछ भी तो नहीं है। चित्र के सार को समझने की कोशिश करें। ऊर्ध्वाधर अक्ष के साथ-साथ विद्युत क्षेत्र का सदिश है तथा आकाश में कोई भी स्थानांतरण नहीं होता है।

क्षैतिज अक्ष पर स्थित प्रत्येक बिंदु दिखाता है कि यदि बिंदु पर विद्युत आवेश लागू किया जाए तो उस पर बल लागू होगा जो कोटि के मानों द्वारा व्यक्त होगा। विद्युत चुम्बकीय तरंग की यात्रा करने पर विशेष प्रकार से कहा जाये तो अपने स्थान से कुछ भी नहीं हिलता है। लेकिन ऐसा प्रयोग करना जिसमें दृष्टिगोचर रूप से यह दिखाया जा सके कि किसी भी बिन्दु पर विद्युत चुम्बकीय तरंग का मूल्य किस प्रकार बदलता है, प्रायोगिक रूप से सबसे धीमे दोलन के लिए भी एकदम असम्भव है।

विद्युत चुम्बकीय तरंगों के विचार सैद्धांतिक रूप में ही हो सकते हैं। क्योंकि हम रेडियो सुनते हैं तो विद्युत चुम्बकीय तरंगों की विद्यमानता के बारे में विश्वासपूर्वक कह सकते हैं। हम इस बारे में बिल्कुल भी संदेह नहीं रखते हैं कि विद्युत चुम्बकीय तरंग की निश्चित आवृति होती है क्योंकि किसी रेडियो स्टेशन को सुनने के लिए रेडियो-सेट को निश्चित आवृति पर लगाना होगा। हमें दृढ़ विश्वास है कि दैर्घ्य की परिघटना विद्युत चुम्बकीय तरंग के लिए केवल इसी कारणवश् प्रयुक्त किया जा सकता है कि हम तरंग की रफ़्तार माप सकते हैं तथा दैर्घ्य

को $c = \nu\lambda$ समीकरण से निर्धारित कर सकते हैं जो आवृति, तरंग-दैर्घ्य तथा उसके विस्तारण की रफ़्तार को मिलाता है तथा उस कारणवश भी कि विवर्तन का अध्ययन करते समय चुम्बकीय तरंग दैर्घ्य का भली प्रकार अध्ययन कर सकते हैं, विवर्तन यानी बाधाओं का मुड़ना, और इसके साथ यह भी बता दें कि इस माप के नियम के ही हैं जो जल पर पैदा होने वाली तरंगों के हैं।

यहां पाठक को सूचित कर देना अतिआवश्यक है कि वह वैद्युत चुम्बकीय तरंग को देखने की चेष्टा में न लग जाये, क्योंकि जैसा कि इस अनुच्छेद के आरम्भ में बताया गया था कि वैद्युत चुम्बकीय विकिरण न केवल तरंग "जैसा" होता है, बल्कि अनेक स्थितियों में वह कणों के प्रवाह की भांति व्यवहार करता है। किसी ऐसी वस्तु के बारे में सोचना जो एक ही समय में तरंग तथा कणों के प्रवाह की भांति व्यवहार करें—एकदम असम्भव है। हम यहां भौतिकीय क्रियाओं के बारे में चर्चा कर रहे हैं जिन्हें चाक द्वारा ब्लैकबोर्ड पर चित्रित नहीं किया जा सकता। लेकिन इसका यह अर्थ बिल्कुल नहीं है कि हम विस्तारपूर्वक वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्र को समझ नहीं सकते हैं। केवल इतना स्मरण रखना चाहिये कि दृष्टिगोचर चित्र केवल पाठ्य-साधन होते हैं जिनकी मदद से चिन्हों को अच्छी प्रकार याद किया जा सकता है। लेकिन यह भी नहीं भूलना चाहिये कि तरंग चित्र वैद्युत चुम्बकीय विकिरण का सिर्फ़ मॉडल है। इससे अधिक नहीं। आवश्यकतानुसार हम इस मॉडल को प्रयोग करते हैं, लेकिन हमें इस बात से बिल्कुल भी अचम्भा नहीं होना चाहिये कि अन्य स्थितियों में यह मॉडल हमें भ्रम में डाल देगा।

इतनी ही परिशुद्धता से वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्र का कणिका पक्ष हमेशा देखने में नहीं आता। हमारा जीवन आसान हो जाता यदि ये स्थितियां परस्पर एक दूसरे का अपाकरण कर देतीं। लेकिन ऐसा नहीं है। बात कुछ और ही है। यहां तक कि एक ही प्रयोग का वर्णन करते समय, प्राय: एक ही समय में दो भाषाओं को प्रयुक्त करना पड़ता है।

फिर भी लघु तरंगों में वैद्युत चुम्बकीय विकिरण के कणिका पक्ष को देखा जा सकना अधिक आसान है (लेकिन यह कहना अधिक अच्छा होगा—पहले काफ़ी आसान था)। आयनित कक्ष में तथा अन्य

समानुरूपी उपकरणों में वैद्युत चुम्बकीय विकिरण के कणों तथा इलेक्ट्रॉन या अन्य "ईमानदार" कण के साथ टक्कर देखी जा सकती है। टक्कर बिलियार्ड कन्दुकों की टक्कर की भांति हो सकती है। इस प्रकार के व्यवहार को वैद्युत चुम्बकीय विकिरण के तरंग पक्ष की मदद से समझना एकदम असम्भव है।

आइये, मैक्सवेल सिद्धांत की भाषा के आधार पर वैद्युत चुम्बकीय विकिरण के उत्पन्न होने की क्रिया को देखें। आवेशों का विन्यास किसी एक आवृति के साथ कम्पन करता है। इन कम्पनों की साइकिल से वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्र बदलता है। क्षेत्र के कम्पन की आवृति ν विस्तारण की रफ़्तार 300 000 कि० मी०/सेकंड से विभाजित करने पर विकिरण के तरंग दैर्घ्य का मान प्राप्त होगा।

यदि क्वान्टमी भौतिकी की भाषा प्रयुक्त की जाए तो यही परिघटना निम्न प्रकार लिखी जाएगी। आवेशों का एक विन्यास है, जिसकी विशेषता ऊर्जा के विविक्त स्तरों का विन्यास है। किसी कारणवश् यह विन्यास उत्तेजित हो जाता है, लेकिन इस अवस्था में यह केवल थोड़ी देर ही रहा और अधिक नीचे स्तर पर आ गया। इसके फलस्वरूप निकलने वाली ऊर्जा $E_2 - E_1 = h\nu$ कण के रूप में विसर्जित होती है जो फ़ोटॉन कहलाती है। h स्थिरांक के साथ हम परिचित हैं (पृ० ११७)। यह ही है प्लाँक स्थिरांक।

यदि विन्यास की ऊर्जा के स्तर एक दूसरे के काफ़ी समीप स्थित हैं तो फ़ोटॉन में कम ऊर्जा होती है और आवृति भी छोटी होती है तथा इसलिये बड़ा तरंग दैर्घ्य होता है। इस स्थिति में वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्र का क्वान्टमी कणिका पक्ष बहुत कम देखने में आता है तथा केवल अवशोषण परिघटनाओं में देखने को मिलता है जो इलेक्ट्रॉनों या परमाण्वीय नाभिकों (चुम्बकीय अनुनाद) की ऊर्जा में छोटे परिवर्तनों के साथ सम्बंधित हैं। बिलियार्ड कन्दुकों की टक्करों की भांति, फ़ोटॉन की कणों के साथ टक्करें बड़े तरंग दैर्घ्यों की स्थिति में दिखाई नहीं देतीं।

आइये, अब ऐसे तथ्यों के बारे में बतलाएं जिन्होंने भौतिकतज्ञों को इस बात से सहमत होने पर विवश कर दिया कि तरंग सिद्धांत (जिसे पचासों वर्षों तक एक संपूर्ण और विस्तृत सचाई के रूप में

माना जा रहा था) वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्रों से सम्बंधित सभी तथ्यों को समझा नहीं सकता है। ऐसे तथ्यों की संख्या तो काफ़ी बड़ी है लेकिन हम केवल एक परिघटना पर ही रुकेंगे जिसे प्रकाशविद्युत प्रभाव (photoelectric effect) कहते हैं। पाठक को इस बात से सहमत करवाने के बाद कि कणिका पक्ष के बिना वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्र का चित्र बन नहीं सकता है, हम हर्ट्स के सुप्रसिद्ध प्रयोगों को देखेंगे जिन पर समस्त रेडियो यांत्रिकी आधारित है तथा दिखलाएंगे कि वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्र का तरंग पक्ष किस प्रकार ऊपरी तौर पर ही नहीं, बल्कि विस्तार से चित्रित किया गया है।

प्रकाश-विद्युत प्रभाव

मधुर आवाज़ वाला सुन्दर शब्द "फ़ोटॉन" प्लांक स्थिरांक h और वैद्युत चुम्बकीय तरंग की आवृति ν के गुणनफल के कुछ समय पश्चात् उत्पन्न हुआ। जैसा हमने ऊपर बताया कि किसी विन्यास के एक ऊर्जा अवस्था में से दूसरी ऊर्जा अवस्था में आने पर ऊर्जा के अंश का $h\nu$ या तो अवशोषण होता है या विसर्जन होता है। हमारी शताब्दी तथा गत शताब्दी के मोड़ पर अद्वितीय जर्मन वैज्ञानिक मैक्स प्लाँक इस निष्कर्ष पर पहुंचा। उसने दिखाया कि केवल इसी प्रकार ही तापदीप्त पदार्थों के विसर्जन को समझाया जा सकता है। ये विवाद अरेडियो यांत्रिकीय विधि द्वारा प्राप्त विद्युत चुम्बकीय तरंगों के साथ सम्बंधित थे। उस समय तक यह पूर्णतया सिद्ध नहीं किया गया था तथा न ही सभी लोगों की यह मान्यता थी कि जो प्रकाश के लिये सत्य है, वह रेडियो तरंगों के लिये भी सत्य है, हालांकि मैक्सवेल के नियमों ने एकदम निश्चित रूप से यह स्पष्ट कर दिया था कि रेडियो तरंगों तथा अन्य विद्युत चुम्बकीय तरंगों में, प्रकाश सहित, कोई भी सैद्धांतिक भेद नहीं है। प्लाँक के कथन की विश्वव्यापक सत्यता को स्वीकृति तथा प्रयोगिक प्रमाण बाद में प्राप्त हुए।

प्लाँक के कार्यों में भागों में प्रकाश के विकिरण, अर्थात् क्वान्टमों में, की चर्चा की गई थी। लेकिन वहां इस बात पर ध्यान नहीं दिया गया कि विकिरण की क्वान्टमी प्रकृति विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र के कणिका
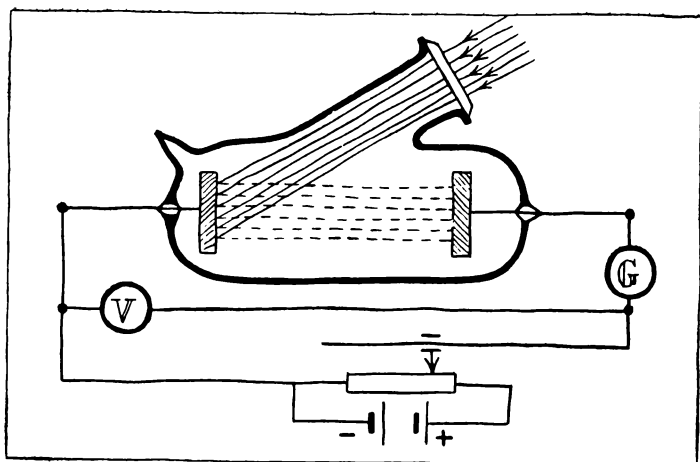
चित्र 5.4

पक्ष के अध्ययन को अनिवार्य बना देता है। हां, उन दिनों इतना ज़रूर कहा जाता था कि क्षेत्र का विसर्जन भागों में होता है, लेकिन भाग स्वयं तरंगों की कोई पंक्ति है।

महत्वपूर्ण कदम यानी इस बात का समर्थन कि ऊर्जा का विसर्जित भाग hv कण की वह ऊर्जा है जिसका नाम शीघ्र ही फ़ोटान रख दिया गया था, आइन्सटाइन ने किया था, जिसने सिद्ध किया कि प्रकाश-विद्युत् प्रभाव यानी प्रकाश के प्रभाव द्वारा ठोस पदार्थों में से इलेक्ट्रानों को निकालने की क्रिया को केवल कणिका विचारों के आधार पर समझाया जा सकता है।

चित्र 5.4 में वह आरेख दिया गया है जिसकी मदद से गत शताब्दी के अंत में बाहरी प्रकाश-विद्युत् नामक परिघटना का विस्तारपूर्वक अध्ययन शुरू हुआ।

निर्वात नलिका में स्थित इलक्ट्रोडों पर प्रकाश किसी न किसी प्रकार प्रभाव डालता है—इस बात की ओर सर्वप्रथम शायद हैनरीक हर्ट्‌स ने सन् १८८८ में ध्यान दिलाया। उसी समय कार्यरत सवान्ते आरेनिअस (१८५९–१९२७), विलगेल्म गल्वेक्स (१८५९–१९२२),

ऑगुस्तो रीगी (१८५०–१९२०) तथा होनहार रूसी भौतिकतज्ञ अलेक्सान्द्र स्तोलेतोव (१८३९–१८९६) ने दिखाया कि कैथोड के दीप्तिमान होने से धारा उत्पन्न होती है। यदि चित्र में दिखाई गई नलिका पर (इसे प्रकाश कोशिका (photoelement) कहते हैं) वोल्टता न हो तो कैथोड से प्रकाश द्वारा निष्कासित इलेक्ट्रॉनों की केवल तुच्छ संख्या ही विपरीततः स्थित इलक्ट्रोड तक पहुंचा पाएगी। वोल्टता थोड़ी-सी अधिक करने पर (प्रकाश-कैथोड पर ऋण) धारा को बढ़ा देगी। अंत में धारा संतृप्ति अवस्था ग्रहण कर लेगी: सभी इलेक्ट्रॉन (दिये गए तापमान पर जिनकी संख्या एकदम निश्चित होती है) ऐनोड तक पहुंच जाते हैं।

प्रकाश-धारा का बल प्रकाश की तीव्रता के एकदम समानुपातिक होता है। प्रकाश की तीव्रता फ़ोटॉनों की संख्या द्वारा सुस्पष्टता से निश्चित् की जाती है। शीघ्र ही एक विचार आता है कि (परिशुद्ध परिकलन तथा प्रयोग इसका समर्थन करते हैं) एक फ़ोटॉन पदार्थ में एक इलेक्ट्रॉन निष्कासित करता है।

फ़ोटान की ऊर्जा धातु में से इलेक्ट्रॉन को निकालने तथा उसे गति देने में व्यय होती है। अल्बर्ट आइन्स्टाइन द्वारा सन १९०५ में सर्वप्रथम लिखा गया समीकरण केवल इसी रूप में समझा जाता है। यह है वह समीकरण:

$$h\upsilon = \frac{mv^2}{2} + A$$

यहां A – निष्कासन कार्य (दे० पृ० ८७)

हर प्रकार से फ़ोटॉन की ऊर्जा धातु में से इलेक्ट्रॉन के निष्कासन कार्य से अधिक होनी चाहिए। और इसका अर्थ यह हुआ कि प्रत्येक ऊर्जा के फ़ोटॉन के लिए (तथा ऊर्जा सुस्पष्टता से "वर्णकता" के साथ जुड़ी होती है) प्रकाश प्रभाव की अपनी सीमा होती है।

ऊपर दिये गये बाहरी प्रकाश प्रभाव पर आधारित प्रकाश कोशिकाएं बहुत प्रचलित हैं: इनका प्रयोग प्रकाश, दूरदर्शन, सवाक् चलचित्रों में किया जाता है।

प्रकाश कोशिकाओं को गैस से भर कर उनकी संवेदनशीलता को बढ़ाया जा सकता है। इस स्थिति में धारा के बढ़ने का कारण

इलेक्ट्रॉनों द्वारा गैस के उदासीन अणुओं का टूटना तथा फिर उनका प्रकाश धारा के साथ जुड़ना है।

प्रकाश-विद्युत प्रभाव, लेकिन यह सच है कि ऊपर बताया गया प्रभाव नहीं बल्कि तथाकथित अन्तरिक प्रकाश प्रभाव जो अर्ध चालकों के अन्दर p—n-कोशों की सीमा पर होता है, आधुनिक तकनीकी में विशेष रूप से बहुत ही महत्वपूर्ण रोल अदा करता है। यहां हम विवरण को बीच में न रोकने के उद्देश्य से प्रकाश-प्रभाव के व्यावहारिक महत्व के बारे में अगली पुस्तक में बतलाएंगे। यहां इस परिघटना को देखना केवल इसलिये आवश्यक था कि विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र में कणिका गुणों की विद्यमानता को सिद्ध करने की आवश्यकता थी।

काफ़ी समय तक फ़ोटॉन भौतिकी के बहिष्कृत सौतेले बेटों की भांति थे। क्योंकि फ़ोटॉनों की विद्यमानता का प्रमाण तथा प्रकाश-प्रभाव के नियमों की खोज क्वान्टमी भौतिकी के बनने से २०–३० वर्ष पहले ही हो गई थी। केवल तीसरी दशक के अंत में जब ये नियम निर्धारित हो चुके थे, समझ आया कि एक ही संख्यात्मक स्थिरांक—प्लांक स्थिरांक h—फ़ोटॉन की ऊर्जा के सूत्र में और पृ० ११७ पर दिये गये सूत्र में, जो कण के आवेग के आघूर्ण के सम्भव मानों को निश्चित करता है, क्यों आता है।

इस स्थिरांक का मान एकदम भिन्न प्रयोगों द्वारा निर्धारित होता है। प्रकाश-विद्युत प्रभाव, तथाकथित कोम्पटान प्रभाव (प्रकीर्णन के समय एक्स-किरणों के तरग-दैर्घ्यों का परिवर्तन) कण के विलोपन में विकिरण का होना—ये तथा ऐसे ही अनेक अन्य प्रयोग हमें एक ही संख्या पर पहुंचाते हैं।

हर्ट्स के प्रयोग

आइये, देखें कि विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र के तरंग पक्ष से सम्बंधित परिकल्पनाएं किस प्रकार प्रमाणित की गई थीं।

तर्क और गणित मैक्सवेल के नियमों से निष्कर्षों को बाहर निकालते हैं। ये निष्कर्ष सही भी हो सकते हैं तथा प्रायोगिक रूप से अप्रमाणित भी हो सकते हैं। भौतिकीय सिद्धांत प्रायोगिक रूप से प्रमाणित होने के बाद ही विज्ञान में प्रवेश करता है। विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र के सिद्धांत

के निर्धारण की विधि निम्न प्रकार है: अलग-अलग तथ्यों से साधारण परिकल्पना बनाई जाती है, परिकल्पना से निष्कर्षों पर पहुंचते हैं तथा अन्तिम कदम होता है—प्रयोग, जो निर्णायक शब्द कहता है—यह प्रकृति विज्ञान का अध्ययन करने के लिए एकमात्र सही मार्ग है। विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र के नियमों के उदाहरण के आधार पर इस मार्ग पर विशेषत: ध्यानपूर्वक चला जाता है।
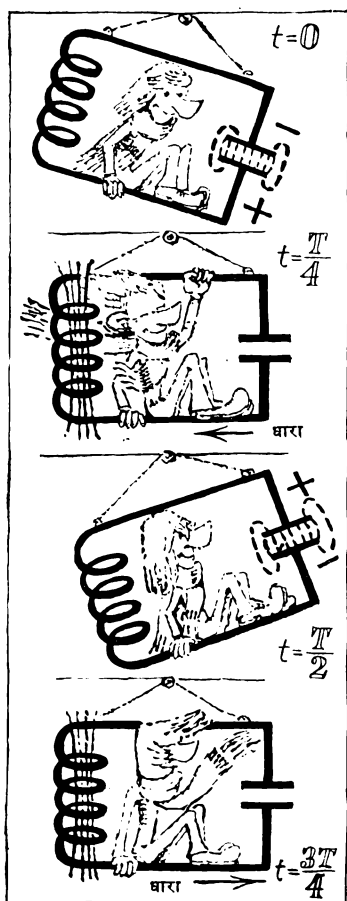
इसीलिये हम हर्ट्स के प्रयोगों का विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगे जो आज भी अध्यापक को स्कूल या कालेज में छात्र को यह समझाने में मदद देते हैं कि प्रकृति के नियमों की सत्यता में वैज्ञानिक किस प्रकार विश्वास पैदा करता है।

इसका इतिहास सन् १८५३ से आरम्भ करना होगा जब सुप्रसिद्ध अंग्रेज़ भौतिकविद कल्विन ने गणितीय रूप से यह सिद्ध किया कि स्वप्रेरण की कुण्डली में से संघनित्र के विसर्जन के समय परिपथ में विद्युत कम्पन उत्पन्न होते हैं: संघनित्र की प्लेटों पर आवेश, परिपथ के किसी भी भाग पर वोल्टता, धाराबल—ये सब मात्राएं हरात्मक कम्पन के नियमों के अनुसार परिवर्तित होंगी। यदि यह माना जाये कि

चित्र 5.5

परिपथ में प्रतिरोध नगण्य है तो कम्पन हमेशा बना रहेगा।

चित्र 5.5 में आरेख दिया गया है जो तथाकथित कम्पनायमान आवृति में होने वाली परिघटनाओं को समझाता है। आरम्भ में संघनित्र आवेशित है। जैसे ही परिपथ को बन्द किया जाएगा, उसमें से धारा का प्रवाह होगा। एक चौथाई समय में संघनित्र पूर्णतयः विसर्जित हो जाएगा। उसकी ऊर्जा $1/2\,q^2/C$ कुण्डली के चुम्बकीय क्षेत्र की ऊर्जा में परिवर्तित हो जाएगी। इस समय धाराबल अधिकतम होगा, धारा का प्रवाह रुकेगा नहीं बल्कि अपना बल धीरे-धीरे कम करते हुए उसी दिशा में चलता रहेगा। आधे समय के बाद धारा बल शून्य के बराबर होगी, चुम्बकीय ऊर्जा $1/2\,LI^2$ नष्ट हो जाएगी, परन्तु संघनित्र पूर्णतयः आवेशित हो जाएगा तथा ऊर्जा वापिस ग्रहण कर लेगा। लेकिन वोल्टता अपना चिन्ह बदल देगी। आगे चलकर क्रिया स्वयं को दोहराएगी लेकिन विपरीत दिशा में एक निश्चित समय T के बाद (कम्पन की अवधि) सब कुछ अपनी प्रारम्भिक अवस्था में आ जाएगा और क्रिया पुनः आरम्भ हो जाएगी।

विद्युत कम्पन अनन्त काल तक जारी रहते यदि धारा पर अपरिहार्य प्रतिरोध न होता। इसके कारण प्रत्येक समय में ऊर्जा नष्ट हो जाएगी और कम्पन आयाम को कम करते हुए नष्ट हो जाएंगे।

स्प्रिंग पर भार के कम्पन की तुलना जो अभी बताई गई है हमें क्रिया के अंकगणितीय अध्ययन के बिना यह समझने में मदद देती है कि ऐसी आकृति में कम्पन की क्या अवधि होगी। (पाठक को प्रथम पुस्तक के पृष्ठों में दी गई तदनुरूपी सामग्री को पुनः दोहराना चाहिए)। वस्तुतः यह काफ़ी स्पष्ट है कि संघनित्र की विद्युत ऊर्जा दबे हुए स्प्रिंग की विभव ऊर्जा के समान होती है तथा कुण्डली की चुम्बकीय ऊर्जा भार की गतिज ऊर्जा के बराबर होती है।

समानुरूपी मात्राओं की तुलना करके हम आकृति में होने वाले विद्युत कम्पनों की अवधि का सूत्र निकाल सकते हैं:
$1/2\,q^2/C$ — $1/2\,kx^2$ का अनुरूप; $1/2\,LI^2$ — $1/2\,mv^2$ का अनुरूप; k — $1/C$ का अनुरूप; L — m का अनुरूप। इसका अर्थ हुआ कि कम्पन की आवृति $\nu = \frac{1}{2\pi\sqrt{LC}}$ के बराबर हुई चूंकि
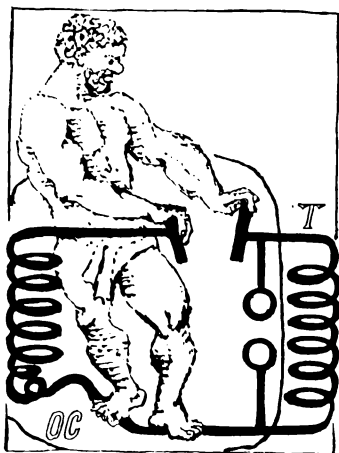
यांत्रिकीय कम्पन के लिये तदनुरूप सूत्र का स्वरूप निम्न होता है :

$$\upsilon = \frac{1}{2\pi}\sqrt{\frac{k}{m}}$$

चित्र 5.6

आइये, अब हम हर्ट्‌स के विचारों पर गौर करें, जिसने प्रयोगशाला के बाहर गये बिना ही ३०० ००० कि० मी० प्रति सेकंड की रफ़्तार से विस्तार करने वाली चुम्बकीय तरंगों की विद्यमानता को सिद्ध करने का ध्येय किया था। इस प्रकार, 10 मी० के लगभग दैर्घ्य वाली विद्युत चुम्बकीय तरंग प्राप्त करनी थी। यदि मैक्सवेल का कहना सही है तो इसके लिये विद्युत तथा चुम्बकीय सदिशों को $3 \cdot 10^8$ हर्ट्‌स... क्षमा करें – व्युत्क्रम सेकंड की आवृति के साथ कम्पन करना चाहिये। क्योंकि उस समय हर्ट्‌स को मालूम नहीं था कि उसका नाम आवृति की इकाई के साथ हमेशा के लिये जुड़ जाएगा।

आरम्भ कहां से किया जाये? सर्वप्रथम, चूंकि कम्पन नष्ट हो जाने वाले हैं तो ऐसा उपकरण बनाना चाहिये जो धारा के रुकने के बाद क्रिया को पुनः आरम्भ कर दें। यह कोई कठिन कार्य नहीं है। इसका आरेख चित्र 5.6 में दिया गया है। ट्रांसफार्मर T की प्राथमिक कुण्डली पर प्रत्यावर्ती वोल्टता लागू की जाती है। जैसे ही वह दूसरी कुण्डली के साथ जुड़े मनकों के बीच विदारी वोल्टता तक पहुंचती है, वैसे ही स्फुलिंग उत्पन्न होता है। वह ही स्विच का रोल अदा करते हुए कम्पन आकृति K को बंद करता है, तथा आकृति कम या अधिक उच्च आवृति वाले दसियों कम्पन, जिनका आयाम घटता रहेगा, गुज़र जाएंगे।

लेकिन आवृति उच्च होनी चाहिए। इसके लिये क्या करना होगा? स्वप्रेरण और धारिता को कम करना होगा। कैसे? कुण्डली को सीधे

तार द्वारा विस्थापित कर दें, तथा संघनित्र की प्लेटों को अलग-अलग स्थानांतरित करके उनका क्षेत्रफल कम कर दें। कम्पन आकृति का क्या बन जाएगा? हां, उसका तो कुछ भी नहीं बचेगा: दो छड़ें जिनके सिरों पर मनके लगे होंगे जिनके बीच स्फुलिंग उत्पन्न होगा।

इस प्रकार हर्ट्‌स अपने कम्पित्र या दोलित्र के विचार पर पहुंचा जो विद्युत चुम्बकीय तरंगों के स्रोत ही नहीं बल्कि ग्राही के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है।

पहले से ही यह बता देना कि इस अपनी प्रकार की "आकृति", जिसका शब्द के संपूर्ण अर्थ में, न तो सिर बचा है तथा न पैर का प्रेरण तथा धारिता किस के बराबर होगी–हर्ट्‌स के लिये काफ़ी कठिन कार्य था। कम्पित्र के प्रेरण तथा धारिता परिपथ के किसी एक बिन्दु पर संकेंद्रित नहीं हैं, बल्कि समस्त छड़ के ऊपर विस्तारित हैं। दूसरे सिद्धांत की आवश्यकता महसूस होती है।

इन विद्युत परिपथों की ओर इस नये अभिगम पर विचार करना, जिनमें बहुत उच्च आवृत्ति वाली धाराओं का प्रवाह होता है, हमें काफ़ी दूर ले जाता। पाठक हमारे शब्दों पर विश्वास कर सकता है कि हर्ट्‌स के कम्पित्र में वस्तुतः उच्च आवृत्ति वाली धारा के कम्पन उत्पन्न होते हैं।

हर्ट्‌स द्वारा प्रयुक्त तरंगों के "प्रेषित्र" तथा "ग्राही" व्यावहारिक रूप से समान ही थे। "प्रेषित्र" में कम्पित्र पर वोल्टता लागू करने वाले ट्रांसफार्मर के कार्य के आधार पर मनकों के बीच समय-समय से उत्पन्न होने वाले स्फुलिंग द्वारा कम्पन पैदा होते थे। स्फुलिंग के पैदा होने वाले अंतराल को माइक्रोमीटर पेंच की मदद से बदला जा सकता था। ग्राही के रूप में या तो तार की समकोण-रूपी आकृति, जो स्फुलिंग अंतराल द्वारा टूटी होती थी, प्रयुक्त किया जा सकता था, या फिर दो छड़ों को, जिन्हें इच्छानुसार मि० मी० के अंश के बराबर की दूरी तक समीप लाया जा सकता था, प्रयुक्त की जा सकती थी।

अपने पहले लेख में, जो सन १८८५ में प्रकाशित हुआ था, हर्ट्‌स ने सिद्ध किया कि ऊपर बताई गई विधि के द्वारा बहुत ही उच्च आवृत्ति वाले कम्पन प्राप्त किये जा सकते हैं, और यह कि ये कम्पन वस्तुतः आसपास के आकाश में प्रत्यावर्ती क्षेत्र बनाते हैं, जिसकी विद्यमानता

हैनरीक हर्ट्स (१८५७–१८९४) – अद्वितीय जर्मन भौतिकविद् जिन्होंने "जनित्र" तथा "अनुनादक" की मदद से प्रयोग द्वारा यह सिद्ध किया कि दोलनी विसर्जन आकाश में वैद्युत चुम्बकीय तरंगें उत्पन्न करता है। हर्ट्स ने सिद्ध किया कि वैद्युत चुम्बकीय तरंगों का परावर्तन, अपवर्तन तथा व्यतिकरण होता है, और इस प्रकार उसने मैक्सवेल सिद्धांत को सही प्रमाणित किया। हर्ट्स के प्रयोगों ने रेडियो तकनीकी का आधार बनाया। रेडियो के अविष्कारक अलेक्सांद्र पोपोव ने अपने प्रथम रेडियो कार्यक्रम में दो शब्द प्रयोग किये थे: "हैनरीक हर्ट्स"।

का प्रमाण "ग्राही" में उत्पन्न होने वाले स्फुलिंग से मिलता है। ग्राही कम्पित्र का नाम हर्ट्स ने अनुनादक रखा। विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र को ढूंढने का नियम एकदम स्पष्ट हो गया जो आधुनिक रेडियो तकनीकी का आधार है।

लेकिन यह नोट करने योग्य बात है कि हर्ट्स के कार्यों में तथा उसके बाद के कई दशकों तक "विद्युत चुम्बकीय तरंग" तथा "रेडियो तरंग" शब्द प्रचलित नहीं थे। या तो विद्युत तरंगों के बारे में बात की जाती थी या फिर विद्युत गतिकी बल की तरंगों के बारे में बात की जाती थी।

अपने अगले लेख में हर्ट्स सिद्ध करता है कि मैक्सवेल सिद्धांत के दावे के अनुसार पराविद्युत वातावरण (गन्धक या मोम की छड़) विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र की आवृत्ति पर प्रभाव डालता है। इस लेख को पढ़ने के बाद पत्रिका के सम्पादक हैल्महोल्ट्स ने हर्ट्स को पत्र में लिखा: "पाण्डुलिपि प्राप्त हो गई है। शाबाश! बृहस्तपतिवार को छपाई के लिये भेज रहा हूं।"

उन दिनों के भौतिकविदों पर हर्ट्स के लेख का गहरा प्रभाव पड़ा जिसमें उसने विद्युत चुम्बकीय तरंगों के परावर्तन को सिद्ध किया। 4 मी० × 2 मी० जिंक की स्क्रीन से तरंगों का परावर्तन होता था। कम्पित्र स्क्रीन से 13 मी० दूर तथा फ़र्श से 2.5 मी० ऊपर स्थित था। समस्वरित अनुनादक उतनी ही ऊंचाई पर तथा स्क्रीन और कम्पित्र के बीच में स्थित था। स्क्रीन से भिन्न-भिन्न दूरी पर अनुनादक को रखते हुए हर्ट्स ने स्फुलिंग की तीव्रता का अध्ययन करके अधिकतम तथा न्यूनतम मानों की विद्यमानता को सिद्ध किया जो स्थायी तरंग नामी व्यतिकरण (interference) के लिये वैशिष्ट्य हैं। तरंग दैर्घ्य 9.6 मी० के लगभग ज्ञात हुए।

मैं यहां पर कहना चाहूंगा कि उस समय में कोई भी यह कहने में असमर्थ था कि विद्युत चुम्बकीय तरंगों के लिये कौन-सा पदार्थ दर्पण के रूप में प्रयुक्त हो सकता है। यह तो हम अब जानते हैं कि इन दैर्घ्यों की तरंगें धातु में प्रवेश नहीं कर पाती हैं तथा उससे परावर्तित हो जाती हैं।

मैक्सवेल सिद्धांत के अतिरिक्त प्रमाणों को इकट्ठा करने की चेष्टा करते हुए हर्ट्स ने अपने उपकरणों के ज्यामितीय आकार कम कर दिये तथा तरंग दैर्घ्य को 60 से० मी० के बराबर कर दिया। सन १८८८ में उसने एक लेख प्रकाशित किया "विद्युत चुम्बकीय किरणें"। वह विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा को परवलयिक दर्पणों (parabolic

mirrors) की मदद से संकेन्द्रित करने में सफल हो गया। दर्पण के फ़ोकस में कम्पित्र तथा अनुनादक रखे गये थे। इन दर्पण के ग्राही तथा प्रेषित्र को प्रयुक्त करते हुए हर्ट्स ने सिद्ध किया कि विद्युत चुम्बकीय तरंगें धातु में प्रवेश नहीं कर पाती हैं, लेकिन लकड़ी की स्क्रीन इन तरंगों को रोक नहीं पाती है।

चित्र 5.7 में यह दिखाया गया है कि हर्ट्स ने विद्युत चुम्बकीय तरंगों का ध्रुवण किस प्रकार सिद्ध किया। AA कम्पित्र द्वारा उत्पन्न की गई विद्युत चुम्बकीय किरण के मार्ग में ताम्र के तारों से बनी हुई C जाली रखी गई। जाली को घुमाते हुए हर्टस ने दिखाया कि B—B अनुनादक में स्फुलिंग की तीव्रता परिवर्तित होती है। जब जाली के तार विद्युत सदिश के समानांतर थे और कम्पित्रों के अक्षों पर लम्ब बनाते थे, तो किरण का प्रवेश नहीं हुआ। विद्युत चुम्बकीय तरंग का अनुप्रस्थ काट सिद्ध किया गया।

अंत में तरंग के अपवर्तन का अध्ययन करने के लिए हर्ट्स ने कंक्रीट का प्रिज़्म बनाया जिसका भार एक टन से अधिक था। 60 से० मी० दैर्घ्य वाली तरंग के लिए कंक्रीट का अपवर्तन गुणांक परिशुद्धता से मापा जा सका। वह 1.69 के लगभग निकला।
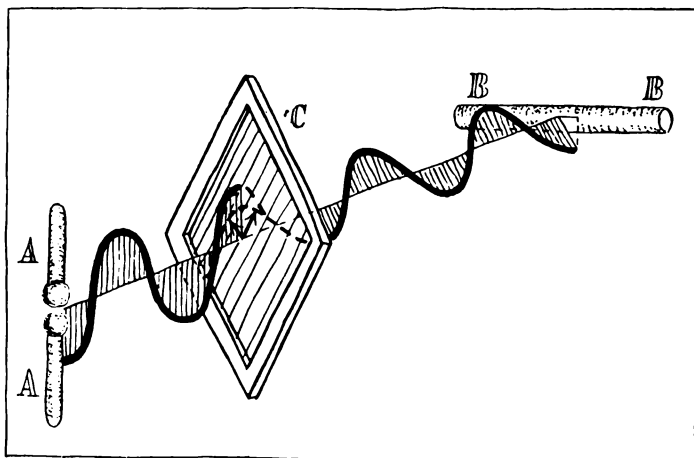
चित्र 5.7

विद्युत चुम्बकीय तरंगों की विद्यमानता सिद्ध करना, उनके दैर्घ्यों का मापा जाना, परावर्तन, अपवर्तन तथा ध्रुवण के नियमों का निर्धारण – ये सभी तीन वर्ष के कार्य का परिणाम है। गर्व महसूस करने के लिए हमारे पास कारण है।

वैद्युत चुम्बकीय विकिरण का वर्गीकरण

भौतिकविदों को विशाल परास (range) वाले विद्युत चुम्बकीय विकिरण के साथ कार्य करना पड़ता है। शहर की आवृति वाली धारा का विद्युत चुम्बकीय विकिरण नगण्य है। विद्युत चुम्बकीय विकिरण पकड़ने की व्यावहारिक सम्भावना दसियों कि० हर्ट्स आवृति से आरम्भ होती है यानी सैकड़ों कि० मी० के बराबर के तरंग दैर्घ्य से। अधिक छोटी तरंगों का दैर्घ्य माइक्रोमीटर के दस हज़ारवें अंश के लगभग होता है अर्थात् अरब गिगा-हर्ट्स के लगभग की आवृति।

रेडियो तरंगें वे विद्युत चुम्बकीय तरंगें होती हैं जो विद्युत तकनीकी उपकरणों द्वारा बनती हैं अर्थात विद्युत धाराओं के कम्पनों से बनती हैं। रेडियो तरंगों के सबसे छोटे दैर्घ्य मि० मी० के सौवें अंश के बराबर होते हैं।

कई सौवें माइक्रोमीटर और नीचे विकिरण के तरंग दैर्घ्यों का क्षेत्र आता है, जहां वे अणुओं, परमाणुओं तथा परमाण्वीय नाभिकों के अन्दर होने वाले ऊर्जा स्थानांतरण के फलस्वरूप बनती हैं। यह परास जैसा कि हम देखेंगे, रेडियो परास से काफ़ी ढक जाता है।

चित्र 5.8

दृश्य प्रकाश विकिरण काफ़ी छोटा भाग घेरता है। उसकी सीमा है – 0.38 से 0.74 माइक्रो मीटर। अधिक बड़े तरंग दैर्घ्य
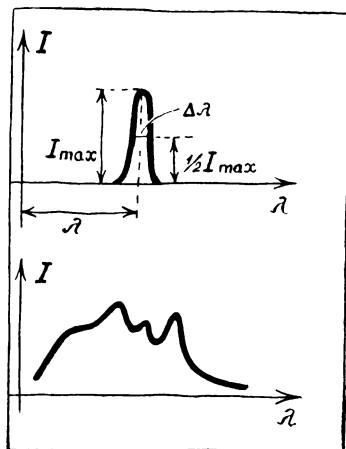
वाला विकिरण, जो अरेडियो तकनीकी विधियों द्वारा प्राप्त किया जाता है, अवरक्त कहलाता है तथा अधिक छोटे तरंग दैर्घ्य वाले विकिरण को पराबैंगनी कहते हैं, जो 0.1 माइक्रोमीटर के दैर्घ्य तक पहुंचता है।

विद्युत चुम्बकीय विकिरण, जो एक्स किरण नलिका में बनता है, पराबैंगनी तरंगों के क्षेत्र द्वारा अध्यारोपित हो जाता है तथा 0.01 माइक्रोमीटर तक पहुंचता है, जहां वह अपने क्रम में गामा किरणों के क्षेत्र द्वारा अध्यारोपित हो जाता है। गामा किरणों का विकिरण नाभिकीय विपाटन, नाभिकीय अभिक्रियाओं तथा मूल कणों की टक्करों के फलस्वरूप होता है।

किसी भी विद्युत चुम्बकीय विकिरण की मुख्य विशेषता उसका स्पेक्ट्रम होता है। स्पेक्ट्रम वह आरेख कहलाता है जिसपर ऊर्ध्वाधर रूप से तीव्रता (यानी इकाई समय में इकाई क्षेत्रफल की ऊर्जा) रची हुई है तथा क्षतिज रूप से–तरंग दैर्घ्य या आवृति। सबसे सरल स्पेक्ट्रम एकवर्णी (एक रंग का) विकिरण होता है। उसका आरेख बहुत ही कम चौड़ाई वाली एक रेखा से बनता है (चित्र 5.8, ऊपर)। एकवर्णी रेखा की डिग्री के लिये यह अनुपात लाक्षणिक है: $\frac{\lambda}{\Delta\lambda}$। रेडियो स्टेशन प्रायः एकवर्णी विकिरण ही देते हैं। उदाहरणतया 30 मी० के परास में कार्य करने वाले लघुतरंग स्टेशन के लिए $\frac{\lambda}{\Delta\lambda}$ लगभग 1 000 के बराबर होता है।

उत्तेजित परमाणु, उदाहरणतया, प्रतिदीप्ति लैम्पों में गैसों के परमाणु (उत्तेजन ऐनोड और कैथोड की ओर जाते हुए धनात्मक तथा ऋणात्मक आवेशित कणों के टकराव के फलस्वरूप होता है), स्पेक्ट्रम बनाते हैं जो $(100000)^{-1}$ आपेक्षिक चौड़ाई वाली अनेक एकवर्णी रेखाओं से बना होता है। चुम्बकीय अनुनाद में 10^{-7} तक की चौड़ाई वाली रेखाएं देखने में आती हैं।

सही अर्थों में, संतत स्पेक्ट्रम नहीं होते हैं। लेकिन यदि रेखाओं का अध्यारोपण होता है तो प्रयोग हमें तीव्रता के वक्र पर ले आता है जो उसी चित्र में नीचे दिखाया गया है।

विद्युत चुम्बकीय स्पेक्ट्रम के बारे में जानकारी न केवल विकिरण के अध्ययन से मिलती है, बल्कि अवशोषणा के अध्ययन से भी प्राप्त

होती है। सामान्यतः, दोनों प्रयोग एक ही प्रकार की सामग्री देते हैं। यह क्वान्टमी भौतिकी के मुख्य नियम से स्पष्ट है। विकिरण की स्थिति में विन्यास ऊपर वाले ऊर्जा स्तर से नीचे के ऊर्जा स्तर पर आता है, तथा अवशोषण की स्थिति में—नीचे के स्तर से ऊपर वाले स्तर पर आ जाता है। लेकिन ऊर्जा में अंतर, जो विकिरण या अवशोषण की आवृति निश्चित करता है, समान ही होगा। विकिरण या अवशोषण—कौन-सा स्पेक्ट्रम अध्ययन के लिये चुना जाए—यह आपकी अपनी पसन्द है।

ज्ञात होता है कि विकिरण के स्पेक्ट्रम की विशेषता का अध्ययन करते समय हम तरंगी तथा कणिका—दोनों ही भाषाएं प्रयुक्त कर सकते हैं। विकिरण के तरंगी पक्ष को लेते हुए हम कहते हैं कि तीव्रता तरंग के आयाम के वर्ग के समानुपातिक है। विकिरण को कणों के प्रवाह के रूप में देखते हुए हम तीव्रता को फोटानों की संख्या की भांति गिनते हैं।

एक बार फिर दोहराये देता हूं कि हमें किसी भी प्रकार की कोई सकुचाहट नहीं होनी चाहिए कि हम क्रमानुसार विकिरण के दोनों पक्षों को प्रयोग करते हैं। विकिरण न तो तरंग से मिलता है, और न ही कणों के प्रवाह से। दोनों चित्र—केवल मॉडल हैं, जिन्हें अनेक प्रकार की परिघटनाओं को समझाने के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

हमने अभी विद्युत चुम्बकीय तरंगों का पैमाना नहीं बनाया है लेकिन काफ़ी स्पष्टता से कह दिया है कि उसके विभिन्न भागों के नाम कुछ हद तक प्रतिबंधित हैं तथा हर प्रकार से ऐसी स्थितियों से सामना हो सकता है जब एक ही दैर्घ्य की तरंगें उनके बनने की विधि के आधार पर विभिन्न नामों से जानी जाएंगी।

अभी विद्युत चुम्बकीय तरंगों का पैमाना संतत है। ऐसे कोई भी भाग नहीं है जिन्हें किसी भी विधि से प्राप्त न किया जा सका हो।

लेकिन अवरक्त तरंगों का रेडियो तरंगों द्वारा, गामा किरणों का एक्स किरणों द्वारा अध्यारोपण, इत्यादि तुलनात्मक रूप से हाल ही में ज्ञात किया गया है। काफ़ी समय तक लघु रेडियो तरंगों तथा अवरक्त तरंगों के बीच खाली स्थान बना रहा था। अद्वितीय रूसी भौतिकविद प्योत्र लेबेदेन ने सन् १८९५ में 6 मि० मी० दैर्घ्य वाली

तरंग प्राप्त की थी तथा 0.34 मि० मी० तक दैर्घ्य की तापीय तरंग (अवरक्त) रूबेन्स ने प्राप्त की थी।

सन् १९२२ अ० अ० ग्लागोलेवा–अरकादियेवा ने भी इस रिक्त स्थान की पूर्त्ति कर दी जब उसने अप्रकाशीय विधि द्वारा 0.35 से 1 से० मी० तक के दैर्घ्य की विद्युत चुम्बकीय तरंगों को प्राप्त किया।

आजकल इस दर्घ्य की तरंगों को रेडियो तकनीकी द्वारा आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन उस समय वैज्ञानिक बिना किसी बुद्धिमानता या फिर अविष्कार-कार्य के एक उपकरण बनाया जिसका नाम उसने सपुंज उत्सर्जक रखा। विद्युत चुम्बकीय विकिरण का स्रोत धात्विक संचिकाएं (metallic file) थीं जो ट्रांसफ़ार्मर तेल में निलंबित थीं। इस मिश्रण में से स्फुलिंग विसर्जन गुज़ारा गया था।

अध्याय ६

रेडियो

इतिहास के पृष्ठ

जैसे फ़ैराडे ने नहीं सोचा था कि विद्युत चुम्बकीय प्रेरण विद्युत तकनीकी का आधार बनेगा; या रदरफ़र्ड ने अज्ञानता से परिपूर्ण कोरी बकवास ही समझा था कि परमाण्वीय नाभिक से ऊर्जा प्राप्त की जा सकेगी, वैसे ही हैनरीक हर्ट्स ने, जिसने विद्युत चुम्बकीय तरंगों का पता लगाया तथा सिद्ध भी किया कि कुछ मीटरों की दूरी पर इन्हें ग्रहण करना भी सम्भव है, न केवल रेडियो संचार के बारे में विचार किया था बल्कि उसकी सम्भावना को नकारा भी था। काफ़ी रोचक हैं ये तीन तथ्य, सच है या नहीं? लेकिन इनका अध्ययन करना मनोवैज्ञानिक का कार्य है। इसलिये इस विचित्र स्थिति के प्रमाण से सीमित होकर आइये, देखें कि हैनरीक हर्टस् की सन १८९४ में असामयिक मृत्यु के बाद घटनाएं किस प्रकार विकसित हुईं।

हर्ट्स के शास्त्रीय प्रयोगों ने, जिनका हमने काफ़ी विस्तारपूर्वक वर्णन किया है, समस्त विश्व के वैज्ञानिकों का ध्यान आकृष्ट किया। पीटर्सबुर्ग विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर न० ग० येगोरोव ने इन प्रयोगों की हू-बहू नकल की। अनुनादक में स्फुलिंग बहुत क्षीण नजर आया। उसे केवल पूर्ण अन्धकार में ही देखा जा सका और वह भी [illegible] लेन्स की मदद से।

सन १८८९ में अलेक्सान्द्र पोपोव (१८५९-[illegible]) [illegible] क्रोन्श्ताद्त शहर में फौजी कालेज में वैद्युत [illegible] अध्यापक था, तीस वर्ष की आयु में हर्ट्स के प्रयोगों [illegible] प्रकार करना आरम्भ किया। अनुनादकों [illegible]

में सफलता मिली वह अन्य शोधकर्त्ताओं की तुलना में अधिक तीव्र था।

सन् १८९४ में पतझड़ के दिनों इंग्लैंड की पत्रिका Electrition में प्रसिद्ध भौतिकविद आलीवर लोज का लेख प्रकाशित हुआ, जिसमें उसने बतलाया कि यदि बरानली नलिका को प्रयुक्त किया जाये तो हर्ट्स के अनुनादक का और अधिक विकास किया जा सकता है। फ्रांस के वैज्ञानिक ऐडवर्ड बरानली ने धात्विक संचिकाओं की चालकता का अध्ययन किया। उसने पता लगाया कि ये संचिकाएं विद्युत धारा का हमेशा समान प्रतिरोध नहीं करती हैं। प्रतीत हुआ कि संचिकाओं द्वारा प्रतिरोध, जो नलिका में डाली गई थीं, एकदम कम हो जाता है यदि वह हर्टस के अनुनादक के समीप हो। इसका कारण संचिकाओं का आसंजन था। संचिकाओं के प्रतिरोध को पुनः स्थापित किया जा सकता था, लेकिन इसके लिये नलिका को कम्पित करना चाहिये था।

लोज ने धातु की संचिकाओं के इसी गुण को प्रयोग किया था। उसने एक परिपथ तैयार किया जो बरानली नलिका (जिसका नाम कोहेरर पड़ा यानी "आसंजन करने वाला"), सेल तथा संवेदनशील गैल्वेनोमीटर से बना था। वैद्युत चुम्बकीय तरंगों के गुज़रने के समय उपकरण की सूई का विचलन होता था। लोज ४० मीटर तक की दूरी पर रेडियो तरंगों का पता लगाने में सफल हो गया।

इस उपकरण की कमी यह थी कि कोहेरर एकदम ख़राब हो जाता था। ऐसी विधि ज्ञात करने की आवश्यकता थी कि आसंजित (जुड़ी हुई) संचिकाओं को उनकी प्रारम्भिक अवस्थाओं में किस प्रकार लाया जाये, और ऐसा आरेख बना जाये कि कम्पन 'अपने आप' ही हो जाये।

पोपोव ने इसी कार्य को संपूर्ण किया उसने कोहेरर के अनेक स्वरूपों को कई बार प्रयोग किया और अंत में निम्न संरचना पर रुका। "शीशे की नलिका के अन्दर उसकी दीवारों पर प्लैटिनम की महीन प्लेटों AB तथा CD को नलिका की पूरी लम्बाई पर चिपकाया गया। एक प्लेट को बाहरी सतह पर एक किनारे से निकाला गया तो दूसरी को—दूसरे किनारे से। 8 मि० मी० चौड़ाई वाली प्लैटिनम की ये प्लेटें परस्पर लगाभग 2 मि० मी० दूरी पर स्थित

थीं। B तथा C आन्तरिक सिरे नलिका को बंद करने वाले कार्क को नहीं छू रहे हैं ताकि नलिका में रखा गया पाउडर कार्क के साथ चिपक कर चालक तार न बना डाले जिन्हें कम्पन द्वारा न तोड़ा जा सके, जैसे कि कुछ मॉडलों में हुआ था। नलिका की लम्बाई 6—8 से० मी० तथा मोटाई 1 से० मी० पर्याप्त होगी। कार्य के समय नलिका
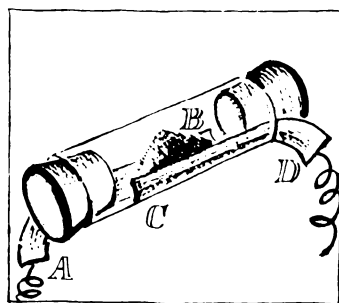
चित्र 6.1

लेटी हुई होनी चाहिए ताकि प्लेटें उसके नीचे वाले भाग में रहें और उन पर पाउडर हों। सबसे उत्तम प्रभाव उस समय देखने में आता है जब नलिका आधी से ज्यादा भरी न हो।"

पोपोव के शब्दों में वर्णित उसके कोहेरर का आरेख चित्र 6.1 में दिखाया गया है। पोपोव ने लोहे या स्टील का पाउडर प्रयुक्त किया था।

लेकिन मुख्य उद्देश्य कोहेरर को और अधिक पूर्ण बनाना नहीं था बल्कि ऐसी विधि को ज्ञात करना था कि वैद्युत चुम्बकीय तरंग को ग्रहण करने के बाद वह अपनी प्रारम्भिक अवस्था में वापिस आ सके। पोपोव के पहले ग्राही में, जिसका आरेख चित्र 6.2 में दिया गया है, यह साधारण बिजली की घंटी की मदद से किया गया। गैल्वेनो-मीटर की सूई के स्थान पर घंटी को प्रयुक्त किया गया और उसकी छड़ शीशे की नलिका पर चोट करती थी जैसे ही वह अपनी प्रारम्भिक अवस्था में आती थी।

सिर-दर्द करने वाली समस्या का कितना आसान हल निकला। और वाकई सरल है। आप मुख्य विचार पर गौर दें जहां हर्ट्स तथा ओलीवर लोज जैसे महान भौतिकविद भी नहीं पहुंच सके। क्योंकि सरल आरेख में सर्वप्रथम उसे प्रयोग किया गया, जिसे तकनीशियन रिले आरेख कहते हैं। रेडियो तरंगों की नगण्य ऊर्जा प्रत्यक्ष रूप में प्राप्त नहीं की जाती, बल्कि धारा के परिपथ को चलाने के काम में आ जाती है।
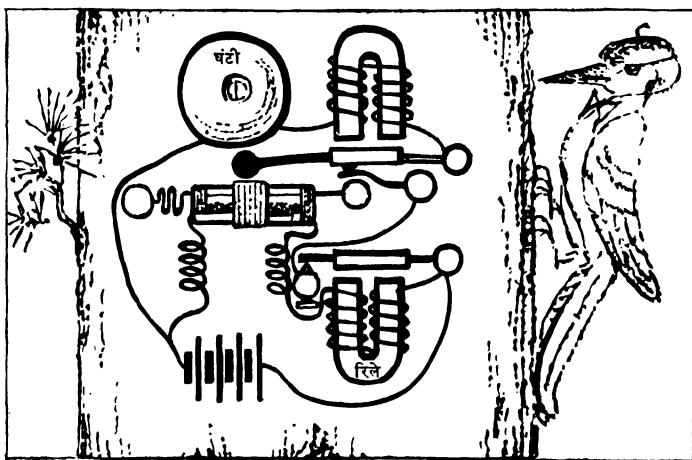
चित्र 6.2

सन् १८९५ के वसन्त में पोपोव ने अपना प्रयोग बगीचे में किया। ग्राही को कम्पित्र से दूरी पर ले जाना शुरू किया गया। ५० मीटर की दूरी पर कम्पित्र के स्फुलिंग के साथ ही घंटी बजती है। ६० मी० — घंटी अब भी बजती है। ८०, मी० — घंटी अब नहीं बजती। अब पोपोव ताम्र के तार के गुच्छे को पेड़ के ऊपर फेंक देता है और नीचे का सिरा कोहेरर के साथ बांध देता है। घंटी बजने लगती है। इस प्रकार दुनिया में पहला ऐन्टेना बना।

सोवियत संघ में ७ मई रेडियो दिवस के नाम से मनाया जाता है। सन् १८९५ में इस दिन पोपोव ने रूसी भौतिक-रसायन समाज की साधारण बैठक में लेख पढ़ा था जिसका साधारण नाम था: "धात्विक पाउडरों का वैद्युत कम्पनों के साथ सम्बन्ध"। श्रोताओं के बीच कुछ ऐसे लोग भी थे जिन्होंने हर्ट्स को प्रयोगों को कुछ वर्ष पूर्व देखा था और क्षीण स्फुलिंग को लेन्स के द्वारा देखा था। लेकिन पोपोव के ग्राही की घंटी की तेज ध्वनि सुन कर सबको स्पष्ट हो गया
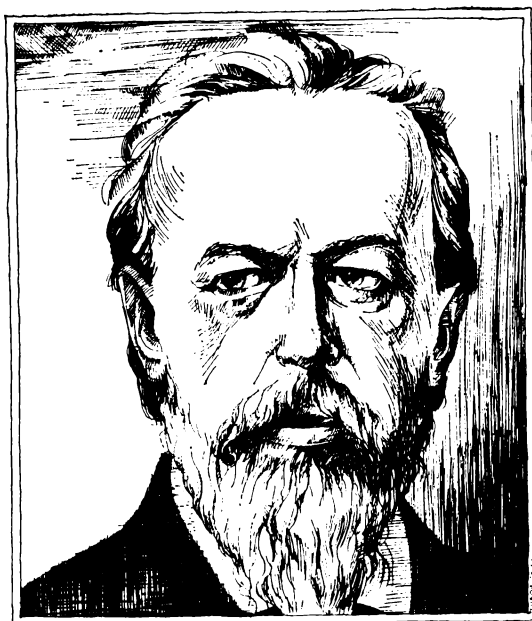
अलेक्सान्द्र स्तेपानोविच पापोव (१८५६–१६०६) – रूसी भौतिकविद्, वैद्युत-तकनीशियन – रेडियो के अविष्कारक। पोपोव के कार्य उनके समकालीनों के बीच बहुत ही प्रसिद्ध हुए। सन् १६०० में पेरिस में आयोजित विश्व प्रदर्शनी में उनके अविष्कार के लिए उन्हें स्वर्ण पदक दिया गया था।

कि बेतार का टेलीग्राफ़ बन गया है, किसी दूरी पर संकेत भेजने की सम्भावना पैदा हो गई हैं।

१२ मई १८६६ को पोपोव ने दुनिया का पहला रेडियोग्राम भेजा। एक इमारत से २५० मी० दूर दूसरी इमारत में कम या लम्बी अवधि के बाद स्विच लगा कर "हैनरीक हर्ट्स" शब्दों को भेजा जो टेलीग्राफ रिबन पर लिखे जाते हैं।

सन् १८९९ में माइन डिवीज़न के जहाज़ों पर रेडियो संचार की दूरी ११ कि० मी० तक हो गई। बेतार के टेलीग्राफ़ के व्यावहारिक महत्व पर कितने भी शक़ी दिमाग वाले व्यक्ति को शक नहीं हो सकता।

रेडियो के ग्रविष्कारक इटली के गुगलीएमो मारकोनी ने ग्रपने प्रयोग पोपोव के कुछ समय बाद ही ग्रारम्भ किये थे। उसने वैद्युत तकनीकी के क्षेत्र तथा वैद्युत चुम्बकीय तरंगों के ग्रध्ययन में प्राप्त सभी सफलताग्रों का ध्यानपूर्वक ग्रध्ययन किया ग्रौर उनका बहुत ही निपुणता से रेडियो-प्रेषण तथा रेडियो-ग्रहण की कोटि ग्रौर उत्तम करने के लिये प्रयोग किया। उसकी देन तकनीकी कार्य में इतनी ग्रधिक नहीं हैं जितनी कि संगठन कार्य में। लेकिन यह भी कोई कम बड़ी बात नहीं है, इसीलिए मारकोनी का नाम ग्रादरपूर्वक लेना चाहिये ग्रौर यह भी याद रखना चाहिये कि रूस में रेडियो के ग्रविष्कारक पोपोव ने ग्रपना ज्ञान किसी ग्रन्य देश को देने से हमेशा मना किया था।

मारकोनी ने ग्रपने लेखों में पोपोव का उल्लेख नहीं किया है। लेकिन सब यह नहीं जानते कि सन् १९०१ में उसने प्रोफ़ेसर ग्र० स० पोपोव को ग्रपने संगठन में कार्य करने के लिये बुलाया था, जिसका मारकोनी ग्रध्यक्ष था।

चित्र 6.3

रेडियो-ग्रहण की दूरी काफ़ी तेज़ी के साथ बढ़ती गई। सन १८९९ में मारकोनी ने रेडियो संचार को इंग्लैंड तथा फ्रांस के बीच स्थापित किया ग्रौर सन १९०१ में ग्रमेरिका को यूरोप के साथ रेडियो द्वारा जोड़ दिया।

इस सफलता तथा रेडियो-प्रसारण के जन्म में सहयोग देने वाली कौन-सी तकनीकी बातें थीं ?

सन् १८९९ से ग्रारम्भ होकर रेडियो तकनीकी कोहेरर

का साथ छोड़ देती है। वैद्युत चुम्बकीय तरंग के प्रभाव में परिपथ में प्रतिरोध के कम होने से रेडियो तरंगों को ढूंढ़ने के स्थान पर एक सर्वथा अन्य विधि को प्रयुक्त किया जा सकता है। दिष्टकृत स्पन्दमान वैद्युत चुम्बकीय तरंग को साधारण टेलीफोन की नलिका द्वारा सुना जा सकता है।

विभिन्न दिष्टकारों की खोज आरम्भ होती है। एकतरफी चालकता वाला क्रिस्टल संस्पर्श संसूचक के रूप में प्रयुक्त हुआ जो बहुत ही प्रचलित हुआ तथा वर्तमान शताब्दी की तीसरी दशक तक प्रयुक्त होता रहा। ऐसे क्रिस्टलों के बारे में सन् १८७४ में ज्ञात था। इनमें धातुओं के सल्फ़ाइड, ताम्र के पाइराइट तथा सैकड़ों विभिन्न खनिज आते हैं। मेरे हमउम्र लोगों को ऐसे ग्राही तथा स्प्रिंग सूई की मदद से "अच्छे संस्पर्श" को ढूंढ़ने के सिर-दर्द का काम याद है, यह सूई उस समय निकली थी जब क्रिस्टल के "उपयुक्त" बिन्दु पर नुकीले स्प्रिंग लगाये जाते थे (चित्र 6.3)। इस समय अनेक रेडियो स्टेशन कार्य कर रहे थे तथा ग्राही को तरंग पर समस्वरित करना होता था जिसके लिये संस्पर्श स्विच प्रयोग किया जाता था यदि किन्हीं नियत स्टेशनों को सुनना होता था, या धीरे-धीरे संघनित्र की धारिता को बदला जाता था जो आधुनिक उपकरणों में भी प्रयोग की जाती है।

स्फुलिंग रेडियो स्टेशनों से अधिक शक्ति प्राप्त करनी यदि असम्भव नहीं तो कठिन होती थी। इसके स्थान पर आये वोल्ट आर्क और उच्च आवृति की मशीन। शक्ति किलोवाटों में मापी जाने लगी।

लेकिन रेडियो संचार में वास्तविक क्रान्ति, जिसने रेडियो टेलीग्राफ़ से मानव की आवाज़ और संगीत प्रेषित करना सम्भव कर दिया, इलेक्ट्रॉनी बल्ब से आई।

सन १९०४ के अक्टूबर महीने में अंग्रेज़ विद्युत इंजिनियर जॉन फ़्लेमिन्ग (१८४९–१९४५) ने सिद्ध किया कि उच्च आवृति वाली वैद्युत धारा को निर्वात लैम्प, जो धात्विक सिलिंडर से घिरे और धारा द्वारा गर्म किये तंतु से बना है, की मदद से दिष्टकृत किया जा सकता है। इसका आरेख चित्र 6.4 में दिया गया है। फ़्लेमिन्ग को यह ज्ञात था कि निर्वात डायोड वैद्युत कम्पन को ध्वनि में परिवर्तित करने के लिये कितना महत्वपूर्ण है, (उसने इस लैम्प का नाम आड़ियोन
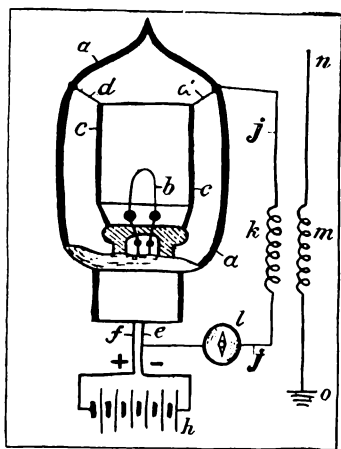
चित्र 6.4

भी रखा, लातिनी से आडियो-सुनना), लेकिन वह अपने संसूचक को अधिक प्रचलित न कर सका।

इलेक्ट्रॉनी लैम्प के अविष्कार का श्रेय अमेरिकी वैज्ञानिक ली द् फ़ोरेस्ट (१८७६–१९५०) को मिला। उसने सर्वप्रथम लैम्प को ट्रायोड में बदला (सन् १९०७ में)। फ़ोरेस्ट के लैम्प ने ग्राही लैम्प की जाली पर संकेत ग्रहण किये, उन्हें दिष्टकृत किया और टेलीफ़ोन पर टेलीग्राफ़ी संकेतों को सुनना सम्भव बनाया।

इलेक्ट्रॉनी लैम्प की प्रवर्धक के रूप में प्रयोग होने की सम्भावना अमेरिकी इंजिनियर को स्पष्ट थी। लेकिन केवल ६ वर्षों के बाद ही सन् १९१३ में जर्मन इंजिनियर मेइसनेर ने ट्रायोड को जनित्र आरेख में प्रयुक्त किया।

इलेक्ट्रॉनी लैम्प के जनित्र के रूप में प्रयुक्त होने से पहले आवाज़ के प्रेषण यानी वैद्युत चुम्बकीय तरंग के माडुलन के प्रयत्न किये जा चुके थे। लेकिन कठिनाइयां काफ़ी बड़ी थीं। माडुलन की आवृति की पट्टी को चौड़ा नहीं किया जा सका। किसी भी प्रकार मानव ध्वनि को तो प्रेषित किया जा सका लेकिन संगीत को नहीं। केवल तीसरे दशक में रेडियो-प्रेषित्रों तथा रेडियो-ग्राहियों ने, जो इलेक्ट्रॉनी लैम्पों पर कार्य कर रहे थे, रेडियो-संचार की ध्वनि आवृति के संपूर्ण परास को समेट लेने की विस्तृत सम्भावनाओं को देखने में मदद की।

अगला क्रांतिकारी कदम अभी हाल ही में हुआ जब अर्ध चालक तत्वों ने रेडियो आरेखों से इलेक्ट्रानी लैम्पों को बाहर निकाल दिया। अनुप्रयुक्त भौतिकी के नये क्षेत्र का जन्म हुआ जिसके अन्तर्गत ग्रहण, प्रेषण तथा सूचना को रखने की अनेक समस्याओं का अध्ययन किया जाता है।

रेडियो तकनीकी में लैम्प ट्रायोडों ने क्रांति की। लेकिन मानव की तुलना में तकनीकी जल्दी पुरानी होती है। अभी से ही इलेक्ट्रॉनी लैम्प को पुराना कहा जा सकता है और यदि आप दूरदर्शन यंत्र की दुकान में जाएं तो आप देखेंगे कि किस प्रकार ग्राहक अर्धचालकों पर बने दूरदर्शन यंत्र के बारे में पूछ-ताछ कर रहे हैं। मुझे शक नहीं है कि इस पुस्तक के प्रकाशित होने तक ऐसे दूरदर्शन यंत्रों की संख्या काफ़ी बड़ी होगी।

उम्र के बढ़ने के साथ-साथ आदर भी बढ़ता है तथा इसके अतिरिक्त लैम्प और ट्रान्ज़िस्टर दो आधारभूत प्रयोगों के नियम यानी निश्चित, आवृति वाली तरंगों के प्रवर्धन तथा जनन करने को समझाने का सबसे आसान तरीका इलेक्ट्रॉनी लैम्प के उदाहरण को प्रयोग करने का है। इसलिये हम ट्रान्ज़िस्टर की अपेक्षा इसकी कार्यविधि पर अधिक विस्तार से अध्ययन करेंगे।

तीन इलेक्ट्रोड वाले लैम्प के बल्ब में ऐनोड और धारा द्वारा गर्म करने वाले कैथोड तंतु के अतिरिक्त एक तीसरा इलेक्ट्रोड भी जुड़ा होता है जिसे जाली कहते हैं। इलेक्ट्रॉन जाली में से स्वतंत्र रूप से निकलते हैं। उसके छिद्रों का आकार इलेक्ट्रॉन के आकार से इतना बड़ा होता है जितना कि कण के आकार से पृथ्वी का आकार। चित्र 6.5 में दिखाया गया है कि किस प्रकार जाली ऐनोड धारा को करने में सहयोग देती है। स्पष्ट है कि जाली पर ऋणात्मक वोल्टता ऐनोडी धारा को कम कर देगी, तथा धनात्मक—बढ़ा देगी।

चित्र 6.5

प्रयोग करें। ऐनोड तथा कैथोड के बीच 100 वोल्टता चालू करें। फिर जाली पर वोल्टता को बदलना आरम्भ
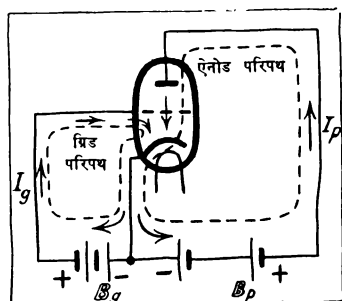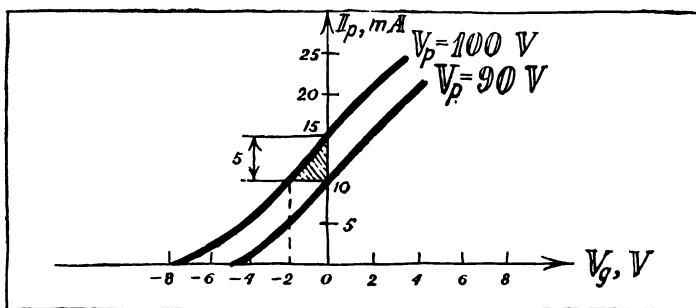
चित्र 6.6

करें, जैसा कि चित्र 6.6 में दिखाया गया है, लगभग −8 वोल्ट से +5 वोल्ट तक। ऐनोडी परिपथ में गुज़रने वाली धारा को एम्पियर-मापी की मदद से मापें। चित्र में दिखाया गया वक्र प्राप्त होगा। यह लैम्प की विशेषता बतलाता है। अब हम इस प्रयोग को दोहराते हैं, लेकिन इस बार एनोडी वोल्टता 90 वोल्ट के बराबर लेते हैं। वैसा ही वक्र प्राप्त होगा।

अब आप निम्न अद्वितीय परिणाम पर गौर करें। जैसा कि आड़ी रखाओं वाले त्रिकोण से स्पष्ट है ऐनोडी धारा का 5 मि० एम्पियर से प्रवर्धन करने की दो विधियां हैं: या तो ऐनोडी वोल्टता को 10 वोल्ट से बढ़ा कर, या जाली वोल्टता को 2 वोल्ट से बढ़ा कर। जाली के लगाये जाने पर लैंम्प-ट्रायोड प्रवर्धक में बदल जाता है। प्रवर्धन गुणांक हमारे द्वारा देखे गये उदाहरण में 5 (दस को 2 से विभाजित करने पर) के बराबर है। अन्य शब्दों में जाली की वोल्टता ऐनोड धारा पर ऐनोडी वोल्टता की तुलना में पाँच गुना अधिक प्रभाव डालती है।

अब देखें कि ट्रायोड निश्चित दैर्घ्य की तरंग का जनन किस प्रकार करता है।

तदनुरूपी असीम सरल आरेख चित्र 6.7 में दिखाया गया है। ऐनोडी वोल्टता को चालू करने पर कम्पन आकृति के C_{kt} संघनित्र का लैम्प में से आवेशित होना आरम्भ हो जाता है। नीचे का भाग

धनावेशित हो जाएगा। इसके तुरंत बाद ही स्वप्रेरण कुण्डली L_{ckt} में से संघनित्र का विसर्जन आरम्भ हो जाएगा। स्वतंत्र कम्पन उत्पन्न होंगे। यदि लैम्प में से हर समय ऊर्जा न आती तो वे नष्ट हो जाते। इस ऊर्जा की सहायता एक साइकल में मिलती रहे और कम्पन आकृति झूले की तरह "झूलती" रहे—ऐसा करने के लिये क्या आवश्यक है? इसके लिये तथाकथित पुनर्भरण की आवश्यकता है। L_{fb} कुण्डली में कम्पन आकृति की धारा प्रेरण के वैद्युत वाहक बल को वही आवृति देती है जो आवृति स्वतंत्र कम्पनों की है। इस प्रकार, ऐनोडी परिपथ में जाली स्पंदमान धारा पैदा करती है जो आकृति को उसकी ही आवृत्ति के साथ झुलाएगी।
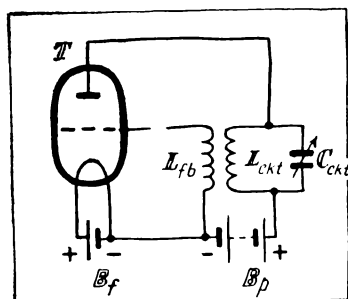
चित्र 6.7

पर बताए गए इन दो महान नियमों ने रेडियो तकनीकी को जन्म दिया तथा उससे सम्बंधित अन्य क्षेत्रों का आधार बनाया। इलेक्ट्रॉनी लैम्प अपना स्थान ट्रांज़िस्टर को देकर स्टेज से हट जाता है, लेकिन वैद्युत चुम्बकीय कम्पनों के प्रवर्धन तथा जनन के नियम वैसे ही हैं।

ट्रायोड लैम्प की भांति, ट्रांज़िस्टर में भी प्रवेश परिपथ में कम शक्ति डाल कर बाहरी परिपथ में अधिक शक्ति से कार्य किया जा सकता है। लेकिन कार्य के व्यवहार में थोड़ा अंतर है। जैसा कि हमने देखा, लैम्प की ऐनोडी धारा जाली की वोल्टता पर निर्भर करती है और संग्राही की धारा की मात्रा उत्सर्जक की धारा की मात्रा पर आधारित होती है।

लेकिन हमने अभी तक यह नहीं बताया कि ट्रांज़िस्टर क्या होता है। उसमें तीन इलैक्ट्रोड होते हैं। उत्सर्जक कैथोड का तदनुरूप है,
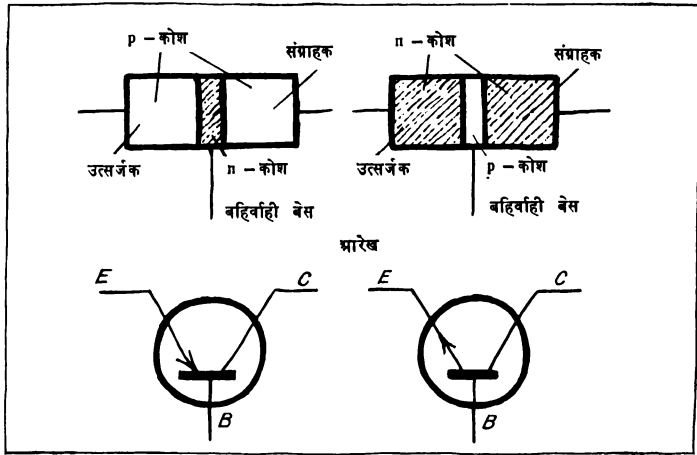
चित्र 6.8

सग्राही – ऐनोड का तथा आधार – जाली का। उत्सर्जक का तार – प्रवेश और संग्राही से निकलने वाला तार – निकास कहलाता है।

चित्र 6.8 से स्पष्ट है कि ट्रांज़िस्टर दो स्थानांतरणों p—n-कोटि से बना होता है। p-कोश को मध्य में रखा जा सकता है और n—p—n-कोटि का ट्रांजिस्टर प्राप्त किया जा सकता है।

उत्सर्जक पर हमेशा धनात्मक स्थानांतरण की वोल्टता गिरती है यानी वह आवेश के मुख्य वाहकों की बड़ी संख्या प्रदान कर सकता है। जब कम प्रतिरोध का उत्सर्जक परिपथ उच्च प्रतिरोध के संग्राही परिपथ में धारा परिवर्त्तित करता है तो इस स्थिति में प्रवर्धन होता है।

ट्रांज़िस्टरों को चालू करने तथा उन्हें प्रवर्धक और जनित्र के रूप में प्रयुक्त करने के नियम प्राय: लैम्प-ट्रायोड के नियम की भांति ही हैं। लेकिन हम यहां आधुनिक भौतिकी के इस महत्वपूर्ण क्षेत्र पर विचार नहीं करेंगे।

स्टेशन की शक्ति के अनुसार रेडियो-प्रसारण को विभिन्न वर्गों में बांटा जा सकता है। बडे रेडियो स्टेशन मैगावॉट तक की शक्ति से प्रसारण करते हैं। छोटे रेडियो प्रेषित्र जिसकी मदद से ट्रैफिक पुलिस का सिपाही अपने साथी को सूचना देता है कि DHR 5678 लाल बत्ती पर बिना रुके ही चली गई तथा उसपर जुर्माना करना चाहिये, मिलीवॉट के लगभग शक्ति से प्रेषित करता है। किन्हीं कार्यों के लिये कम शक्ति ही पर्याप्त होती है।

कई मीटर दैर्घ्यों वाली तरंगों पर प्रसारित करने वाले और केवल दस या से० मी० के अंश के बराबर दैर्घ्यों वाली तरंगों पर प्रसारित करने वाले उपकरणों में काफी महत्वपूर्ण अन्तर होते हैं। लेकिन तरंग दैर्घ्य तथा शक्ति के अन्तर्गत भी स्टेशन के प्रौजेक्ट इंजिनियर के समक्ष आरेखों के चयन के लिये काफ़ी बड़ा संग्राह होता है, और इस चयन पर स्थान, विशेष आवश्यकताएं, आर्थिक सम्बंधी विचार तथा केवल तकनीकी विचार प्रभाव डालते हैं।

रेडियो प्रेषित्र का आधार रेडियो तरंगों का जनित्र होता है। आप अब किस बात पर गौर करना चाहेंगे? हर प्रकार से पाँच विकल्प हैं। लैम्प जनित्र को प्रयुक्त किया जा सकता है। उस का परास अपवाद रूप से विशाल है। उसकी शक्ति वॉट के अंश से लेकर सैंकड़ों किलोवॉट तक हो सकती है, आवृत्ति—दसियों कि० हर्ट्स से कई गिगाहर्ट्स तक हो सकती है। लेकिन यदि आपको कम शक्ति यानी वॉट के दसवें अंश तक ही चाहिये तो आपके लिये ट्रांज़िस्टर जनित्र ही काफ़ी होगा। इसके विपरीत यदि सैंकड़ों वॉट से भी अधिक शक्ति चाहिये तो ट्रांज़िस्टर आपके काम नहीं आएगा (शायद थोड़े समय के लिये ही)। लेकिन यदि ऐसी शक्ति चाहिए जो दोनों प्रकार के जनित्रों से प्राप्त हो सकती हो तो इंजिनियर शायद ट्रांज़िस्टर को महत्व देगा। निस्संदेह, इंजिनियर के फैसले की चारुता की ही विजय होगी। ट्रांज़िस्टर प्रेषित्र कम स्थान ही नहीं घेरेगा बल्कि लैम्प जनित्र की अपेक्षा उसे हम अधिक आसानी से सुवाह्य (portable) बना सकते हैं।

अधिक विशिष्ट उपयोग के लिये मेग्नेट्रॉन और क्लाइस्ट्रॉन जनित्र प्रयुक्त किये जाते हैं। यदि आप कई मैगावॉट शक्ति के आवेग प्रेषित करना चाहते हैं तो प्रथम जनित्र बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा। आवृति का परास, जिसके लिये मेग्नेट्रॉन जनित्र चाहिए काफ़ी संकुचित है, 300 मेगाहर्ट्स से 300 गिगाहर्ट्स तक होता है।

अतिलघु तरंगों के इसी परास के लिये क्लाइस्ट्रॉन प्रयुक्त होता है। लेकिन यह उसी स्थिति में जब कम शक्ति की आवश्यकता हो यानी से० मी० परास में कई वॉट तक हो और मि० मी० परास में कई मि० वॉट तक हो।

आखिर में देखे गये ये दो जनित्र तथा पांचवां—क्वान्टमी जनित्र बहुत ही विशिष्ट है तथा इनका विशेष अध्ययन करना आवश्यक है। जहां तक ट्रांजिस्टर और लैम्प प्रेषित्रों का प्रश्न है तो वे आपस में एकसमान हैं। ऐसे स्पष्ट रेडियो तकनीकी नियम होते हैं जिनके अनुसार किसी भी लैम्प को ट्रांज़िस्टर द्वारा प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

लेकिन वैद्युत चुम्बकीय कम्पनों के जनित्रों का चयन—इस बारे में बताया गया तो अभी कुछ भी नहीं है। प्राथमिक (या जैसा कि कहा जाता है, परिचालक) जनित्र द्वारा पैदा की गई शक्ति का प्रवर्धन करने की विधि सोचनी चाहिये। इसी प्रकार, ध्वनि आवृति की वाहक तरंग के माडुलन की विधि का भी चयन करना चाहिये। ऐन्टेना क्षेत्र पर ऊर्जा प्रेषित करने के भी विभिन्न विकल्प हैं। स्वयं
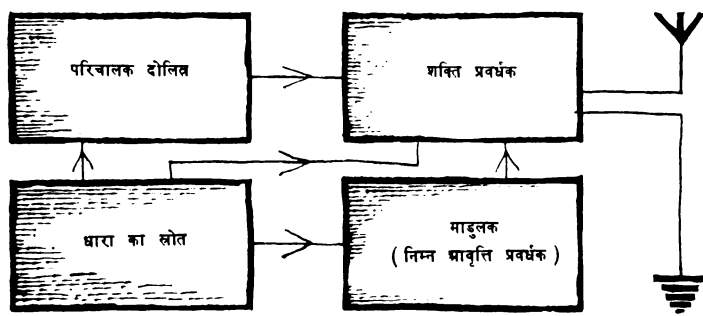
चित्र 6.9

ऐन्टेना-क्षेत्र का संगठन कार्य भी इंजिनियर के समक्ष काफी विस्तृत सम्भावनाएं प्रस्तुत करता है।

रेडियो तकनीकी में प्रायः तथाकथित क्रमदर्शी आरेख (flow diagram) की मदद ली जाती है। चित्र में अनेक समकोण बनाए जाते हैं जिनपर लेख लिखा होता हैं। किस समकोण में क्या है—आवश्यकतानुसार समझाया जा सकता है। रेडियो स्टेशन का क्रमदर्शी आरेख चित्र 6.9 में दिया गया है। परिचालक जनित्र नष्ट न होने-वाली लगभग हरात्मक कम्पन पैदा करता है जिसकी आवृति तथा तरंग दैर्घ्य वही होती है जिसपर आप अपना रेडियो सेट इस स्टेशन का कार्यक्रम सुनने के लिये समस्वरित करते हैं। दूसरा समकोण शक्ति-प्रवर्धक है। स्वयं नाम ही अपने बारे में बता रहा है और उसकी संरचना बतलाने के लिये हम यहां नही रुकेंगे। माडुलक नामी समकोण का कार्य है—ध्वनि कम्पनों को वैद्युत कम्पनों में परिवर्त्तित करके रेडियो स्टेशन की वाहक तरंग पर लादना।

माडुलन भी विभिन्न विधियों द्वारा किया जा सकता है। आवृति माडुलन किस प्रकार किया जाता है—यह समझाना सबसे आसान है! अनेक स्थितियों में माइक्रोफोन एक संघनित्र होता है जिसकी धारिता ध्वनि के दाब के फलस्वरूप बदल जाती है: क्योंकि आप जानते ही हैं कि धारिता प्लेटों के बीच की दूरी पर निर्भर करती है। अब आप यह मान लें कि ऐसा एक संघनित्र तरंग जनन करने वाली कम्पन आकृति पर लागू है। इस प्रकार तरंग की आवृति ध्वनि के दाब के कारण परिवर्तित होगी।

चूंकि हम माइक्रोफोन के साथ कम्पन आकृति में "घुस" गये हैं तो आकाश में एक निश्चित आवृति प्रेषित नहीं होंगी बल्कि आवृति की कोई पट्टिका प्रेषित होगी। यह काफ़ी स्पष्ट है कि आदर्श रूप में इस अस्पष्टता में आवृति का सम्पूर्ण ध्वनि अंतराल आना चाहिए जो, जैसा हमें ज्ञात है 20 कि० हर्ट्स होता है।

यदि रेडियो प्रसारण दीर्घ तरंगों पर किया जा रहा है जिसकी आवृति 100 कि० हर्ट्स के बराबर है, तो पट्टिका, जिसमें गुज़रना सम्भव है, वाहक आवृति के पांचवें भाग के बराबर होती है। स्पष्ट है कि दीर्घ तरंगों पर प्रसारण कार्य करना बहुत अधिक स्टेशनों के

लिये, जो एक दूसरे पर अध्यारोपित न हों, असम्भव होगा। लेकिन लघु तरंगों के लिए एकदम अलग बात है। 20 मेगाहर्ट्स की आवृत्ति के लिये पट्टिका की चौड़ाई वाहक आवृति के मान के एक प्रतिशत के अंश के बराबर होगी।

शायद हमारे देश में एक भी घर नही है जिसमें रेडियो के लिये सॉकेट (socket) न हो। इसके द्वारा आज तथाकथित रेडियो पुन: प्रसारण (radio rebroadcasting) के कार्यक्रम सुनते हैं। इसे तार प्रसारण भी कहते हैं।

मास्को में सर्वप्रथम पुन: प्रसारण का एक कार्यक्रम वाला जाल सन् १९२५ में चालू किया गया था। यह कार्यक्रम एक ही समय में 50 लाऊडस्पीकरों द्वारा ग्रहण किया गया था।

एक कार्यक्रम वाला प्रसारण ध्वनि आवृति पर किया जाता है। रेडियो स्टुडियो से कार्यक्रम तारों द्वारा केन्द्रिय प्रवर्धन स्टेशन को भेजा जाता है। केन्द्रिय स्टेशन से एक बार फिर तारों द्वारा ध्वनि कम्पनों को मूल विंदुओं को भेजा जाता है, जहां उनका पुन: प्रवर्धन होता है और फिर मुख्य प्रदाय लाइनों द्वारा ट्रान्सफार्मर उपस्टेशनों को भेजा जाता है। ऐसे प्रत्येक उपस्टेशन से एक बार फिर तार तथाकथित अगली श्रेणी के उपस्टेशनों को जाती है। शहर या बस्ती के आकार के अनुसार जाल की कड़ियों की संख्या, और, इस प्रकार, वोल्टता के कम होने की संख्या विभिन्न हो सकती है। उपभोक्ता लाइनों में वोल्टता 30 वोल्ट के बराबर है।

सन् १९६२ से हमारे देश के शहरों में तीन तारों द्वारा प्रसारण आरम्भ हुआ। दो अतिरिक्त कार्यक्रमों का प्रसारण 78 तथा 120 कि० हर्ट्स की वाहक आवृति के आयाम माडुलन की विधि द्वारा स्वतंत्र जाल से किया जाता है। अपने घर के लाइन वाले ग्राही का स्विच घुमा कर आप इन प्रसारणों का विमॉडुलन करेंगे (यानी ध्वनि को पृथक करेंगे और उच्च आवृति को "छानेंगे")।

इस प्रकार, एक ही तार में से तीन कार्यक्रमों वाले प्रसारण के समय एक ही समय में तीन कार्यक्रम प्रेषित किये जाते हैं एक–मुख्य, जो ध्वनि आवृति पर प्रेषित होता है तथा दो अविमॉडुलित। इसीलिये उनके प्रसारण एक दूसरे के बीच विघ्न नहीं डालते हैं। सरलता से

सोचा गया, लेकिन परिणाम अतिउत्तम है। प्रसारण के मितव्ययता, टिकाऊपन तथा उत्तम कोटि के होने के कारण अनुमान किया जा सकता है कि तार प्रसारण (यानी किसी पदार्थ का वाहक के रूप में प्रयोग करना: धात्विक तार या कांच रेशा (fibre optics glass) का भविष्य बहुत उज्जवल है।

रेडियो-अभिग्रहण

रेडियो सेट की संरचनाएं अनगिनत हैं। रेडियो इलेक्ट्रानिकी के क्षेत्र में विकास विशेष रूप से तेज़ी से हो रहा है। अतः रेडियो सेट शीघ्र ही पुराने हो जाते हैं और दुकान में पुराने सेटों की तुलना में और अच्छे सेट आ जाते हैं।

रेडियो सेट के "अच्छा" होने से क्या अभिप्राय है। इसका उत्तर प्रत्येक पाठक को ज्ञात होगा, यहां तक कि उस पाठक को भी जो भौतिकी से अवगत नहीं है। अच्छा रेडियो सेट ऐन्टेना पर आनेवाली अव्यवस्थित रेडियो तरंगों में से केवल उन्हीं तरंगों को पृथक् करता है जिनकी आवश्यकता है। इस विशेषता को वरण (selection) कहते हैं। रेडियो सेट यथासम्भव संवेदनाशील होना चाहिए, अर्थात् वह सब से क्षीण संकेत ग्रहण कर सकता हो तथा, अंत में, जिस स्टेशन पर अपना सेट हमने समस्वरित किया है उस स्टेशन से प्रसारित होने वाले संगीत तथा ध्वनि का वह बिना किसी प्रकार की विकृति के पुनरुत्पादन कर सके।

अतएव, संवेदनशीलता, वरण तथा परिशुद्धता। आप यहां एक
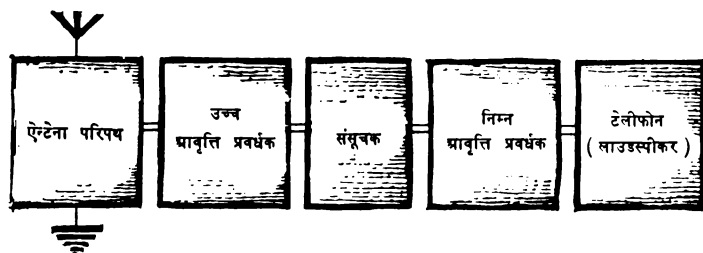
चित्र 6.10

ग्रौर इच्छा व्यक्त कर सकते हैं: रेडियो सेट को तरंगों के सभी परासों पर ग्रच्छी प्रकार काम करना चाहिए।

सीधे प्रवर्धन के रेडियो सेट का क्रमदर्शी ग्रारेख काफ़ी स्पष्ट है (चित्र 6.10)। सब से पहले ग्रपेक्षित तरंग दैर्घ्य को पृथक् करना चाहिए ग्रौर उच्च ग्रावृत्ति के कम्पन का प्रवर्धन करना चाहिए जो ग्रपेक्षित स्टेशन की तरंग को ऐन्टेना में पैदा करता है। उसके बाद संसूचन या विमॉडुलन करना ग्रावश्यक है—यह वाहक ग्रावृत्ति को "बाहर निकालने" तथा वैद्युत धारा से ध्वनि की वाहक सूचना को पृथक करने की क्रिया का नाम है। ग्रंत में, एक ग्रौर प्रवर्धक प्रयुक्त करना होगा—यह निम्न ग्रावृत्ति वाले कम्पनों के लिये। इसकी ग्रंतिम सीढ़ी है—वैद्युत कम्पनों का ध्वनि में परिवर्तन जिसे लाउडस्पीकर या शीर्षफ़ोन द्वारा किया जाता है। शीर्षफ़ोन का प्रयोग वे नज़ाकत पसन्द लोग करते हैं जो ग्रपने पड़ोसियों के कार्य में बिल्कुल भी विघ्न नहीं डालना चाहते।

प्राय: रेडियो सेट का ऐन्टेना प्रेरित रूप से ग्रनेक परास वाली कम्पन ग्राकृतियों के साथ जुड़ा होता है। जब हम परास के स्विच को घुमाते हैं तो हम वह कार्य कर रहे होते हैं (जैसे ग्रारेखी रूप में चित्र 6.11 में दिखाया गया है। प्रत्येक परास की सीमा में हम साधारणतया ग्राही कम्पन ग्राकृति के संघनित्र की धारिता परिवर्तित करके समस्वरित कर लेते हैं। किसी सेट की उत्तम रूप से ग्रावृति पकड़ने की क्षमता कम्पन ग्राकृति के ग्रनुनाद के वक्र से निश्चित की जाती है।

मेरे सामने कार के रेडियो की तकनीकी विशेषताएं रखी हैं। दीर्घ तथा मध्यम तरंगों के परास के लिये उसके वरण की मात्रा 9 कि० हर्ट्स दी गई है। यह, निस्संदेह, वह सीमा नहीं है जिसे प्राप्त न किया जा सके।

रेडियो सेट की संवेदनशीलता की विशिष्टता ऐन्टेना में वैद्युत गति बल की न्यूनतम मात्रा होती है जो काफ़ी स्पष्टता से रेडियो कार्यक्रम को सुनना सम्भव बनाती है (मैं यह नहीं कह सकता कि यह कथन कितना परिशुद्ध है)। कार के रेडियो में दीर्घ तरंगों के लिये संवेदन-

शीलता 175 माइक्रोवोल्ट, तथा अतिलघु तरंग के परास के लिये 5 माइक्रोवोल्ट से कम नही होती।

संवेदनशीलता प्रवर्धन गुणांक तथा आंतरिक शोर पर निर्भर करती है। रेडियो सेटों के प्रवर्धन गुणांक $10^5 - 10^8$ के बीच रहते हैं। यहां से निष्कर्ष निकलता है कि वह स्टेशन जिसे मैं सुनना चाहता हूँ, सेट के ऐन्टेना में प्रेरण का वैद्युत गति बल 10^{-8} माइक्रोवोल्ट से कम न बनाए।
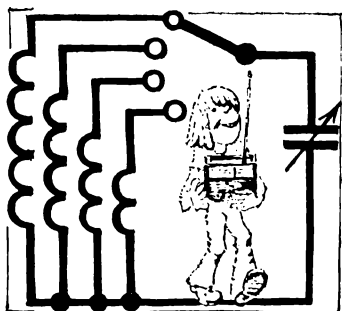
चित्र 6.11

रेडियो तरंगों का विस्तारण

सबसे आसान स्थिति होती है–स्वतंत्र आकाश में रेडियो तरंगों का विस्तारण। रेडियो प्रेषित से कुछ ही दूरी पर उसे एक बिन्दु माना जा सकता है। और यदि यह सही है तो रेडियो तरंगों की सीमा गोलाई में होनी चाहिए। यदि हम रेडियो प्रेषित्र के चारों ओर कई गोलों की कल्पना करें तो गोलों में से गुज़रने वाली ऊर्जा अपरिवर्तित रहेगी। हम यह जानते ही हैं कि गोले का पृष्ठ अर्धव्यास के वर्ग के आनुपातिक होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि तरंग की तीव्रता अर्थात समय की प्रति इकाई में क्षेत्रफल की प्रति इकाई पर आनेवाली ऊर्जा स्रोत से दूर होने पर दूरी के वर्ग के व्युत्क्रमानुपातिक होगी।

निस्संदेह, यह महत्वपूर्ण नियम उस स्थिति में प्रयुक्त किया गया है जब रेडियो तरंगों के प्रवाह को एक संकीर्ण दिशा में भेजने के लिये कोई विशेष कार्य न किया गया हो।

रेडियो किरणों को एक निश्चित दिशा में भेजने के लिये विभिन्न तकनीकी विधियां होती हैं। इसको हल करने की एक विधि ऐन्टेना के लिये सही जाली को प्रयुक्त करना है। ऐन्टेना इस प्रकार लगाना चाहिये कि उसमें प्रेषित तरंगें निश्चित दिशा में "शिखर से शिखर

रूप में" विस्तारित हों। इसी कार्य के लिये विभिन्न ग्राकार के दर्पण प्रयुक्त किये जाते हैं।

ग्रंतरिक्ष में जाने वाली रेडियो तरंगें सीधे मार्ग से थोड़ी विचलित, परावर्तित तथा विसरित होंगी ग्रौर उनका ग्रपवर्तन भी होगा लेकिन केवल उस स्थिति में जब उनके मार्ग में वे बाधाएं ग्राएंगी जिन्हें उनके तरंग दैर्ध्य के साथ मापा जा सकें।

पृथ्वी की सतह के पास गुज़रने वाली तरंगों का व्यवहार हमारे लिये विशेष दिलचस्पी रखता है। तरंग दैर्ध्य पर निर्भर करते हुए प्रत्येक पृथक स्थिति में चित्र काफी ग्रपने ही क़िस्म का हो सकता है।

पृथ्वी तथा वायुमंडल के वैद्युत गुण यहां मुख्य रोल ग्रदा करते हैं। यदि सतह धारा का चालक है तो वह ग्रपने पास से रेडियो तरंगों को "गुज़रने नहीं देगी"। वैद्युत चुम्बकीय क्षेत्र की वैद्युत बल रेखाएं धातु पर (विस्तृत रूप में–किसी भी चालक पर) समकोण बनाती हुई गिरती हैं।

ग्रब ग्राप ग्रनुमान करें कि रेडियो प्रसारण समुद्री सतह के करीब किया जा रहा है। समुद्री जल में विलीन लवण विद्यमान होते हैं ग्रर्थात वह विद्युत-ग्रपघट्य है। समुद्री जल धारा का ग्रतिउत्तम चालक है। इसी लिये वह रेडियो तरंग को "पकड़ कर" रखेगा, उसे समुद्र की सतह के साथ-साथ ही चलने पर विवश करेगा।

ग्रत्यधिक उच्च ग्रावृति वाली धारा के ग्रतिरिक्त ग्रन्य धाराग्रों के लिये मैदानी तथा वन्य क्षेत्र सुचालक होते हैं। ग्रन्य शब्दों में, दीर्घ तरंगों के लिये वन तथा मैदान धातु की भांति व्यवहार करते हैं।

इसीलिए दीर्घ तरंगें संपूर्ण पृथ्वी सतह द्वारा पकड़ी जाती हैं तथा वे पृथ्वी की परिक्रमा कर सकती हैं। यहां हमें याद ग्राया कि ग्रापको बता दें कि इस विधि द्वारा रेडियो तरंग की रफ़तार मापी जा सकती है। रेडियो तकनीशियनों को ज्ञात है कि पृथ्वी को पार करने में रेडियो तरंग को 0.13 सेकंड लगते है। दीर्घ तरंगों के लिये पहाड़ों की ऊंचाइयां कुछ भी नहीं हैं, एक कि० मी० दैर्घ्य की तरंग पहाड़ को पार कर सकती है।

जहां तक लघु दैर्घ्यों की तरंगों का प्रश्न है तो इन तरंगों पर सुदूर रेडियो ग्रहण की सम्भावना पृथ्वी के ग्रायन-मण्डल के कारण

बनती है। सूर्य-किरणें पृथ्वी के ऊपरी क्षेत्रों में वायु के अणुओं को नष्ट करने की क्षमता रखती हैं। अणु आयन में परिवर्तित हो जाते हैं और पृथ्वी के 100–300 कि० मी० ऊपर अनेक आवेशित सतहें बनाते हैं। अतएव, लघु दैर्घ्यों वाली तरंगों के लिये आकाश, जिसमें तरंग यात्रा करती है–यह परावैद्युत की सतह है जो दो चालक सतहों के बीच दबी हुई होती है।

चूंकि मैदानी तथा वन्य क्षेत्र लघु तरंगों के लिये सुचालक नहीं होते हैं, तो वे उन्हें पकड़कर रखने में असमर्थ होते हैं। लघु तरंगें स्वतंत्र रूप से यात्रा के लिये निकल पड़ती हैं आयन मंडल से जाकर मिलती हैं जो उन्हें धातु की सतह की भांति परावर्तित कर देता है।

आयन मंडल का आयनन असमान होता है तथा, निस्संदेह, दिन और रात में भिन्न होता है। इसीलिये लघु तरंगों के मार्ग काफी भिन्न हो सकते हैं। वे आपके रेडियो सेट तक पहुंचने से पहले पृथ्वी तथा आयन मंडल द्वारा अनेक बार परावर्तित हो सकती हैं। लघु तरंगों की किस्मत इस बात पर निर्भर करती है कि वह आयन मंडल की सतह पर किस कोण पर गिरती है। यदि यह कोण समकोण के समीप है तो परावर्तन नहीं होगा और तरंग विश्व के आकाश में चली जाएगी। लेकिन प्रायः पूर्ण आंतरिक परावर्तन होता है और लघु तरंग पृथ्वी पर वापस आ जाती है।

अतिलघु तरंगों के लिये आयन मंडल पारदर्शी होता है। इस लिये इन दैर्घ्यों की तरंगों पर रेडियो प्रसारण दृश्य-दूरी के अन्तर्गत या कृत्रिम उपग्रह के द्वारा किया जा सकता है। तरंगों को उपग्रह की ओर फेंक कर हम उससे परावर्तित सूचकों को काफ़ी बड़ी दूरी पर पकड़ सकते हैं।

कृत्रिम उपग्रहों ने रेडियो संचार की तकनीकी में एक नए युग का आरम्भ किया है क्योंकि उनके द्वारा अतिलघु तरंगों पर रेडियो तथा दूरदर्शन कार्यक्रमों का प्रसारण सम्भव हो गया है।

से० मी०, मि० मी० तथा उपमि० मी० दैर्घ्यों वाली तरंगों पर प्रसारण काफ़ी महत्व रखता है। इस दैर्घ्य की तरंगें वायुमंडल द्वारा अवशोषित हो सकती हैं। प्रतीत होता है कि ऐसी "खिड़कियां" होती हैं, और निश्चित विधि द्वारा तरंग दैर्घ्य को ज्ञात करके उन तरंगों को प्रयुक्त किया जा सकता है जो प्रकाशीय परास में जाती हैं। इन तरंगों

के गुण हमें ज्ञात ही हैं: छोटे तरंगी अंतराल में अनअध्यारोपित कार्यक्रमों को बड़ी संख्या में "भेजा" जा सकता है।

रेडियो स्थान निर्धारण (Radio location)

रेडियो स्थान निर्धारण के नियम काफ़ी साधारण हैं। संकेत प्रेषित किया जाता है और वह हमारे मनचाहे पदार्थ से परावर्तित होकर वापस लौट आता है। यदि यह पदार्थ 150 मी० की दूरी पर स्थित हो तो संकेत एक माइक्रोसेकंड में वापिस आ जाएगा, यदि 150 कि० मी० की दूरी पर हो तो 1 मि० से० में। संकेत के भेजने की दिशा रेखा की वह दिशा है जिसमें हवाई जहाज, रॉकेट या कार उस क्षण पर थी जब रेडियो किरण उससे टकराई थी।

स्पष्ट है कि रेडियो तरंग की तीव्र दिशा होनी चाहिये, कोण का मुख, जिसमें किरण की शक्ति का मुख्य भाग संकेंद्रित होता है, एक अंश से कम होना चाहिये।

नियम तो वस्तुतः सरल है लेकिन तकनीक सरल नहीं है। हम इस बात से अरम्भ करेंगे कि जनित्र से काफ़ी उच्च अपेक्षा की जाती है। मी० तथा डेसी मी० परास में (अधिक दीर्घ तरंगें यहां काम नहीं आएंगी) लैम्प-जनित्र प्रयुक्त होते हैं तथा से० मी० परास में— क्लाइस्ट्रॉन और मेग्नेट्रॉन।

सबसे अधिक प्राकृतिक विधि कार्य की आवेगी विधि प्रतीत होती है। समयानुसार आकाश में लघु अवधि वाले आवेग भेजे जाते हैं। आधुनिक रेडियो स्थान निर्धारण केंद्रों में आवेग की अवधि 0.1 से 10 माइक्रो से० तक होती है। आवेग को दोहराए जाने की आवृति इस प्रकार चुनी जानी चाहिए ताकि परावर्तित संकेत अंतराल के समय वापिस लौट सके।

वायुयान या रॉकेट को ज्ञात करने की अधिकतम दूरी केवल प्रत्यक्ष दृष्टि की स्थिति पर निर्भर करती है। पाठक निस्संदेह यह जानता होगा कि आधुनिक रेडियो स्थान निर्धारक हमारे सौर मंडल के किसी भी ग्रह से परावर्तित संकेत ग्रहण कर सकते हैं। स्पष्ट है कि इसके लिये वे तरंगें प्रयुक्त की जानी चाहिये जो बिना किसी रुकावट के

ग्रायन मंडल को पार कर जाती हैं। यह सफलता ही है कि तरंग दैर्ध्य को लघु करने का प्रत्यक्ष प्रभाव स्थान निर्धारण दृष्टि की दूरी के बढ़ने पर होता है, चूंकि वह न केवल प्रेषित ग्रावेग की ऊर्जा, बल्कि विकिरण की ग्रावृति के ग्रानुपातिक होती है।

दोलन चित्रण (इलेक्ट्रॉन किरण नालीका) की स्क्रीन पर प्रेषित तथा परावर्तित ग्रावेगों की क्षणदीप्ति देखी जा सकती है। यदि वायुयान समीप ग्रा रहा है तो परावर्तित संकेत प्रेषित संकेत की दिशा में ग्राने लगेगा।

रेडियो स्थान निर्धारकों के लिये यह ग्रनिवार्य नहीं कि वे ग्रावेगी रूप में ही कार्य करें। मान लो कि वायुयान ऐन्टेना की दिशा में v रफ़्तार के साथ ग्रा रहा है। उस से निर्विघ्न रूप में किरण परावर्तित होती है। डोपलेर प्रभाव हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचाता है कि ग्रहित तरंग की ग्रावृति प्रेषित तरंग की ग्रावृति के साथ निम्न समीकरण द्वारा सम्बंधित होगी :

$$\upsilon_{\text{ग्रहित}} = \upsilon_{\text{प्रेषित}}\left(1+\frac{2v}{c}\right)$$

ग्रावृतियों की मात्राएं रेडियो तकनीकी विधियों द्वारा काफ़ी परिशुद्धतापूर्वक निश्चित की जाती हैं। ग्रनुनाद में समस्वरित होकर हम $\nu_{\text{ग्रहित}}$ को ज्ञात कर सकते हैं तथा उसके ग्राधार पर रफ़्तार माप सकते हैं। यदि, मान लो, प्रेषित संकेत की ग्रावृति 10^9 हर्ट्स के समान है तथा वायुयान या रॉकेट स्थान निर्धारक के ऐन्टेना की ग्रोर 1000 कि० मी० प्रति घंटे की रफ़्तार से ग्रा रहा है तो ग्रहित ग्रावृति प्रेषित ग्रावृति की तुलना में 1850 हर्ट्स से ग्रधिक होगी।

रेडियो किरण का वायुयान, रॉकेट, मोटर जहाज या कार से परावर्तन यह दर्पण द्वारा परावर्तन नहीं है। तरंग दैर्घ्य सम्मेय होते हैं या जटिल ग्राकार वाले परावर्तन करने वाले पदार्थ के ग्राकार से काफ़ी कम ग्राकार रखते हैं। पदार्थ के विभिन्न बिन्दुग्रों से परावर्त्तित किरणें परस्पर व्यतिकरण करेंगी ग्रौर विभिन्न दिशाग्रों में विसरित हो जाएंगी। ये दोनों परिघटनाएं यह सिद्ध करेंगी कि पदार्थ की प्रभावी परावर्तन

करने वाली सतह अपनी वास्तविक सतह से काफ़ी भिन्न होगी। यहां परिकलन करना काफ़ी कठिन है तथा स्थान निर्धारक पर कार्य करने वाला व्यक्ति ही अपने अनुभव के आधार पर यह बता सकता है कि किरण के मार्ग में क्या पदार्थ आ गया है।

आपने अवश्य ही रेडियो स्थान निर्धारक ऐन्टेना देखा होगा— तार से बना हुआ गोल दर्पण, जो हर समय गतिमय रहता है, यह आकाश का निरीक्षण करता रहता है। निर्धारक के दर्पण को हर प्रकार की विभिन्न गतियों में रखा जा सकता है, उदाहरणतया, किरण को इस प्रकार भी प्रेषित किया जा सकता है कि वह आकाश रेखाओं या चक्करों से काट दें। इस प्रकार के कार्य के फलस्वरूप न केवल वायुयान की दूरी बताई जा सकती है बल्कि उसकी गति का मार्ग भी बताया जा सकता है।

दृश्यता की अनुपस्थिति में इस विधि द्वारा वायुयान को हवाई पट्टी पर उतारा जाता है। यह कार्य स्वयं व्यक्ति द्वारा भी किया जा सकता है तथा स्वाचालित मशीन द्वारा भी।

रेडियो स्थान निर्धारक को "धोखा" भी दिया जा सकता है। सर्वप्रथम, वस्तु को ऐसे पदार्थ द्वारा ढका जा सकता है जो तरंगों का अवशोषण कर सके। इस कार्य के लिये कोयले की धूल या रबड़ प्रयुक्त की जाती है। इस के अतिरिक्त, यहां परावर्तन गुनांक को कम करने के लिये ढकने वाले पदार्थ का वलीयन किया जाता है ताकि इस प्रकार विकिरण के प्रेषित अंश को सभी दिशाओं में अव्यस्थित रूप से विसरित किया जा सके।

यदि वायुयान से ऐलुमिनियम परत के पैकेट या धात्विक धागों को नीचे गिराया जाए तो रेडियो स्थान निर्धारक पूर्णतया स्थिति के प्रति भ्रांति पूर्ण हो जाएगा। सबसे पहले दूसरे महायुद्ध के समय इस विधि का प्रयोग अंग्रेजों ने किया था। अंत में, तीसरी विधि है—आकाश को झूठे रेडियो संकेतों से भर देने की विधि।

रेडियो स्थान निर्धारण—यह तकनीकी का सबसे दिलचस्प क्षेत्र है जिसको शांतिप्रिय कार्यों के लिये काफ़ी बड़े पैमाने पर प्रयुक्त किया जाता है तथा इसके बिना रक्षा के बारे में सोचा ही नहीं जा सकता।

रेडियो स्थान निर्धारक का प्रतिद्वंदी है लेज़र। लेज़र द्वारा पदार्थ

के स्थान निर्धारण के नियम ऊपर बताये गये नियमों से अलग नहीं हैं।

रेडियो स्थान निर्धारण नियम अंतरिक्ष यानों तथा पृथ्वी के बीच संचार का आधार हैं। रेडियो दूरदर्शी इस प्रकार स्थित किये गये हैं ताकि अंतरिक्ष यान आँखों से ओझल न हो। इनके ऐन्टेना बहुत ही विशाल होते हैं—सैंकड़ों मी० तक। इतने विशाल आकार वाले ऐन्टेना की अनिवार्यता इस बात से समझ आती है कि काफ़ी शक्तिशाली संकेत प्रेषित तो करने होते हैं तथा ग्रहण करने पड़ते हैं काफ़ी क्षीण संकेत जो प्रेषित्रों से आते हैं। स्पष्ट है कि बहुत ही संकीर्ण रेडियो किरण की आवश्यकता होती है। यदि ऐन्टेना 2 अरब 20 करोड़ कम्पन प्रति सेकंड (तरंग दैर्घ्य 1 से० मी०) की रफ़्तार से कार्य करता है, तो चन्द्रमा तक की दूरी के लिये किरण केवल 1000 कि० मी० तक के व्यास पर ही नष्ट हो जाती है। सच है कि जब किरण मंगल ग्रह तक पहुँचेगी (30 करोड़ कि० मी०) तो उसका व्यास 700 000 कि० मी० होगा।

दूरदर्शन

चूंकि 100 पाठकों में से 99 पाठक अपना समय दूरदर्शन यंत्र के साथ बिताते होंगे, तो इस महान अविष्कार के बारे में न बतलाना अन्याय होगा। मैं यहां दूरदर्शन प्रसारण के नियमों के बारे में बतलाऊँगा।

किसी दूरी पर चित्र के प्रसारण का विचार निम्न प्रकार है। प्रेषित किया जाने वाला चित्र कई वर्गों में बाँट दिया जाता है। डाक्टर बतला देगा कि वर्ग का क्या आकार होना चाहिए ताकि आँख इस चित्र के अंदर द्युति के परिवर्तन को नोट न कर पाये। चित्र के प्रत्येक भाग की प्रकाशीय ऊर्जा को प्रकाश वैद्युत प्रभाव के द्वारा वैद्युत संकेत में परिवर्तित किया जा सकता है। इन संकेतों के गिनने की विधि सोचनी चाहिये। निस्संदेह, यह एकदम निश्चित क्रम में किया जाता है जैसा कि पुस्तक के पढ़ने में। ये वैद्युत संकेत वाहक वैद्युत चुम्बकीय तरंग पर रख दिये जाते हैं, ठीक उसी प्रकार, जैसे कि हम ने रेडियो प्रसारण के लिये किये थे। इसके पश्चात, बिलकुल वैसे ही होता है, जैसा रेडियो संचार के लिये होता है। माडुलित कम्पनों का प्रवर्धन

तथा संसूचन किया जाता है। दूरदर्शन यंत्र वैद्युत आवेगों को दृश्य चित्र में परिवर्तित कर देता है।

प्रेषित्र दूरदर्शन नलिकाएं सुपरआइकोनोस्कोप, सुपरआर्थीकोन तथा विडीयोकोन नामों से जानी जाती हैं। चित्र को लेन्स की मदद से प्रकाशिक कैथोड पर प्रक्षेपित किया जाता है। आक्सीजन-सीज़ियम तथा ऐन्टीमनी-सीज़ियम सर्वाधिक प्रचलित प्रकाशिक कैथोड हैं। प्रकाशिक कैथोड को निर्वात नालिका में प्रकाशिक ऐनोड के साथ जोड़ दिया जाता है।

नियमानुसार चित्र के प्रत्येक तत्त्व से प्रकाश प्रवाह को क्रम से प्रक्षेपित कर के चित्र का प्रसारण किया जा सकता था। इस स्थिति में प्रकाश-धारा कम अवधि में ही, जब तक चित्र के प्रत्येक तत्त्व का प्रसारण चालू है, प्रवाहित होनी चाहिये। लेकिन ऐसा कार्य करना आसान न होता, इसीलिये प्रेषित्र नलिका में एक प्रकाश तत्त्व के स्थान पर अनेक तत्त्वों को प्रयुक्त किया जाता है जिनकी संख्या प्रेषित किये जाने वाले चित्र के विभाजित तत्त्वों की संख्या के बराबर होती है। इस ग्राही प्लेट को लक्ष्य कहते हैं तथा यह मोज़ेक के रूप में बना होता है।

मोज़ेक—यह अभ्रक की एक महीन प्लेट होती है जिसके एक ओर सीज़ियम आक्साइड से ढके हुए पृथक् चाँदी के दाने लगे होते हैं। प्रत्येक दाना प्रकाश तत्त्व होता है। अभ्रक की प्लेट के दूसरी ओर धातु की परत चढ़ी होती है। मोज़ेक के प्रत्येक दाने तथा धातु के बीच छोटा-सा संघनित्र-सा बन जाता है, जो कैथोड द्वारा भेजे गये इलेक्ट्रॉनों से आवेशित हो जाता है। स्पष्ट है कि प्रत्येक संघनित्र का आवेश प्रेषित किये जाने वाले चित्र के तदनुरूपी स्थान की द्युति के आनुपातिक होगी।

इस प्रकार, धात्विक प्लेट पर वस्तु का छुपा हुआ वैद्युत चित्र अंकित हो जाता है। इस प्लेट से अब उसे किस प्रकार उतारा जाए? एक इलेकट्रॉनी किरण की मदद से जिसे प्लेट पर इस प्रकार चलाया जाये जैसे कि पुस्तक के पृष्ठ पर दृष्टि दौड़ती है। इलेक्ट्रॉनी किरण स्विच का कार्य करती है जो क्षण भर में माइक्रोसंघनित्र में से वैद्युत

परिपथ को बन्द कर देता है। इस क्षण भर में बने परिपथ में धारा चित्र की द्युति के साथ एक ही रूप में जुड़ेगी।

रेडियो तकनीकी में प्रयुक्त होने वाली साधारण विधियों द्वारा प्रत्येक संकेत को काफ़ी प्रवर्धन किया जा सकता है तथा करना भी चाहिये। चित्र के प्रसारण के समय आँख को यह नोट नहीं होना चाहिये कि इलेक्ट्रॉनी किरण अवलोकित स्क्रीन पर विभिन्न बिन्दुओं पर क्रम से दौड़ रही है। इलेक्ट्रॉनी किरण के एक साइकल में ग्राही नलिका की स्क्रीन पर प्राप्त संपूर्ण चित्र एक फ्रेम कहलाता है। फ्रेम के बदलने की ऐसी आवृति बनानी चाहिये कि दृष्टि-जड़त्व के कारण द्युति का आवलोकन नजर न आए।

फ्रेम के बदलने की आवृति क्या होनी चाहिये? मुख्य तार में धारा आवृति से संबंधित संख्या लेनी चाहिए। बात यह है कि स्पन्दमान वोल्टता जो इलेक्ट्रॉनी किरण नलिका की जाली पर लागू है, स्क्रीन पर काली तथा श्वेत धारियां बनाती हैं। यदि फ्रेम के बदलने की आवृति मुख्य तार की धारा की आवृति के बराबर या उसके गुना होगी तो केवल तब ही धारियां स्थायी होंगी तथा दिखाई नहीं देंगी। गति की एकसमानता तब बनती है जब फ्रेम के बदलने की आवृति 20 हर्ट्स के लगभग हो, इसीलिये दूरदर्शन में यह आवृति 25 हर्ट्स ली गई है। लेकिन इस आवृति में छोटे-छोटे आवलोकन नज़र आ जाते हैं। फ्रेम की आवृति 50 हर्ट्स रखना ठीक नहीं होगा, इसलिये तकनीशियनों ने निम्न रोचक विधि को अपनाया: अंतर्ग्रथित रीम को प्रयुक्त किया गया। आवृति 25 हर्ट्स ही ली गई, लेकिन इलेक्ट्रॉनी किरण ने पहले विषम रेखाओं के ऊपर दौड़ना शुरू किया तथा फिर सम रेखाओं के ऊपर। अर्धफ्रेम के बदलने की आवृति 50 हर्ट्स हो जाती है तथा चित्र के आवलोकन भी नज़र नहीं आते।

फ्रेम तथा रीम की आवृतियां एकदम तुल्यकालक होनी चाहिए। यहां तकनीकी विस्तार में जाने के लिये स्थान नहीं हैं, इसीलिये हम नहीं बतलाएंगे कि इस तुल्यकालक के लिये क्या आवश्यक है ताकि रेखाओं की संख्या विषम रहे और वह अनेक पूर्ण घटकों से बना हो। हमारे देश में फ्रेम को 625 रेखाओं से विभाजित किया जाता है यानी 5^4 , चूंकि एक सेकंड में 25 फ्रेम बदलते हैं, रेखाओं की आवृति

15 625 हर्ट्स बन जाती है। दूरदर्शन संकेत की आवृति के स्पैक्ट्रम की चौड़ाई इस बात पर आधारित होती है।

निम्न आवृति 50 हर्ट्स – अर्धफ्रेम की आवृति है। उच्च आवृति एक तत्त्व के प्रसारण के समय द्वारा निश्चित होती है।

काफ़ी सरल परिकलन से, जिसे हम यहां हल नहीं करेंगे, सिद्ध होता है कि उच्च आवृति को 6.5 मैगाहर्ट्स के बराबर लेना पड़ता है। यहां से निष्कर्ष निकलता है कि प्रेषित्र की वाहक आवृति 40—50 मैगाहर्ट्स से कम नहीं हो सकती, चूंकि वाहक तरंग की आवृति प्रेषित किये जाने वाली आवृति की धारी की चौड़ाई से कम से कम 6—7 गुना अधिक होनी चाहिए। अब आपको स्पष्ट हो गया होगा कि दूरदर्शन प्रसारण के लिये अतिलघु तरंगें क्यों प्रयुक्त की जाती हैं तथा, अतएव, दूरदर्शन प्रसारण की दूरी सीधा दृश्यता से सीमाबद्ध है।

मैं कुछ अधिक कह गया – सीमाबद्ध थी। दूरदर्शन प्रसारण को किसी भी दूरी पर करने के लिये क्रांतिकारी रोल अदा किया उपग्रहीय संचार ने।

हमारा देश पहला देश था जिसने इस कार्य के लिये कृत्रिम उपग्रह प्रयुक्त किये। आजकल हमारे सम्पूर्ण देश को संचार द्वारा अनेक उपग्रह जोड़े हुए हैं।

शक्तिशाली दूरदर्शन केन्द्रों की बनावट का ज़िक्र न करते हुए, हम आपको कुछ रोचक आँकड़े बतलाएंगे, जो आधुनिक रेडियो तकनीकी के संकेत प्रवर्धन की विशाल सम्भावनाओं के लिये लाक्षणिक हैं। सामान्य विडियो संकेत प्रवर्धन से पूर्व 10^{-3} वा० शक्ति रखता है, प्रवर्धक उसे दस लाख गुना अधिक शक्तिशाली बना देता है। 10^{3} वा० की शक्ति 30 मी० लगभग व्यास वाले परवलयिक ऐन्टेना पर आती है। यह ऐन्टेना एक संकीर्ण किरण फेंकता है जो उपग्रह द्वारा परावर्तित होगी। वैद्युत चुम्बकीय तरंग को उपग्रह तक लगभग 35000 कि० मी० तय करने के बाद उसकी शक्ति 10^{-11} वा० रह जाएगी।

उपग्रह पर स्थित प्रवर्धक इस विशेष रूप से क्षीण संकेत की शक्ति का लगभग 10 वा० तक प्रवर्धन करता है। उपग्रह द्वारा परावर्तित संकेत पृथ्वी तक 10^{-17} वा० की शक्ति से वापिस आएगा।

विडियो संकेत की शक्ति पुनः आरम्भिक शक्ति के बराबर प्रवर्धन के द्वारा हो जाएगी यानी 10^{-3} वा०।

मेरा विचार है कि दस वर्ष पूर्व सब से आशावादी इंजिनियर भी इन आंकड़ों पर विश्वास न करता।

माइक्रोइलेक्ट्रॉनी आरेख

रेडियो तकनीकी को अर्पित अध्याय समाप्त करना असम्भव है यदि हमारे समक्ष हो रही नई क्रांति के बारे में दो शब्द न कहे जाएं।

यहां ज़िक्र चल रहा है सभी रेडियो तकनीकी उपकरणों के अनोखे लघुरूपण का जो सम्भव हो सका केवल इस कारणवश कि तारों द्वारा जुड़े हुए पृथक तत्त्वों – प्रतिरोधक, ट्रांज़िस्टर, इत्यादि – से बने उपकरणों का वैद्युत आरेखों द्वारा प्रतिस्थापन हो गया, जो विशेष तकनीकी की मदद से कुछ मि० मी० के आकार वाले सिलिकॅन के टुकड़े पर "अंकित" किये जाते हैं।

नई तकनीकी (इस का एक विकल्प) यह है कि विभिन्न आवरणों तथा रासायनिक पदार्थों को प्रयुक्त करके सिलिकन या जर्मेनियम के क्रिस्टलों में आवश्यक स्थानों पर p-या n-अशुद्धियों को प्रवेश किया जा सकता हैं। इसके लिये आयनी पुंजों की मदद ली जाती है।

दस हज़ार तत्त्वों से बना वैद्युत आरेख रैखिक आकार वाले दो मि० मी० क्षेत्रफल में समा सकता है। जब हमने कहा कि आरेख को "अंकित" किया जाता है तो शायद पाठक ने सोचा होगा कि अर्धचालक के टुकड़े की सतह पर कार्य करने की बात हो रही है। लेकिन ऐसा नहीं हैं। यहां बात कुछ कठिन है। प्रत्येक रेडियो तकनीकी तत्त्व त्रिविम होता है। सिलिकन के दाने के समान भाग पर विभिन्न अशुद्धियों वाली कई सतहें बनानी होती है।

इस के लिये क्या करना होगा? सबसे पहले सिलिकन की सतह पर आक्साइड की परत चढ़ाई जाती है। उसके ऊपर प्रकाश संवेदनशील पदार्थ की परत चढ़ाई जाती है। इस सैंडविच को निश्चित आकार वाले आवरण में से पराबैंगनी प्रकाश द्वारा अनावरित किया जाता है। डेवेलेपिंग के पश्चात सिलिकन के टुकड़े की सतह पर केवल उसी स्थान पर गडढे बन जाते हैं जहां प्रकाश आवरण में से गुज़र गया था।

अगला कदम है भावी रेडियो आरेख पर हाइड्रोफ्लुओरिक अम्ल के साथ कार्य करने का। वह सिलिकन आक्साइड पृथक करता है और वह न तो प्रारम्भिक (सिलिकन) सतह पर तथा न ही प्रकाश संवेदन-शील सतह पर प्रभाव डालता है। अब आता है अंतिम कदम: अन्य घोलों द्वारा प्रकाश संवेदनशील सतह का पृथक करना। इस सबके फलस्वरूप प्राप्त होता है पृथक्कारक से ढका हुआ हमारा टुकड़ा—सिलिकन आक्साइड—लेकिन केवल उसी स्थान पर जहां आवश्यक है। आवश्यक आकार का गड्ढा – अनावरित सिलिकन। इसी के ऊपर तो आयन पुंज द्वारा कार्य करते हैं ताकि उसमें आवश्यक मात्रा में अशुद्धियां डाल सकें।

माइक्रोइलेक्ट्रॉनी आरेखों को तैयार करना—तकनीकी के सर्वाधिक अग्रसर क्षेत्रों में से एक है।

भौतिकी के क्षेत्र में प्राप्त नये विचार तथा नये अविष्कार सिद्ध करते हैं कि आज तक प्राप्त अनोखे परिणाम सीमा नहीं बनाते।

पाठकों से

"मीर" प्रकाशन इस पुस्तक के अनुवाद और डिज़ाइन सम्बन्धी आपके विचारों के लिए आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। कृपया हमें इस पते पर लिखिये :

"मीर" प्रकाशन
पेर्वी रीज़्स्की पेरेऊलोक, २
मास्को, सोवियत संघ।

आगामी वर्षों में!

"मीर" प्रकाशन-गृह की नयी पुस्तक

नि० ग्लीनका "सामान्य रसायन"

विश्व-विद्यालय छात्रों के लिये लिखी गयी है, पर वह उच्च व माध्यमिक तकनीकी संस्थाओं और माध्यमिक विद्यालयों की अन्तिम कक्षाओं के छात्रों के लिये भी सुलभ है। स्वाध्याय द्वारा रसायन-शास्त्र का ज्ञान अर्जन करने के इच्छुक लोगों के लिये भी पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी।

अन्य प्रकाशनाधीन पुस्तकें:

वा० वोल्केंशतेइन "सामान्य भौतिकी – प्रश्नमाला"
या० पेरेलमान "सरस गणित"

सरल भौतिकी

"मीर" प्रकाशन - गृह
मास्को
सोवियत संघ